रैदास साहित्य
एक मूल्यांकन

(Raidas Literature: An Evaluation)

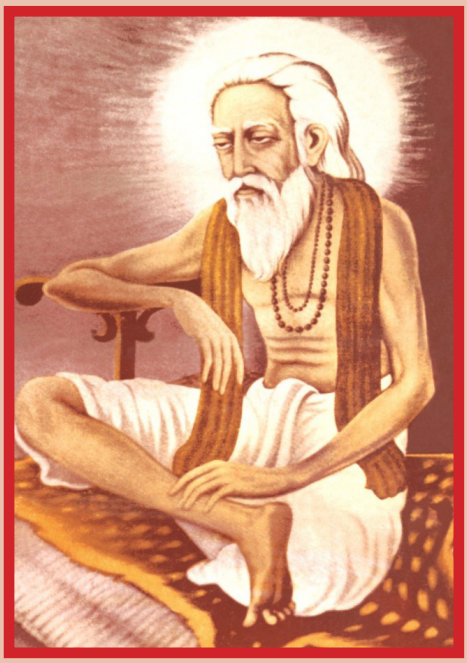

सीताराम यादव

रैदास साहित्य : एक मूल्यांकन

रैदास साहित्य : एक मूल्यांकन
(Raidas Literature: An Evaluation)

सीताराम यादव

भाषा प्रकाशन
नई दिल्ली - 110002

© प्रकाशक

I.S.B.N. : 978-81-323-5467-3

प्रथम संस्करण : 2021

भाषा प्रकाशन

22, प्रकाशदीप बिल्डिंग, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली - 110002

द्वारा वर्ल्ड टेक्नोलॉजीज नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित

प्रस्तावना

प्राचीनकाल से ही भारत में विभिन्न धर्मों तथा मतों के अनुयायी निवास करते रहे हैं। इन सबमें मेल-जोल और भाईचारा बढ़ाने के लिए सन्तों ने समय-समय पर महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। ऐसे सन्तों में रैदास का नाम अग्रण्य है। वे सन्त कबीर के गुरुभाई थे, क्योंकि उनके भी गुरु स्वामी रामानन्द थे। लगभग छः सौ वर्ष पहले भारतीय समाज अनेक बुराइयों से ग्रस्त था। उसी समय रैदास जैसे समाज-सुधारक सन्तों का प्रादुर्भाव हुआ। रैदास का जन्म काशी में चर्मकार कुल में हुआ था। उनके पिता का नाम रग्घु और माता का नाम घुरविनिया बताया जाता है। रैदास ने साधु-सन्तों की संगति से पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किया था। जूते बनाने का काम उनका पैतृक व्यवसाय था और उन्होंने इसे सहर्ष अपनाया। वे अपना काम पूरी लगन तथा परिश्रम से करते थे और समय से काम को पूरा करने पर बहुत ध्यान देते थे।

प्रारम्भ में ही रैदास बहुत परोपकारी तथा दयालु थे और दूसरों की सहायता करना उनका स्वभाव बन गया था। साधु-सन्तों की सहायता करने में उनको विशेष आनन्द मिलता था। वे उन्हें प्रायः मूल्य लिये बिना जूते भेंट कर दिया करते थे। उनके स्वभाव के कारण उनके माता-पिता उनसे अप्रसन्न रहते थे। कुछ समय बाद उन्होंने रैदास तथा उनकी पत्नी को अपने घर से अलग कर दिया। रैदास पड़ोस में ही अपने लिए एक अलग झोपड़ी बनकार तत्परता से अपने

व्यवसाय का काम करते थे और शेष समय ईश्वर-भजन तथा साधु-सन्तों के सत्संग में व्यतीत करते थे।

उनके जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं से समय तथा वचन के पालन संबंधी उनके गुणों का पता चलता है। एक बार एक पर्व के अवसर पर पड़ोस के लोग गंगा-स्नान के लिए जा रहे थे। रैदास के शिष्यों में से एक ने उनसे भी चलने का आग्रह किया तो वे बोले, 'गंगा-स्नान के लिए मैं अवश्य चलता, किन्तु एक व्यक्ति को जूते बनाकर आज ही देने का मैंने वचन दे रखा है। यदि आज मैं जूते नहीं दे सका तो वचन भंग होगा। गंगा स्नान के लिए जाने पर मन यहाँ लगा रहेगा तो पुण्य कैसे प्राप्त होगा? मन जो काम करने के लिए अन्त:करण से तैयार हो वही काम करना उचित है। मन सही है तो इसे कठौते के जल में ही गंगास्नान का पुण्य प्राप्त हो सकता है। कहा जाता है कि इस प्रकार के व्यवहार के बाद से ही कहावत प्रचलित हो गयी कि- मन चंगा तो कठौती में गंगा।

रैदास ने ऊँच-नीच की भावना तथा ईश्वर-भक्ति के नाम पर किये जाने वाले विवाद को सारहीन तथा निरर्थक बताया और सबको परस्पर मिलजुल कर प्रेमपूर्वक रहने का उपदेश दिया।

पुस्तक लेखन में कई लिखित व अलिखित स्रोतों से मदद ली गई है; मैं उन सभी विज्ञ लेखकों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ। आशा करता हूँ कि पुस्तक पाठकों के लिए उपयोगी होगी।

–लेखक

अनुक्रम

प्रस्तावना *v*

1. संत रैदास **1**

2. रैदास जीवन परिचय **46**

जीवन परिचय 46

जन्म 47

रविदास की प्रारंभिक शिक्षा 48

वैवाहिक जीवन 49

बाद का जीवन 49

बेगमपुरा शहर से उनके संबंध 49

मीरा बाई से उनका जुड़ाव 50

संत रविदास के जीवन की कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ 51

सामाजिक मुद्दों में गुरु रविदास की सहभागिता 51

सिक्ख धर्म के लिये गुरु जी का योगदान 52

संत रविदास का सकारात्मक नजरिया 54

कुंभ उत्सव पर एक कार्यक्रम 55

उनके पिता के मौत के समय की घटना 56

गुरु रविदास घाट 58

संत रविदास नगर 58

सत्संग 60
सत्य 60
समाज पर प्रभाव 61
रचनाएँ 62
संत रविदास का इतिहास 63
सामाजिक क्रांति के अग्रदूत संत रैदास 68
3. रैदास के दोहे 80
4. संत रविदास जी की तुलसीदास से तुलना 82
5. पद संत रविदास जी 98
6. संत-गुरु रविदास जी पर हिन्दी कविताएँ 140
सन्त कवि रविदास जी के प्रति 140
7. भक्ति काल 146
प्रमुख कवि 152
कृष्णाश्रयी शाखा 159
कृष्ण-काव्य-धारा की विशेषताएँ 159
रामाश्रयी शाखा 161
ज्ञानाश्रयी मार्गी 163
प्रेमाश्रयी शाखा 164
8. शब्द संत रविदास 166
9. रैदास की रचनाएँ 182

1

संत रैदास

प्राचीनकाल से ही भारत में विभिन्न धर्मों तथा मतों के अनुयायी निवास करते रहे हैं। इन सबमें मेल-जोल और भाईचारा बढ़ाने के लिए सन्तों ने समय-समय पर महत्वपूर्ण योगदान दिया है। ऐसे सन्तों में रैदास का नाम अग्रण्य है। वे सन्त कबीर के गुरुभाई थे क्योंकि उनके भी गुरु स्वामी रामानन्द थे। लगभग छः सौ वर्ष पहले भारतीय समाज अनेक बुराइयों से ग्रस्त था। उसी समय रैदास जैसे समाज-सुधारक सन्तों का प्रादुर्भाव हुआ। रैदास का जन्म काशी में चर्मकार कुल में हुआ था। उनके पिता का नाम रग्घु और माता का नाम घुरविनिया बताया जाता है। रैदास ने साधु-सन्तों की संगति से पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किया था। जूते बनाने का काम उनका पैतृक व्यवसाय था और उन्होंने इसे सहर्ष अपनाया। वे अपना काम पूरी लगन तथा परिश्रम से करते थे और समय से काम को पूरा करने पर बहुत ध्यान देते थे।

उनकी समयानुपालन की प्रवृत्ति तथा मधुर व्यवहार के कारण उनके सम्पर्क में आने वाले लोग भी बहुत प्रसन्न रहते थे।

रैदास के समय में स्वामी रामानन्द काशी के बहुत प्रसिद्ध प्रतिष्ठित सन्त थे। रैदास उनकी शिष्य-मण्डली के महत्वपूर्ण सदस्य थे।

प्रारम्भ में ही रैदास बहुत परोपकारी तथा दयालु थे और दूसरों की सहायता करना उनका स्वभाव बन गया था। साधु-सन्तों की सहायता करने में उनको विशेष आनन्द मिलता था। वे उन्हें प्रायः मूल्य लिये बिना जूते भेंट कर दिया

करते थे। उनके स्वभाव के कारण उनके माता-पिता उनसे अप्रसन्न रहते थे। कुछ समय बाद उन्होंने रैदास तथा उनकी पत्नी को अपने घर से अलग कर दिया। रैदास पड़ोस में ही अपने लिए एक अलग झोपड़ी बनकार तत्परता से अपने व्यवसाय का काम करते थे और शेष समय ईश्वर-भजन तथा साधु-सन्तों के सत्संग में व्यतीत करते थे।

उनके जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं से समय तथा वचन के पालन सम्बन्धी उनके गुणों का पता चलता है। एक बार एक पर्व के अवसर पर पड़ोस के लोग गंगा-स्नान के लिए जा रहे थे। रैदास के शिष्यों में से एक ने उनसे भी चलने का आग्रह किया तो वे बोले, 'गंगा-स्नान के लिए मैं अवश्य चलता किन्तु एक व्यक्ति को जूते बनाकर आज ही देने का मैंने वचन दे रखा है। यदि आज मैं जूते नहीं दे सका तो वचन भंग होगा। गंगा स्नान के लिए जाने पर मन यहाँ लगा रहेगा तो पुण्य कैसे प्राप्त होगा? मन जो काम करने के लिए अन्त:करण से तैयार हो वही काम करना उचित है। मन सही है तो इसे कठौते के जल में ही गंगास्नान का पुण्य प्राप्त हो सकता है। ' कहा जाता है कि इस प्रकार के व्यवहार के बाद से ही कहावत प्रचलित हो गयी कि - मन चंगा तो कठौती में गंगा।

रैदास ने ऊँच-नीच की भावना तथा ईश्वर-भक्ति के नाम पर किये जाने वाले विवाद को सारहीन तथा निरर्थक बताया और सबको परसम्पर मिलजुल कर प्रेमपूर्वक रहने का उपदेश दिया।

वे स्वयं मधुर तथा भक्तिपूर्ण भजनों की रचना करते थे और उन्हें भाव-विभोर होकर सुनाते थे। उनका विश्वास था कि राम, कृष्ण, करीम, राघव आदि सब एक ही परमेश्वर के विविध नाम हैं। वेद, कुरान, पुराण आदि ग्रन्थों में एक ही परमेश्वर का गुणगान किया गया है।

"कृस्न, करीम, राम, हरि, राघव, जब लग एक न पेखा।
वेद कतेब कुरान, पुरानन, सहज एक नहिं देखा।। "

उनका विश्वास था कि ईश्वर की भक्ति के लिए सदाचार, परहित-भावना तथा सदव्यवहार का पालन करना अत्यावश्यक है। अभिमान त्याग कर दूसरों के साथ व्यवहार करने और विनम्रता तथा शिष्टता के गुणों का विकास करने पर उन्होंने बहुत बल दिया। अपने एक भजन में उन्होंने कहा है–

"कह रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमान मेटि आपा पर, पिपिलक हवै चुनि खावै।"

उनके विचारों का आशय यही है कि ईश्वर की भक्ति बड़े भाग्य से प्राप्त होती है। अभिमान शून्य रहकर काम करने वाला व्यक्ति जीवन में सफल रहता है जैसे कि विशालकाय हाथी शक्कर के कणों को चुनने में असमर्थ रहता है जबकि लघु शरीर की पिपीलिका (चींटी) इन कणों को सरलतापूर्वक चुन लेती है। इसी प्रकार अभिमान तथा बड़प्पन का भाव त्याग कर विनम्रतापूर्वक आचरण करने वाला मनुष्य ही ईश्वर का भक्त हो सकता है।

रैदास की वाणी भक्ति की सच्ची भावना, समाज के व्यापक हित की कामना तथा मानव प्रेम से ओत-प्रोत होती थी। इसलिए उसका श्रोताओं के मन पर गहरा प्रभाव पड़ता था। उनके भजनों तथा उपदेशों से लोगों को ऐसी शिक्षा मिलती थी जिससे उनकी शंकाओं का सन्तोषजनक समाधान हो जाता था और लोग स्वत: उनके अनुयायी बन जाते थे।

उनकी वाणी का इतना व्यापक प्रभाव पड़ा कि समाज के सभी वर्गों के लोग उनके प्रति श्रद्धालु बन गये। कहा जाता है कि मीराबाई उनकी भक्ति-भावना से बहुत प्रभावित हुई और उनकी शिष्या बन गयी थीं।

'वर्णाश्र अभिमान तजि, पद रज बंदहिजासु की।
सन्देह-ग्रन्थि खण्डन-निपन, बानि विमुल रैदास की॥"

आज भी सन्त रैदास के उपदेश समाज के कल्याण तथा उत्थान के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने अपने आचरण तथा व्यवहार से यह प्रमाणित कर दिया है कि मनुष्य अपने जन्म तथा व्यवसाय के आधार पर महान नहीं होता है। विचारों की श्रेष्ठता, समाज के हित की भावना से प्रेरित कार्य तथा सदव्यवहार जैसे गुण ही मनुष्य को महान बनाने में सहायक होते हैं। इन्हीं गुणों के कारण सन्त रैदास को अपने समय के समाज में अत्याधिक सम्मान मिला और इसी कारण आज भी लोग इन्हें श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हैं।

संत कुलभूषण कवि रैदास उन महान् सन्तों में अग्रणी थे जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करने में महत्वपूर्ण योगदान किया। इनकी रचनाओं की विशेषता लोक-वाणी का अद्‌भुत प्रयोग रही है, जिससे जनमानस पर इनका अमिट प्रभाव पड़ता है।

मधुर एवं सहज संत रैदास की वाणी ज्ञानाश्रयी होते हुए भी ज्ञानाश्रयी एवं प्रेमाश्रयी शाखाओं के मध्य सेतु की तरह है।

मालवीय सूचना प्रौद्योगिकी केन्द्र द्वारा प्रस्तुत संत रैदास की रचनाओं का यह संकलन 'गागर में सागर' समाहित करने का एक लघु प्रयास है जिसके अन्तर्गत संत रैदास के 101 पदों को सम्मिलित किया गया है।

पदावली

1.

।। राग रामकली।।
परचौ रांम रमै जै कोइ।
पारस परसें दुबिध न होइ।। टेक।।
जो दीसै सो सकल बिनास, अण दीठै नांही बिसवास।
बरन रहित कहै जे रांम, सो भगता केवल निहकांम।। 1।।
फल कारनि फलै बनराइं, उपजै फल तब पुहप बिलाइ।
ग्यांनहि कारनि क्रम कराई, उपज्यौ ग्यानं तब क्रम नसाइ।। 2।।
बटक बीज जैसा आकार, पसर्यौ तीनि लोक बिस्तार।
जहाँ का उपज्या तहाँ समाइ, सहज सुन्य में रह्यौ लुकाइ।। 3।।
जो मन ब्यदै सोई ब्यंद, अमावस मैं ज्यू दीसै चंद।
जल मैं जैसैं तूबां तिरै, परचे प्यंड जीवै नहीं मरै।। 4।।
जो मन कौंण ज मन कूँ खाइ, बिन द्वारै त्रीलोक समाइ।
मन की महिमां सब कोइ कहै, पंडित सो जे अनभै रहे।। 5।।
कहै रैदास यहु परम बैराग, रांम नांम किन जपऊ सभाग।
ध्रित कारनि दधि मथै सयांन, जीवन मुकति सदा निब्रांन।। 6।।

2.

।। राग रामकली।।

अब मैं हार्यौ रे भाई।
थकित भयौ सब हाल चाल थैं, लोग न बेद बड़ाई।। टेक।।
थकित भयौ गाइण अरु नाचण, थाकी सेवा पूजा।
काम क्रोध थैं देह थकित भई, कहूँ कहाँ लूँ दूजा।। 1।।
रांम जन होउ न भगत कहाँऊँ, चरन पखालूँ न देवा।
जोई-जोई करौ उलटि मोहि बाधै, ताथैं निकटि न भेवा।। 2।।
पहली ग्यांन का कीया चांदिणां, पीछैं दीया बुझाई।
सुनि सहज मैं दोऊ त्यागे, राम कहूँ न खुदाई।। 3।।
दूरि बसै षट क्रम सकल अरु, दूरिब कीन्हे सेऊ।
ग्यान ध्यानं दोऊ दूरि कीन्हे, दूरिब छाड़े तेऊ।। 4।।

पंचू थकित भये जहाँ-तहाँ, जहाँ-तहाँ थिति पाई।
जा करनि मैं दौयौं फिरतौ, सो अब घट मैं पाई।। 5।।
पंचू मेरी सखी सहेली, तिनि निधि दई दिखाई।
अब मन फूलि भयौ जग महियां, उलटि आप मैं समाई।। 6।।
चलत चलत मेरौ निज मन थाक्यौ, अब मोपैं चल्यौ न जाई।
सांई सहजि मिल्यौ सोई सनमुख, कहै रैदास बताई।। 7।।

3.

।। राग रामकली।।

गाइ गाइ अब का कहि गांऊँ।
गांवणहारा कौ निकटि बतांऊँ।। टेक।।
जब लग है या तन की आसा, तब लग करै पुकारा।
जब मन मिट्यौ आसा नहीं की, तब को गाँवणहारा।। 1।।
जब लग नदी न संमदि समावै, तब लग बढ़ै अहंकारा।
जब मन मिल्यौ रांम सागर सूँ, तब यहु मिटी पुकारा।। 2।।
जब लग भगति मुकति की आसा, परम तत सुणि गावै।
जहाँ जहाँ आस धरत है यहु मन, तहाँ तहाँ कछू न पावै।। 3।।
छाड़ै आस निरास परंमपद, तब सुख सति करि होई।
कहै रैदास जासूँ और कहत हैं, परम तत अब सोई।। 4।।

4.

।। राग रामकली।।

राम जन हूँ उंन भगत कहाऊँ, सेवा करौं न दासा।
गुनी जोग जग्य कछू न जांनूं, ताथैं रहूँ उदासा।। टेक।।
भगत हूँ वाँ तौ चढ़ै बड़ाई। जोग करौं जग मानैं।
गुणी हूँ वांथैं गुणीं जन कहैं, गुणी आप कूँ जानैं।। 1।।
ना मैं ममिता मोह न महियाँ, ए सब जांहि बिलाई।
दोजग भिस्त दोऊ समि करि जांनूँ, दहु वां थैं तरक है भाई।। 2।।
मै तैं ममिता देखि सकल जग, मैं तैं मूल गँवाई।

जब मन ममिता एक एक मन, तब हीं एक है भाई।। 3।।
कृश्न करीम रांम हरि राधौ, जब लग एक एक नहीं पेख्या।
बेद कतेब कुरांन पुरांननि, सहजि एक नहीं देख्या।। 4।।
जोई जोई करि पूजिये, सोई सोई काची, सहजि भाव सति होई।
कहै रैदास मैं ताही कूँ पूजौं, जाकै गाँव न ठाँव न नांम नहीं कोई।। 5।।

5.

।। राग रामकली।।

अब मोरी बूड़ी रे भाई।
ता थैं चढ़ी लोग बड़ाई।। टेक।।
अति अहंकार ऊर मां, सत रज तामैं रह्यौ उरझाई।
करम बलि बसि पर्यौ कछू न सूझै, स्वांमी नांऊं भुलाई।। 1।।
हम मांनूं गुनी जोग सुनि जुगता, हम महा पुरिष रे भाई।
हम मांनूं सूर सकल बिधि त्यागी, ममिता नहीं मिटाई।। 2।।
मांनूं अखिल सुनि मन सोध्यौ, सब चेतनि सुधि पाई।
ग्यांन ध्यांन सब हीं हंम जांन्यूं, बूझै कौंन सूं जाई।। 3।।
हम मांनूं प्रेम प्रेम रस जांन्यूं, नौ बिधि भगति कराई।
स्वांग देखि सब ही जग लटक्यौ, फिरि आपन पौर बधाई।। 4।।
स्वांग पहरि हम साच न जांन्यूं, लोकनि इहै भरमाई।
स्यंघ रूप देखी पहराई, बोली तब सुधि पाई।। 5।।
ऐसी भगति हमारी संतौ, प्रभुता इहै बड़ाई।
आपन अनिन और नहीं मांनत, ताथैं मूल गँवाई।। 6।।
भणैं रैदास उदास ताही थैं, इब कछू मोपैं करी न जाई।
आपौ खोयां भगति होत है, तब रहै अंतरि उरझाई।। 7।।

6.

।। राग रामकली।।
तेरा जन काहे कौं बोलै।
बोलि बोलि अपनीं भगति क्यों खोलै।। टेक।।
बोल बोलतां बढ़ै बियाधि, बोल अबोलैं जाई।

बोलै बोल अबोल कौं पकरैं, बोल बोलै कूँ खाई।। 1।।
बोलै बोल मांनि परि बोलैं, बोलै बेद बड़ाई।
उर में धरि धरि जब ही बोलै, तब हीं मूल गँवाई।। 2।।
बोलि बोलि औरहि समझावै, तब लग समझि नहीं रे भाई।
बोलि बोलि समझि जब बूझी, तब काल सहित सब खाई।। 3।।
बोलै गुर अरु बोलै चेला, बोल्या बोल की परमिति जाई।
कहै रैदास थकित भयौ जब, तब हीं परंमनिधि पाई।। 4।।

7.

।। राग रामकली।।
भाई रे भ्रम भगति सुजांनि।
जौ लूँ नहीं साच सूँ पहिचानि।। टेक।।
भ्रम नाचण भ्रम गाइण, भ्रम जप तप दांन।
भ्रम सेवा भ्रम पूजा, भ्रम सूँ पहिचांनि।। 1।।
भ्रम षट क्रम सकल सहिता, भ्रम गृह बन जांनि।
भ्रम करि करम कीये, भरम की यहु बांनि।। 2।।
भ्रम इंद्री निग्रह कीयां, भ्रंम गुफा में बास।
भ्रम तौ लौं जांणियै, सुनि की करै आस।। 3।।
भ्रम सुध सरीर जौ लौं, भ्रम नांउ बिनांउं।
भ्रम भणि रैदास तौ लौं, जो लौं चाहे ठांउं।। 4।।

8.

।। राग रामकली।।
त्यूँ तुम्ह कारनि केसवे, अंतरि ल्यौ लागी।
एक अनूपम अनभई, किम होइ बिभागी।। टेक।।
इक अभिमानी चातृगा, विचरत जग मांहीं।
जदपि जल पूरण मही, कहूं वाँ रुचि नांहीं।। 1।।
जैसे कांमीं देखे कांमिनीं, हिरदै सूल उपाई।
कोटि बैद बिधि उचरैं, वाकी बिथा न जाई।। 2।।
जो जिहि चाहे सो मिलै, आरत्य गत होई।
कहै रैदास यहु गोपि नहीं, जानैं सब कोई।। 3।।

9.

।। राग रामकली।।
आयौ हो आयौ देव तुम्ह सरनां।
जांनि क्रिया कीजै अपनों जनां।। टेक।।
त्रिबिधि जोनी बास, जम की अगम त्रस, तुम्हारे भजन बिन, भ्रमत फिर्यौं।
ममिता अहं विषै मदि मातौ, इहि सुखि कबहूँ न दूभर तिर्यौं।। 1।।
तुम्हारे नांइ बेसास, छाड़ी है आंन की आस, संसारी धरम मेरौ मन न धीजै।
रैदास दास की सेवा मांनि हो देवाधिदेवा, पतितपांवन, नांउ प्रकट कीजै।। 2।।

10.

।। राग रामकली।।
भाई रे राम कहाँ हैं मोहि बतावो।
सति राम ताकै निकटि न आवो।। टेक।।
राम कहत जगत भुलाना, सो यहु रांम न होई।
करंम अकरंम करुणांमै केसौ, करता नांउं सु कोई।। 1।।
जा रामहि सब जग जानैं, भ्रमि भूले रे भाई।
आप आप थैं कोई न जांणै, कहै कौंन सू जाई।। 2।।
सति तन लोभ परसि जीय तन मन, गुण परस नहीं जाई।
अखिल नांउं जाकौ ठौर न कतहूँ, क्यूं न कहै समझाई।। 3।।
भयौ रैदास उदास ताही थैं, करता को है भाई।
केवल करता एक सही करि, सति रांम तिहि ठांई।। 4।।

11.

।। राग रामकली।।
ऐसौ कछु अनभै कहत न आवै।
साहिब मेरौ मिलै तौ को बिगरावै।। टेक।।
सब मैं हरि हैं हरि मैं सब हैं, हरि आपनपौ जिनि जांनां।
अपनी आप साखि नहीं दूसर, जांननहार समानां।। 1।।
बाजीगर सूँ रहनि रही जै, बाजी का भरम इब जानां।
बाजी झूठ साच बाजीगर, जानां मन पतियानां।। 2।।
मन थिर होइ तौ कांइ न सूझै, जानैं जांनन हारा।
कहै रैदास बिमल बसेक सुख, सहज सरूप संभारा।। 3।।

12.

।। राग रामकली।।
अखि लखि लै नहीं का कहि पंडित, कोई न कहै समझाई।
अबरन बरन रूप नहीं जाके, सु कहाँ ल्यौ लाइ समाई।। टेक।।
चंद सूर नहीं राति दिवस नहीं, धरनि अकास न भाई।
करम अकरम नहीं सुभ असुभ नहीं, का कहि देहु बड़ाई।। 1।।
सीत बाइ उश्न नहीं सरवत, कांम कुटिल नहीं होई।
जोग न भोग रोग नहीं जाकै, कहौ नांव सति सोई।। 2।।
निरंजन निराकार निरलेपहि, निरबिकार निरासी।
काम कुटिल ताही कहि गावत, हर हर आवै हासी।। 3।।
गगन धूर धूसर नहीं जाकै, पवन पूर नहीं पांनी।
गुन बिगुन कहियत नहीं जाकै, कहौ तुम्ह बात सयांनीं।। 4।।
याही सूँ तुम्ह जोग कहते हौ, जब लग आस की पासी।
छूटै तब हीं जब मिलै एक ही, भणै रैदास उदासी।। 5।।

13.

।। राग रामकली।।
नरहरि चंचल मति मोरी।
कैसैं भगति करौ रांम तोरी।। टेक।।
तू कोहि देखै हूँ तोहि देखैं, प्रीती परस्पर होई।
तू मोहि देखै हौं तोहि न देखौं, इहि मति सब बुधि खोई।। 1।।
सब घट अंतरि रमसि निरंतरि, मैं देखत ही नहीं जांनां।
गुन सब तोर मोर सब औगुन, क्रित उपगार न मांनां।। 2।।
मैं तैं तोरि मोरी असमझ सों, कैसे करि निसतारा।
कहै रैदास कृश्न करुणांमैं, जै जै जगत अधारा।। 3।।

14.

।। राग रामकली।।
राम बिन संसै गाँठि न छूटै।
कांम क्रोध मोह मद माया, इन पंचन मिलि लूटै।। टेक।।
हम बड़ कवि कुलीन हम पंडित, हम जोगी संन्यासी।

ग्यांनी गुनीं सूर हम दाता, यहु मति कदे न नासी।। 1।।
पढ़ें गुनें कछू संमझि न परई, जौ लौ अनभै भाव न दरसै।
लोहा हरन होइ धूँ कैसें, जो पारस नहीं परसै।। 2।।
कहै रैदास और असमझसि, भूलि परै भ्रम भोरे।
एक अधार नांम नरहरि कौ, जीवनि प्रांन धन मोरै।। 3।।

15.

।। राग रामकली।।
तब रांम रांम कहि गावैगा।
ररंकार रहित सबहिन थैं, अंतरि मेल मिलावैगा।। टेक।।
लोहा सम करि कंचन समि करि, भेद अभेद समावैगा।
जो सुख कै पारस के परसें, तो सुख का कहि गावैगा।। 1।।
गुर प्रसादि भई अनभै मति, विष अमृत समि धावैगा।
कहै रैदास मेटि आपा पर, तब वा ठौरहि पावैगा।। 2।।

16.

।। राग रामकली।।
संतौ अनिन भगति यहु नांहीं।
जब लग सत रज तम पांचूँ गुण ब्यापत हैं या मांही।। टेक।।
सोइ आंन अंतर करै हरि सूँ, अपमारग कूँ आनैं।
कांम क्रोध मद लोभ मोह की, पल पल पूजा ठानैं।। 1।।
सति सनेह इष्ट अंगि लावै, अस्थलि अस्थलि खेलै।
जो कुछ मिलै आंनि अखित ज्यूं, सुत दारा सिरि मेलै।। 2।।
हरिजन हरि बिन और न जानैं, तजै आंन तन त्यागी।
कहै रैदास सोई जन न्रिमल, निसदिन जो अनुरागी।। 3।।

17.

।। राग रामकली।।
ऐसी भगति न होइ रे भाई।
रांम नांम बिन जे कुछ करिये, सो सब भरम कहाई।। टेक।।
भगति न रस दांन, भगति न कथै ग्यांन, भगत न बन मैं गुफा खुँदाई।

भगति न ऐसी हासि, भगति न आसा पासि, भगति न यहु सब कुल कानि गँवाई।। 1।।

भगति न इंद्री बाधें, भगति न जोग साधें, भगति न अहार घटायें, ए सब क्रम कहाई।

भगति न निद्रा साधें, भगति न बैराग साधें, भगति नहीं यहु सब बेद बड़ाई।। 2।।

भगति न मूंड़ मुड़ायें, भगति न माला दिखायें, भगत न चरन धुवांयें, ए सब गुनी जन कहाई।

भगति न तौ लौं जांनीं, जौ लौं आप कूँ आप बखांनीं, जोई जोई करै सोई क्रम चढ़ाई।। 3।।

आपौ गयौ तब भगति पाई, ऐसी है भगति भाई, राम मिल्यौ आपौ गुण खोयौ, रिधि सिधि सबै जु गँवाई।

कहै रैदास छूटी ले आसा पास, तब हरि ताही के पास, आतमां स्थिर तब सब निधि पाई।। 4।।

18.

।। राग रामकली।।
भगति ऐसी सुनहु रे भाई।
आई भगति तब गई बड़ाई।। टेक।।
कहा भयौ नाचौं अरु गायैं, कहौं भयौ तप कीन्हैं।
कहा भयौ जे चरन पखालै, जो परम तत नहीं चीन्हैं।। 1।।
कहा भयौ जू मूँड मुंड़ायौ, बहु तीरथ ब्रत कीन्हैं।
स्वांमी दास भगत अरु सेवग, जो परंम तत नहीं चीन्हैं।। 2।।
कहै रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमांन मेटि आपा पर, पिपलक होइ चुणि खावै।। 3।।

19.

।। राग रामकली।।
अब कुछ मरम बिचारा हो हरि।
आदि अंति औसांण राम बिन, कोई न करै निरवारा हो हरि।। टेक।।
जल मैं पंक पंक अमृत जल, जलहि सुधा कै जैसैं।

ऐसैं करमि धरमि जीव बाँध्यौ, छूटै तुम्ह बिन कैसैं हो हरि।। 1।।
जप तप बिधि निषेद करुणांमैं, पाप पुनि दोऊ माया।
अस मो हित मन गति विमुख धन, जनमि जनमि डहकाया हो हरि।। 2।।
ताड़ण, छेदण, त्रयण, खेदण, बहु बिधि करि ले उपाई।
लूंण खड़ी संजोग बिनां, जैसैं कनक कलंक न जाई।। 3।।
भणैं रैदास कठिन कलि केवल, कहा उपाइ अब कीजै।
भौ बूड़त भैभीत भगत जन, कर अवलंबन दीजै।। 4।।

20.

।। राग रामकली।।
नरहरि प्रगटसि नां हो प्रगटसि नां।
दीनानाथ दयाल नरहरि।। टेक।।
जन मैं तोही थैं बिगरां न अहो, कछू बूझत हूँ रसयांन।
परिवार बिमुख मोहि लाग, कछू समझि परत नहीं जाग।। 1।।
इक भंमदेस कलिकाल, अहो मैं आइ पर्यौ जंम जाल।
कबहूँक तोर भरोस, जो मैं न कहूँ तो मोर दोस।। 2।।
अस कहियत तेऊ न जांन, अहो प्रभू तुम्ह श्रबंगि सयांन।
सुत सेवक सदा असोच, ठाकुर पितहि सब सोच।। 3।।
रैदास बिनवैं कर जोरि, अहो स्वांमीं तोहि नांहि न खोरि।
सु तौ अपूरबला अक्रम मोर, बलि बलि जांऊं करौ जिनि और।। 4।।

21.

।। राग रामकली।।
त्यू तुम्ह कारन केसवे, लालचि जीव लागा।
निकटि नाथ प्रापति नहीं, मन मंद अभागा।। टेक।।
साइर सलिल सरोदिका, जल थल अधिकाई।
स्वांति बूँद की आस है, पीव प्यास न जाई।। 1।।
जो रस नेही चाहिए, चितवत हूँ दूरी।
पंगल फल न पहूँचई, कछू साध न पूरी।। 2।।
कहै रैदास अकथ कथा, उपनषद सुनी जै।
जस तूँ तस तूँ तस तूँ हीं, कस ओपम दीजै।। 3।।

22.

।। राग रामकली।।
गौब्यंदे भौ जल ब्याधि अपारा।
तामैं कछू सूझत वार न पारा।। टेक।।
अगम ग्रेह दूर दूरंतर, बोलि भरोस न देहू।
तेरी भगति परोहन, संत अरोहन, मोहि चढ़ाइ न लेहू।। 1।।
लोह की नाव पखांनि बोझा, सुकृत भाव बिहूंनां।
लोभ तरंग मोह भयौ पाला, मीन भयौ मन लीना।। 2।।
दीनानाथ सुनहु बीनती, कौंनै हेतु बिलंबे।
रैदास दास संत चरंन, मोहि अब अवलंबन दीजै।। 3।।

23.

।। राग रामकली।।
कहा सूते मुगध नर काल के मंझि मुख।
तजि अब सति राम च्यंतत अनेक सुख।। टेक।।
असहज धीरज लोप, कृश्न उधरन कोप, मदन भवंग नहीं मंत्र जंत्र।
विषम पावक झाल, ताहि वार न पार, लोभ की श्रपनी ग्यानं हंता।। 1।।
विषम संसार भौ लहरि ब्याकुल तवै, मोह गुण विषै सन बंध भूता।
टेरि गुर गारड़ी मंत्र श्रवणं दीयौ, जागि रे रांम कहि कांइ सूता।। 2।।
सकल सुमृति जिती, संत मिति कहैं तिती, पाइ नहीं पनंग मति परंम बेता।
ब्रह्म रिषि नारदा स्यंभ सनिकादिका, राम रमि रमत गये परितेता।। 3।।
जजनि जाप निजाप रटणि तीर्थ दांन, वोखदी रसिक गदमूल देता।
नाग दवणि जरजरी, रांम सुमिरन बरी, भणत रैदास चेतनि चेता।। 4।।

24.

।। राग रामकली।।
कान्हां हो जगजीवन मोरा।
तू न बिसारीं राम मैं जन तोरा।। टेक।।
संकुट सोच पोच दिन राती, करम कठिन मेरी जाति कुभाती।। 1।।
हरहु बिपति भावै करहु कुभाव, चरन न छाडूँ जाइ सु जाव।
कहै रैदास कछु देऊ अवलंबन, बेगि मिलौ जनि करहु बिलंबन।। 2।।

25.

।। राग रामगरी।।
सेई मन संमझि समरंथ सरनांगता।
जाकी आदि अंति मधि कोई न पावै।।
कोटि कारिज सरै, देह गुंन सब जरैं, नैंक जौ नाम पतिव्रत आवै।। टेक।।
आकार की वोट आकार नहीं उबरै, स्यो बिरंच अरु बिसन तांई।
जास का सेवग तास कौं पाई है, ईस कौं छांड़ि आगै न जाही।। 1।।
गुणंमई मूंरति सोई सब भेख मिलि, निग्रुण निज ठौर विश्रांम नांही।
अनेक जूग बंदिगी बिबिध प्रकार करि, अंति गुंण सेई गुंण मैं समांही।। 2।।
पाँच तत तीनि गुण जूगति करि करि सांईया, आस बिन होत नहीं करम काया।
पाप पूंनि बीज अंकूर जांमै मरै, उपजि बिनसै तिती श्रब माया।। 3।।
क्रितम करता कहैं, परम पद क्यूँ लहैं, भूलि भ्रम मैं पर्यौ लोक सारा।
कहै रैदास जे रांम रमिता भजै, कोई ऐक जन गये उतरि पारा।। 4।।

26.

।। राग रामकली।।
है सब आतम सोयं प्रकास साँचो।
निरंतरि निराहार कलपित ये पाँचौं।। टेक।।
आदि मध्य औसान, येक रस तारतंब नहीं भाई।
थावर जंगम कीट पतंगा, पूरि रहे हरिराई।। 1।।
सरवेसुर श्रबपति सब गति, करता हरता सोई।
सिव न असिव न साध अरु सेवक, उभै नहीं होई।। 2।।
ध्रम अध्रम मोच्छ नहीं बंधन, जुरा मरण भव नासा।
दृष्टि अदृष्टि गेय अरु -ज्ञाता, येकमेक रैदासा।। 3।।

27.

।। राग गौड़ी।।
कोई सुमार न देखौं, ए सब ऊपिली चोभा।
जाकौं जेता प्रकासै, ताकौं तेती ही सोभा।। टेक।।
हम ही पै सीखि सीखि, हम हीं सूँ मांडै।

थौरै ही इतराइ चालै, पातिसाही छाडै।। 1।।
अति हीं आतुर बहै, काचा हीं तोरै।
कुंडै जलि पैसै, न हींयां डरै खोरै।। 2।।
थौरैं थौरैं मुसियत, परायौ धंनां।
कहै रैदास सुनौं, संत जनां।। 3।।

28.

।। राग जंगली गौड़ी।।
पहलै पहरै रैंणि दै बणजारिया, तै जनम लीया संसार वै।।
सेवा चुका रांम की बणजारिया, तेरी बालक बुधि गँवार वे।।
बालक बुधि गँवार न चेत्या, भुला माया जालु वे।।
कहा होइ पीछैं पछतायैं, जल पहली न बँधीं पाल वे।।
बीस बरस का भया अयांनां, थंभि न सक्या भार वे।।
जन रैदास कहै बनिजारा, तैं जनम लया संसार वै।। 1।।

दूजै पहरै रैंणि दै बनजारिया, तूँ निरखत चल्या छांवं वे।।
हरि न दामोदर ध्याइया बनजारिया, तैं लेइ न सक्या नांव वे।।
नांउं न लीया औगुन कीया, इस जोबन दै तांण वे।।
अपणीं पराई गिणीं न काई, मंदे कंम कमांण वे।।
साहिब लेखा लेसी तूँ भरि देसी, भीड़ पड़ै तुझ तांव वे।।
जन रैदास कहै बनजारा, तू निरखत चल्या छांव वे।। 2।।

तीजै पहरै रैणिं दै बनजारिया, तेरे ढिलढ़े पड़े परांण वे।।
काया रवंनीं क्या करै बनजारिया, घट भीतरि बसै कुजांण वे।।
इक बसै कुजांण काया गढ़ भीतरि, अहलां जनम गवाया वे।।
अब की बेर न सुकृत कीता, बहुरि न न यहु गढ़ पाया वे।।
कंपी देह काया गढ़ खीनां, फिरि लगा पछितांणवे।।
जन रैदास कहै बनिजारा, तेरे ढिलड़े पड़े परांण वे।। 3।।

चौथे पहरै रैंणि दै बनजारिया, तेरी कंपण लगी देह वे।।
साहिब लेखा मंगिया बनजारिया, तू छडि पुरांणां थेह वे।।

छड़ि पुरांणं ज्यंद अयांणां, बालदि हाकि सबेरिया।।
जम के आये बंधि चलाये, बारी पुगी तेरिया।।
पंथि चलै अकेला होइ दुहेला, किस कूँ देइ सनेहं वे।।
जन रैदास कहै बनिजारा, तेरी कंपण लगी देह वे।। 4।।

29.

।। राग जंगली गौड़ी।।
देवा हम न पाप करंता।
अहो अंनंता पतित पांवन तेरा बिड़द क्यू होता।। टेक।।
तोही मोही मोही तोही अंतर ऐसा।
कनक कुटक जल तरंग जैसा।। 1।।
तुम हीं मैं कोई नर अंतरजांमी।
ठाकुर थैं जन जांणिये, जन थैं स्वामीं।। 2।।
तुम सबन मैं, सब तुम्ह मांहीं।
रैदास दास असझसि, कहै कहाँ ही।। 3।।

30.

।। राग जंगली गौड़ी।।
या रमां एक तूं दांनां, तेरा आदू बैश्नौं।
तू सुलितांन सुलितांनां बंदा सकिसंता रजांनां।। टेक।।
मैं बेदियांनत बदनजर दे, गोस गैर गुफतार।
बेअदब बदबखत बीरां, बेअकलि बदकार।। 1।।
मैं गुनहगार गुमराह गाफिल, कंम दिला करतार।
तूँ दयाल ददि हद दांवन, मैं हिरसिया हुसियार।। 2।।
यहु तन हस्त खस्त खराब, खातिर अंदेसा बिसियार।
रैदास दास असांन, साहिब देहु अब दीदार।। 3।।

31.

।। राग गौड़ी।।
अब हम खूब बतन घर पाया।
उहॉ खैर सदा मेरे भाया।। टेक।।

बेगमपुर सहर का नांउं, फिकर अंदेस नहीं तिहि ठॉव।। 1।।
नही तहॉ सीस खलात न मार, है फन खता न तरस जवाल।। 2।।
आंवन जांन रहम महसूर, जहॉ गनियाव बसै माबूँद।। 3।।
जोई सैल करै सोई भावै, महरम महल मैं को अटकावै।। 4।।
कहै रैदास खलास चमारा, सो उस सहरि सो मीत हमारा।। 5।।

32.

।। राग गौड़ी।।
राम गुसईआ जीअ के जीवना।
मोहि न बिसारहु मैं जनु तेरा।। टेक।।
मेरी संगति पोच सोच दिनु राती। मेरा करमु कटिलता जनमु कुभांति।। 1।।
मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई। चरण न छाडउ सरीर कल जाई।। 2।।
कहु रविदास परउ तेरी साभा। बेगि मिलहु जन करि न बिलंबा।। 3।।

33.

।। राग गौड़ी पूर्वी।।
सगल भव के नाइका।
इकु छिनु दरसु दिखाइ जी।। टेक।।
कूप भरिओ जैसे दादिरा, कछु देसु बिदेसु न बूझ।
ऐसे मेरा मन बिखिआ बिमोहिआ, कछु आरा पारु न सूझ।। 1।।
मलिन भई मति माधव, तेरी गति लखी न जाइ।
करहु क्रिपा भ्रमु चूकई, मैं सुमति देहु समझाइ।। 2।।
जोगीसर पावहि नहीं, तुअ गुण कथन अपार।
प्रेम भगति कै कारणै, कहु रविदास चमार।। 3।।

34.

।। राग गौड़ी बैरागणि।।
मो सउ कोऊ न कहै समझाइ।
जाते आवागवनु बिलाइ।। टेक।।
सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार।
तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार।। 1।।

पार कैसे पाइबो रे।।
बहु बिधि धरम निरूपीऐ करता दीसै सभ लोइ।
कवन करम ते छूटी ऐ जिह साधे सभ सिधि होई।। 2।।
करम अकरम बीचारी ए संका सुनि बेद पुरान।
संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु।। 3।।
बाहरु उदकि पखारीऐ घट भीतरि बिबिध बिकार।
सुध कवन पर होइबो सुव कुंजर बिधि बिउहार।। 4।।
रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार।
पारस मानो ताबो छुए कनक होत नहीं बार।। 5।।
परम परस गुरु भेटीऐ पूरब लिखत लिलाट।
उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट।। 6।।
भगत जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार।
सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक बिचार।। 7।।
अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टरै भ्रम फास।
प्रेम भगति नहीं उपजै ता ते रविदास उदास।। 8।।

35.

।। राग गौड़ी।।
मरम कैसैं पाइबौ रे।
पंडित कोई न कहै समझाइ, जाथैं मरौ आवागवन बिलाइ।। टेक।।
बहु बिधि धरम निरूपिये, करता दीसै सब लोई।
जाहि धरम भ्रम छूटिये, ताहि न चीन्हैं कोई।। 1।।
अक्रम क्रम बिचारिये, सुण संक्या बेद पुरांन।
बाकै हृदै भै भ्रम, हरि बिन कौंन हरै अभिमांन।। 2।।
सतजुग सत त्रेता तप, द्वापरि पूजा आचार।
तीन्यूं जुग तीन्यूं दिढी, कलि केवल नांव अधार।। 3।।
बाहरि अंग पखालिये, घट भीतरि बिबधि बिकार।
सुचि कवन परिहोइये, कुंजर गति ब्यौहार।। 4।।
रवि प्रकास रजनी जथा, गत दीसै संसार पारस मनि तांबौ छिवै।
कनक होत नहीं बार, धन जोबन प्रभु नां मिलै।। 5।।

ना मिलै कुल करनी आचार।
एकै अनेक बिगाइया, ताकौं जाणैं सब संसार।। 6।।
अनेक जतन करि टारिये, टारी टरै न भ्रम पास।
प्रेम भगति नहीं उपजै, ताथैं रैदास उदास।। 7।।

36.

।। राग गौड़ी।।
जीवत मुकंदे मरत मुकंदे।
ताके सेवक कउ सदा अनंदे।। टेक।।
मुकंद-मुकंद जपहु संसार। बिन मुकंद तनु होइ अउहार।
सोई मुकंदे मुकति का दाता। सोई मुकंदु हमरा पित माता।। 1।।
मुकंद-मुकंदे हमारे प्रानं। जपि मुकंद मसतकि नीसानं।
सेव मुकंदे करै बैरागी। सोई मुकंद दुरबल धनु लाधी।। 2।।
एक मुकंदु करै उपकारू। हमरा कहा करै संसारू।
मेटी जाति हूए दरबारि। तुही मुकंद जोग जुगतारि।। 3।।
उपजिओ गिआनु हूआ परगास। करि किरपा लीने करि दास।
कहु रविदास अब त्रिसना चूकी। जपि मुकंद सेवा ताहू की।। 4।।

37.

।। राग गौड़ी।।
साध का निंदकु कैसे तरै।
सर पर जानहु नरक ही परै।। टेक।।
जो ओहु अठिसठि तीरथ न्हावै। जे ओहु दुआदस सिला पूजावै।
जे ओहु कूप तटा देवावै। करै निंद सभ बिरथा जावै।। 1।।
जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति। अरपै नारि सीगार समेति।
सगली सिंम्रिति स्रवनी सुनै। करै निंद कवनै नहीं गुनै।। 2।।
जो ओहु अनिक प्रसाद करावै। भूमि दान सोभा मंडपि पावै।
अपना बिगारि बिरांना साढै। करै निंद बहु जोनी हाढै।। 3।।
निंदा कहा करहु संसारा। निंदक का प्ररगटि पाहारा।
निंदकु सोधि साधि बीचारिआ। कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ।। 4।।

38.

।। राग आसावरी (आसा)।।
केसवे बिकट माया तोर।
ताथैं बिकल गति मति मोर।। टेक।।
सु विष डसन कराल अहि मुख, ग्रसित सुठल सु भेख।
निरखि माखी बकै व्याकुल, लोभ काल न देख।। 1।।
इन्द्रीयादिक दुख दारुन, असंख्यादिक पाप।
तोहि भजत रघुनाथ अंतरि, ताहि त्रस न ताप।। 2।।
प्रतंग्या प्रतिपाल चहुँ जुगि, भगति पुरवन कांम।
आस तोर भरोस है, रैदास जै जै राम।। 3।।

39.

।। राग आसावरी।।
बरजि हो बरजि बीठल, माया जग खाया।
महा प्रबल सब हीं बसि कीये, सुर नर मुनि भरमाया।। टेक।।
बालक बिरधि तरुन अति सुंदरि, नांनां भेष बनावै।
जोगी जती तपी संन्यासी, पंडित रहण न पावै।। 1।।
बाजीगर की बाजी कारनि, सबकौ कौतिग आवै।
जो देखै सो भूलि रहै, वाका चेला मरम जु पावै।। 2।।
खंड ब्रह्मड लोक सब जीते, ये ही बिधि तेज जनावै।
स्वंभू कौ चित चोरि लीयौ है, वा कै पीछैं लागा धावै।। 3।।
इन बातनि सुकचनि मरियत है, सबको कहै तुम्हारी।
नैन अटकि किनि राखौ केसौ, मेटहु बिपति हमारी।। 4।।
कहै रैदास उदास भयौ मन, भाजि कहाँ अब जइये।
इत उत तुम्ह गौब्यंद गुसांई, तुम्ह ही मांहि समइयै।। 5।।

40.

।। राग आसा।।
रांमहि पूजा कहाँ चढ़ाऊँ।
फल अरु फूल अनूप न पांऊँ।। टेक।।
थनहर दूध जु बछ जुठार्यौ, पहुप भवर जल मीन बिटार्यौ।

मलियागिर बेधियौ भवंगा, विष अंम्रित दोऊँ एकै संगा।। 1।।
मन हीं पूजा मन हीं धूप, मन ही सेऊँ सहज सरूप।। 2।।
पूजा अरचा न जांनूं रांम तेरी, कहै रैदास कवन गति मेरी।। 3।।

41.

।। राग आसा।।
बंदे जानि साहिब गनीं।
संमझि बेद कतेब बोलै, ख्वाब मैं क्या मनीं।। टेक।।
ज्वांनीं दुनी जमाल सूरति, देखिये थिर नांहि बे।
दम छसै सहंस्र इकवीस हरि दिन, खजांनें थैं जांहि बे।। 1।।
मतीं मारे ग्रब गाफिल, बेमिहर बेपीर बे।
दरी खानैं पड़ै चोभा, होत नहीं तकसीर बे।। 2।।
कुछ गाँठि खरची मिहर तोसा, खैर खूबी हाथि बे।
धणीं का फुरमांन आया, तब कीया चालै साथ बे।। 3।।
तजि बद जबां बेनजरि कम दिल, करि खसकी कांणि बे।
रैदास की अरदास सुणि, कछू हक हलाल पिछांणि बे।। 4।।

42.

।। राग आसा।।
सु कछु बिचार्यौं ताथैं मेरौ मन थिर के रह्यौ।
हरि रंग लागौ ताथैं बरन पलट भयौ।। टेक।।
जिनि यहु पंथी पंथ चलावा, अगम गवन मैं गमि दिखलावा।। 1।।
अबरन बरन कथैं जिनि कोई, घटि घटि ब्यापि रह्यौ हरि सोई।। 2।।
जिहि पद सुर नर प्रेम पियासा, सो पद्म रमि रह्यौ जन रैदासा।। 3।।

43.

।। राग आसा।।
माधौ संगति सरनि तुम्हारी।
जगजीवन कृश्न मुरारी।। टेक।।
तुम्ह मखतूल गुलाल चत्रभुज, मैं बपुरौ जस कीरा।
पीवत डाल फूल रस अंमृत, सहजि भई मति हीरा।। 1।।
तुम्ह चंदन मैं अरंड बापुरौ, निकटि तुम्हारी बासा।

नीच बिरख थैं ऊँच भये, तेरी बास सुबास निवासा।। 2।।
जाति भी वोंछी जनम भी वोछा, वोछा करम हमारा।
हम सरनागति रांम राइ की, कहै रैदास बिचारा।। 3।।

44.

।। राग आसा।।
माधौ अविद्या हित कीन्ह।
ताथैं मैं तोर नांव न लीन्ह।। टेक।।
मिग्र मीन भ्रिग पतंग कुंजर, एक दोस बिनास।
पंच ब्याधि असाधि इहि तन, कौंन ताकी आस।। 1।।
जल थल जीव जंत जहाँ-जहाँ लौं करम पासा जाइ।
मोह पासि अबध बाधौ, करियै कौंण उपाइ।। 2।।
त्रिजुग जोनि अचेत संम भूमि, पाप पुन्य न सोच।
मानिषा अवतार दुरलभ, तिहू संकुट पोच।। 3।।
रैदास दास उदास बन भव, जप न तप गुरु ग्यांन।
भगत जन भौ हरन कहियत, ऐसै परंम निधांन।। 4।।

45.

।। राग आसा।।
देहु कलाली एक पियाला।
ऐसा अवधू है मतिवाला।। टेक।।
ए रे कलाली तैं क्या कीया, सिरकै सा तैं प्याला दीया।। 1।।
कहै कलाली प्याला देऊँ, पीवनहारे का सिर लेऊँ।। 2।।
चंद सूर दोऊ सनमुख होई, पीवै पियाला मरै न कोई।। 3।।
सहज सुनि मैं भाठी सरवै, पीवै रैदास गुर मुखि दरवै।। 4।।

46.

।। राग आसा।।
संत ची संगति संत कथा रसु।
संत प्रेम माझै दीजै देवा देव।। टेक।।
संत तुझी तनु संगति प्रान। सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव।। 1।।

संत आचरण संत चो मारगु। संत च ओल्हग ओल्हगणी।। 2।।
अउर इक मागउ भगति चिंतामणि। जणी लखावहु असंत पापी सणि।। 3।।
रविदास भणै जो जाणै सो जाणु। संत अनंतहि अंत: नाही।। 4।।

47.

।। राग आसा।।
तुझहि चरन अरबिंद भँवर मनु।
पान करत पाइओ, पाइओ रामईआ धनु।। टेक।।
कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु। प्रेम जाइ तउ डरपै तेरो जनु।। 1।।
संपति बिपति पटल माइआ धनु। ता महि भगत होत न तेरो जनु।। 2।।
प्रेम की जेवरी बाधिओ तेरो जन। कहि रविदास छूटिबो कवन गुनै।। 3।।

48.

।। राग आसा।।
हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे।
हरि सिमरत जन गए निसतरि तरे।। टेक।।
हरि के नाम कबीर उजागर। जनम जनम के काटे कागर।। 1।।
निमत नामदेउ दूधु पीआइया। तउ जग जनम संकट नहीं आइआ।। 2।।
जनम रविदास राम रंगि राता। इउ गुर परसादि नरक नहीं जाता।। 3।।

49.

।। राग आसा।।
माटी को पुतरा कैसे नचतु है।
देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है।। टेक।।
जब कुछ पावै तब गरबु करतु है। माइआ गई तब रोवनु लगतु है।। 1।।
मन बच क्रम रस कसहि लुभाना। बिनसि गइआ जाइ कहूँ समाना।। 2।।
कहि रविदास बाजी जगु भाई। बाजीगर सउ मोहि प्रीति बनि आई।। 3।।

50.

।। राग आसा।।
भाई रे सहज बन्दी लोई, बिन सहज सिद्धि न होई।
लौ लीन मन जो जानिये, तब कीट भृंगी होई।। टेक।

आपा पर चीन्हे नहीं रे, और को उपदेस।
कहाँ ते तुम आयो रे भाई, जाहुगे किस देस।। 1।।
कहिये तो कहिये काहि कहिये, कहाँ कौन पतियाइ।
रैदास दास अजान है करि, रह्यो सहज समाइ।। 2।।

51.

।। राग आसा।।
ऐसी मेरी जाति भिख्यात चमारं।
हिरदै राम गौब्यंद गुन सारं।। टेक।।
सुरसुरी जल लीया क्रित बारूणी रे, जैसे संत जन करता नहीं पांन।
सुरा अपवित्र नित गंग जल मांनियै, सुरसुरी मिलत नहीं होत आंन।। 1।।
ततकरा अपवित्र करि मांनियैं, जैसें कागदगर करत बिचारं।
भगत भगवंत जब ऊपरैं लेखियैं, तब पूजियै करि नमसकारं।। 2।।
अनेक अधम जीव नांम गुण उधरे, पतित पांवन भये परसि सारं।
भणत रैदास ररंकार गुण गावतां, संत साधू भये सहजि पारं।। 3।।

52.

।। राग सोरठी।।
पार गया चाहै सब कोई।
रहि उर वार पार नहीं होई।। टेक।।
पार कहैं उर वार सूँ पारा, बिन पद परचौ भ्रमहि गवारा।। 1।।
पार परंम पद मंझि मुरारी, तामैं आप रमैं बनवारी।। 2।।
पूरन ब्रह्म बसै सब ठाइं,ं कहै रैदास मिले सुख सांइं।ं। 3।।

53.

।। राग सोरठी।।
बपुरौ सति रैदास कहै।
ग्यान बिचारि नांइ चित राखै, हरि कै सरनि रहै रे।। टेक।।
पाती तोड़ै पूज रचावै, तारण तिरण कहै रे।
मूरति मांहि बसै परमेसुर, तौ पांणी मांहि तिरै रे।। 1।।
त्रिबिधि संसार कवन बिधि तिरिबौ, जे दिढ नांव न गहै रे।

नाव छाड़ि जे डूंगै बैठे, तौ दूणां दूख सहै रे।। 2।।
गुरु कौं सबद अरु सुरति कुदाली, खोदत कोई लहै रे।
रांम काहू कै बाटै न आयौ, सोनैं कूल बहै रे।। 3।।
झूठी माया जग डहकाया, तो तनि ताप दहै रे।
कहै रैदास रांम जपि रसनां, माया काहू कै संगि न न रहै रे।। 4।।

54.

।। राग सोरठी।।
इहै अंदेसा सोचि जिय मेरे।
निस बासुरि गुन गाँऊँ रांम तेरे।। टेक।।
तुम्ह च्यतंत मेरी च्यंता हो न जाई, तुम्ह च्यंतामनि होऊ कि नांहीं।। 1।।
भगति हेत का का नहीं कीन्हा, हमारी बेर भये बल हीनां।। 2।।
कहै रैदास दास अपराधी, जिहि तुम्ह ढरवौ सो मैं भगति न साधी।। 3।।

55.

।। राग सोरठी।।
रांम राइ का कहिये यहु ऐसी।
जन की जांनत हौ जैसी तैसी।। टेक।।
मीन पकरि काट्यौ अरु फाट्यौ, बांटि कीयौ बहु बांनीं।
खंड खंड करि भोजन कीन्हौं, तऊ न बिसार्यौ पांनी।। 1।।
तै हम बाँधे मोह पासि मैं, हम तूं प्रेम जेवरिया बांध्यौ।
अपने छूटन के जतन करत हौ, हम छूटे तूँ आराध्यौ।। 2।।
कहै रैदास भगति इक बाढ़ी, अब काकौ डर डरिये।
जा डर कौं हम तुम्ह कौं सेवैं, सु दुख अजहूँ सहिये।। 3।।

56.

।। राग सोरठी।।
रे मन माछला संसार समंदे, तू चित्र बिचित्र बिचारि रे।
जिहि गालै गिलियाँ ही मरियें, सो संग दूरि निवारि रे।। टेक।।
जम छैड़ि गणि डोरि छै कंकन, प्रत्रिया गालौ जांणि रे।
होइ रस लुबधि रमैं यू मूरिख, मन पछितावै न्यांणि रे।। 1।।

पाप गिल्यौ छै धरम निबौली, तू देखि देखि फल चाखि रे।
पर त्रिया संग भलौ जे होवै, तौ राणां रांवण देखि रे।। 2।।
कहै रैदास रतन फल कारणि, गोब्यंद का गुण गाइ रे।
काचौ कुंभ भर्यौ जल जैसैं, दिन दिन घटतौ जाइ रे।। 3।।

57.

।। राग सोरठी।।
रे चित चेति चेति अचेत काहे, बालमीकौं देख रे।
जाति थैं कोई पदि न पहुच्या, राम भगति बिसेष रे।। टेक।।
षट क्रम सहित जु विप्र होते, हरि भगति चित द्रिढ नांहि रे।
हरि कथा सूँ हेत नांहीं, सुपच तुलै तांहि रे।। 1।।
स्वान सत्रु अजाति सब थैं, अंतरि लावै हेत रे।
लोग वाकी कहा जानैं, तीनि लोक पवित रे।। 2।।
अजामिल गज गनिका तारी, काटी कुंजर की पासि रे।
ऐसे द्रुमती मुकती कीये, क्यूँ न तिरै रैदास रे।। 3।।

58.

।। राग सोरठी।।
रथ कौ चतुर चलावन हारौ।
खिण हाकै खिण ऊभौ राखै, नहीं आन कौ सारौ।। टेक।।
जब रथ रहै सारहीं थाके, तब को रथहि चलावै।
नाद बिनोद सबै ही थाकै, मन मंगल नहीं गावैं।। 1।।
पाँच तत कौ यहु रथ साज्यौ, अरधैं उरध निवासा।
चरन कवल ल्यौ लाइ रह्यौ है, गुण गावै रैदासा।। 2।।

59.

।। राग सोरठी।।
जो तुम तोरौ रांम मैं नहीं तोरौं।
तुम सौं तोरि कवन सूँ जोरौं।। टेक।।
तीरथ ब्रत का न करौं अंदेसा, तुम्हारे चरन कवल का भरोसा।। 1।।
जहाँ जहाँ जाऊँ तहाँ तुम्हारी पूजा, तुम्ह सा देव अवर नहीं दूजा।। 2।।

मैं हरि प्रीति सबनि सूँ तोरी, सब स्यौं तोरि तुम्हैं स्यूँ जोरी।। 3।।
सब परहरि मैं तुम्हारी आसा, मन क्रम वचन कहै रैदासा।। 4।।

60.

।। राग सोरठी।।
किहि बिधि अणसरूं रे, अति दुलभ दीनदयाल।
मैं महाबिषई अधिक आतुर, कांमना की झाल।। टेक।।
कह द्यंभ बाहरि कीयैं, हरि कनक कसौटी हार।
बाहरि भीतरि साखि तू, मैं कीयौ सुसा अंधियार।। 1।।
कहा भयौ बहु पाखंड कीयैं, हरि हिरदै सुपिनैं न जांन।
ज्यू दारा बिभचारनीं, मुख पतिब्रता जीय आंन।। 2।।
मैं हिरदै हारि बैठो हरी, मो पैं सयौं न एको काज।
भाव भगति रैदास दे, प्रतिपाल करौ मोहि आज।। 3।।

61.

।। राग सोरठी।।
माधवे का कहिये भ्रम ऐसा।
तुम कहियत होह न जैसा।। टेक।।
त्रिपति एक सेज सुख सूता, सुपिनैं भया भिखारी।
अछित राज बहुत दुख पायौ, सा गति भई हमारी।। 1।।
जब हम हुते तबैं तुम्ह नांहीं, अब तुम्ह हौ मैं नांहीं।
सलिता गवन कीयौ लहरि महोदधि, जल केवल जल मांही।। 2।।
रजु भुजंग रजनी प्रकासा, अस कछु मरम जनावा।
संमझि परी मोहि कनक अल्यंक्रत ज्यूं, अब कछू कहत न आवा।। 3।।
करता एक भाव जगि भुगता, सब घट सब बिधि सोई।
कहै रैदास भगति एक उपजी, सहजैं होइ स होई।। 4।।

62.

।। राग सोरठी।।
माधौ भ्रम कैसैं न बिलाइ।
ताथैं द्वती भाव दरसाइ।। टेक।।
कनक कुंडल सूत्र पट जुदा, रजु भुजंग भ्रम जैसा।

जल तरंग पांहन प्रितमां ज्यूँ, ब्रह्म जीव द्वती ऐसा।। 1।।
बिमल ऐक रस, उपजै न बिनसै, उदै अस्त दोई नांहीं।
बिगता बिगति गता गति नांहीं, बसत बसै सब मांहीं।। 2।।
निहचल निराकार अजीत अनूपम, निरभै गति गोब्यंदा।
अगम अगोचर अखिर अतरक, त्रिगुण नित आनंदा।। 3।।
सदा अतीत ग्यांन ध्यानं बिरिजित, नीरबिकारं अबिनासी।
कहै रैदास सहज सूंनि सति, जीवन मुकति निधि कासी।। 4।।

63.

।। राग सोरठी।।
मन मेरे सोई सरूप बिचार।
आदि अंत अनंत परंम पद, संसै सकल निवारं।। टेक।।
जस हरि कहियत तस तौ नहीं, है अस जस कछू तैसा।
जानत जानत जानि रह्यौ मन, ताकौ मरम कहौ निज कैसा।। 1।।
कहियत आन अनुभवत आन, रस मिल्या न बेगर होई।
बाहरि भीतरि गुप्त प्रगट, घट घट प्रति और न कोई।। 2।।
आदि ही येक अंति सो एकै, मधि उपाधि सु कैसे।
है सो येक पै भ्रम तैं दूजा, कनक अल्यंकृत जैसैं।। 3।।
कहै रैदास प्रकास परम पद, का जप तप ब्रत पूजा।
एक अनेक येक हरि, करौं कवण बिधि दूजा।। 4।।

64.

।। राग सोरठी।।
जिनि थोथरा पिछोरे कोई।
जो र पिछौरे जिहिं कण होई।। टेक।।
झूठ रे यहु तन झूठी माया, झूठा हरि बिन जन्म गंवाया।। 1।।
झूठा रे मंदिर भोग बिलासा, कहि समझावै जन रैदासा।। 2।।

65.

।। राग सोरठी।।
न बीचारिओ राजा राम को रसु।
जिह रस अनरस बीसरि जाही।। टेक।।

दूलभ जनमु पुंन फल पाइओ बिरथा जात अबिबेके।
राजे इन्द्र समसरि ग्रिह आसन बिनु हरि भगति कहहु किह लेखै।। 1।।
जानि अजान भए हम बावर सोच असोच दिवस जाही।
इन्द्री सबल निबल बिबेक बुधि परमारथ परवेस नहीं।। 2।।
कहीअत आन अचरीअत आन कछु समझ न परै अपर माइआ।
कहि रविदास उदास दास मति परहरि कोपु करहु जीअ दइआ।। 3।।

66.

।। राग सोरठी।।
हरि हरि हरि न जपहि रसना।
अवर सम तिआगि बचन रचना।। टेक।।
सुख सागरु सुरतर चिंतामनि कामधेनु बसि जाके।
चारि पदारथ असट दसा सिधि नवनिधि करतल ताके।। 1।।
नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अखर माँही।
बिआस बिचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही।। 2।।
सहज समाधि उपाधि रहत फुनि बड़ै भागि लिव लागी।
कहि रविदास प्रगासु रिदै धरि जनम मरन भै भागी।। 3।।

67.

।। राग सोरठी।।
माधवे तुम न तोरहु तउ हम नहीं तोरहि।
तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि।। टेक।।
जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा। जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा।। 1।।
जउ तुम दीवरा तउ हम बाती। जउ तुम तीरथ तउ हम जाती।। 2।।
साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी। तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी।। 3।।
जह जह जाउ तहा तेरी सेवा। तुम सो ठाकुरु अउरु न देवा।। 4।।
तुमरे भजन कटहि जम फाँसा। भगति हेत गावै रविदासा।। 5।।

68.

।। राग सोरठी।।
प्रानी किआ मेरा किआ तेरा।
तैसे तरवर पंखि बसेरा।। टेक।।

जल की भीति पवन का थंभा। रकत बुंद का गारा।
हाड़ मास नाड़ी को पिंजरू। पंखी बसै बिचारा।। 1।।
राखहु कंध उसारहु नीवां। साढ़े तीनि हाथ तेरी सीवां।। 2।।
बंके बाल पाग सिर डेरी। इहु तनु होइगो भसम की ढेरी।। 3।।
ऊचे मंदर सुंदर नारी। राम नाम बिनु बाजी हारी।। 4।।
मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी। ओछा जनमु हमारा।
तुम सरनागति राजा रामचंद। कहि रविदास चमारा।। 5।।

69.

।। राग सोरठी।।
चमरटा गाँठि न जनई।
लोग गठावै पनही।। टेक।।
आर नहीं जिह तोपउ। नहीं रांबी ठाउ रोपउ।। 1।।
लोग गंठि गंठि खरा बिगूचा। हउ बिनु गांठे जाइ पहूचा।। 2।।
रविदासु जपै राम नाम, मोहि जम सिउ नाही कामा।। 3।।

70.

।। राग सोरठी।।
पांडे कैसी पूज रची रे।
सति बोलै सोई सतिबादी, झूठी बात बची रे।। टेक।।
जो अबिनासी सबका करता, ब्यापि रह्यौ सब ठौर रे।
पंच तत जिनि कीया पसारा, सो यौ ही किधौं और रे।। 1।।
तू ज कहत है यौ ही करता, या कौं मनिख करै रे।
तारण सकति सहीजे यामैं, तौ आपण क्यूँ न तिरै रे।। 2।।
अहीं भरोसै सब जग बूझा, सुंणि पंडित की बात रे।।
याकै दरसि कौंण गुण छूटा, सब जग आया जात रे।। 3।।
याकी सेव सूल नहीं भाजै, कटै न संसै पास रे।
सौचि बिचारि देखिया मूरति, यौं छाड़ौ रैदास रे।। 4।।

71.

।। राग धनाश्री।।

तुझा देव कवलापती सरणि आयौ।
मंझा जनम संदेह भ्रम छेदि माया।। टेक।।
अति संसार अपार भौ सागरा, ता मैं जांमण मरण संदेह भारी।
कांम भ्रम क्रोध भ्रम लोभ भ्रम, मोह भ्रम, अनत भ्रम छेदि मम करसि यारी।। 1।।
पंच संगी मिलि पीड़ियौ प्रांणि यौं, जाइ न न सकू बैराग भागा।
पुत्र बरग कुल बंधु ते भारज्या, भखैं दसौ दिसि रिस काल लागा।। 2।।
भगति च्यंतौं तो मोहि दुख ब्यापै, मोह च्यंतौ तौ तेरी भगति जाई।
उभै संदेह मोहि रैंणि दिन ब्यापै, दीन दाता करौं कौंण उपाई।। 3।।
चपल चेत्यौ नहीं बहुत दुख देखियौ, कांम बसि मोहियौ क्रम फंधा।
सकति सनबंध कीयौ, ग्यान पद हरि लीयौ, हिरदै बिस रूप तजि भयौ अंधा।। 4।।
परम प्रकास अबिनास अघ मोचनां, निरखि निज रूप बिश्रांम पाया।
बंदत रैदास बैराग पद च्यंतता, जपौ जगदीस गोब्यंद राया।। 5।।

72.

।। राग धनाश्री।।
मेरी प्रीति गोपाल सूँ जिनि घटै हो।
मैं मोलि महँगी लई तन सटै हो।। टेक।।
हिरदै सुमिरंन करौं नैन आलोकनां, श्रवनां हरि कथा पूरि राखूँ।
मन मधुकर करौ, चरणां चित धरौं, रांम रसाइन रसना चाखूँ।। 1।।
साध संगति बिनां भाव नहीं उपजै, भाव बिन भगति क्यूँ होइ तेरी।
बंदत रैदास रघुनाथ सुणि बीनती, गुर प्रसादि क्रिया करौ मेरी।। 2।।

73.

।। राग धनाश्री।।
कौंन भगति थैं रहै प्यारे पांहुनौं रे।
धरि धरि देखैं मैं अजब अभावनौं रे।। टेक।।
मैला मैला कपड़ा केताकि धोउँ, आवै आवै नींदड़ी कहाँ लौं सोऊँ।। 1।।
ज्यूँ ज्यूँ जोड़ौं त्यूँ त्यूँ फाटे, झूठे से बनजि रे उठि गयौ हाटे।। 2।।
कहैं रैदास पर्यौ जब लेखौ, जोई जोई कीयौ रे, सोई सोई देखौ।। 3।।

74.

।। राग धनाश्री।।
जयौ रांम गोब्यंद बीठल बासदेव।
हरि बिश्न बैक्ण्ठ मधुकीटभारी।।
कृश्न केसों रिषीकेस कमलाकंत।
अहो भगवंत त्रिबधि संतापहारी।। टेक।।
अहो देव संसार तौ गहर गंभीर।
भीतरि भ्रमत दिसि ब दिसि, दिसि कछू न सूझै।।
बिकल ब्याकुल खेंद, प्रणतंत परमहेत।
ग्रसित मति मोहि मारग न सूझै।।
देव इहि औसरि आंन, कौंन संक्या समांन।
देव दीन उधंरन, चरंन सरन तेरी।।
नहीं आंन गति बिपति कौं हरन और।
श्रीपति सुनसि सीख संभाल प्रभु करहु मेरी।। 1।।
अहो देव कांम केसरि काल, भुजंग भांमिनी भाल।
लोभ सूकर क्रोध बर बारनूँ।। 2।।
ग्रब गैंडा महा मोह टटनीं, बिकट निकट अहंकार आरनूँ।
जल मनोरथ ऊरमीं, तरल तृसना मकर इन्द्री जीव जंत्रक मांही।
समक ब्याकुल नाथ, सत्य बिष्यादिक पंथ, देव देव विश्राम नांही।। 3।।
अहो देव सबै असंगति मेर, मधि फूटा भेर।
नांव नवका बड़ैं भागि पायौ।
बिन गुर करणधार डोलै न लागै तीर।
विषै प्रवाह औ गाह जाई।
देव किहि करौं पुकार, कहाँ जाँऊँ।
कासूँ कहूँ, का करूँ अनुग्रह दास की त्रसहारी।
इति ब्रत मांन और अवलंबन नहीं।
तो बिन त्रिबधि नाइक मुरारी।। 4।।
अहो देव जेते कयैं अचेत, तू सरबगि मैं न जांनूं।
ग्यांन ध्यांन तेरौ, सत्य सतिम्रिद परपन मन सा मल।
मन क्रम बचन जंमनिका, ग्यान बैराग दिढ़ भगति नाहीं।

मलिन मति रैदास, निखल सेवा अभ्यास।
प्रेम बिन प्रीति सकल संसै न जांहीं।। 5।।

75.

।। राग धनाश्री।।
मैं का जांनूं देव मैं का जांनू।
मन माया के हाथि बिकांनूं।। टेक।।
चंचल मनवां चहु दिसि धावैय जिभ्या इंद्री हाथि न आवै।
तुम तौ आहि जगत गुर स्वांमीं, हम कहियत कलिजुग के कांमी।। 1।।
लोक बेद मेरे सुकृत बढ़ाई, लोक लीक मोपैं तजी न जाई।
इन मिलि मेरौ मन जु बिगार्यौ, दिन दिन हरि जी सूँ अंतर पार्यौ।। 2।।
सनक सनंदन महा मुनि ग्यांनी, सुख नारद ब्यास इहै बखांनीं।
गावत निगम उमांपति स्वांमीं, सेस सहंस मुख कीरति गांमी।। 3।।
जहाँ जहाँ जांऊँ तहाँ दुख की रासी, जौ न पतियाइ साध है साखी।
जमदूतनि बहु बिधि करि मार्यौ, तऊ निलज अजहूँ नहीं हार्यौं।। 4।।
हरि पद बिमुख आस नहीं छूटै, ताथैं त्रिसनां दिन दिन लूटै।
बहु बिधि करम लीयैं भटकावै, तुमहि दोस हरि कौं न लगावै।। 5।।
केवल रांम नांम नहीं लीया। संतुति विषै स्वादि चित दीया।
कहै रैदास कहाँ लग कहिये, बिन जग नाथ सदा सुख सहियै।। 6।।

76.

।। राग धनाश्री।।
त्रहि त्रहि त्रिभवन पति पावन।
अतिसै सूल सकल बलि जांवन।। टेक।।
कांम क्रोध लंपट मन मोर, कैसैं भजन करौं रांम तोर।। 1।।
विषम विष्याधि बिहंडनकारी, असरन सरन सरन भौ हारी।। 2।।
देव देव दरबार दुवारै, रांम रांम रैदास पुकारै।। 3।।

77.

।। राग धनाश्री।।
जन कूँ तारि तारि तारि तारि बाप रमइया।
कठन फंध पर्यौ पंच जमइया।। टेक।।

तुम बिन देव सकल मुनि ढूँढ़े, कहूँ न पायौ जम पासि छुड़इया।। 1।।
हमसे दीन, दयाल न तुमसे, चरन सरन रैदास चमइया।। 2।।

78.

।। राग धनाश्री।।
हउ बलि बलि जाउ रमईया कारने।
कारन कवन अबोल।। टेक।।
हम सरि दीनु दइआलु न तुमसरि। अब पतीआरु किआ कीजै।
बचनी तोर मोर मनु मानैं। जन कउ पूरनु दीजै।। 1।।
बहुत जनम बिछुरे थे माधउ, इहु जनमु तुम्हरे लेखे।
कहि रविदास अस लगि जीवउ। चिर भइओ दरसनु देखे।। 2।।

79.

।। राग धनाश्री।।
नामु तेरो आरती भजनु मुरारे।
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पसारे।। टेक।।
नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा नामु तेरा केसरो ले छिड़का रे।
नामु तेरा अंमुला नामु तेरो चंदनों, घसि जपे नामु ले तुझहि का उचारे।। 1।।
नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे।
नाम तेरे की जोति लगाई भइओं उजिआरो भवन सगला रे।। 2।।
नामु तेरो तागा नामु फूल माला, भार अठारह सगल जूठा रे।
तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ नामु तेरा तुही चवर ढोला रे।। 3।।
दसअठा अठसठे चारे खाणी इहै वरतणि है सगल संसारे।
कहै रविदासु नाम तेरो आरती सतिनामु है हरि भोग तुहारे।। 4।।

80.

।। राग धनाश्री।।
अहो देव तेरी अमित महिमां, महादैवी माया।
मनुज दनुज बन दहन, कलि विष कलि किरत सबै समय समंन।।
निरबांन पद भुवन, नांम बिघनोघ पवन पात।। टेक।।
गरग उत्तम बांमदेव, विस्वामित्र ब्यास जमदंग्नि श्रिंगी ऋषि दुर्बासा।

मारकंडेय बालमीक भ्रिगु अंगिरा, कपिल बगदालिम सुकमातंम न्यासा।।1।।
अत्रिय अष्टाब्रक गुर गंजानन, अगस्ति पुलस्ति पारासुर सिव विधाता।
रिष जड़ भरथ सऊ भरिष, चिवनि बसिष्टि जिह्ववनि ज्यागबलिक तव ध्यानि राता।। 2।।
ध्रू अंबरीक प्रहलाद नारद, बिदुर द्रोवणि अक्रूर पांडव सुदांमां।
भीषम उधव बभीषन चंद्रहास, बलि कलि भक्ति जुक्ति जयदेव नांमां।।3।।
गरुड़ हनूंमांनु मांन जनकात्मजा, जय बिजय द्रोपदी गिरि सुता श्री प्रचेता।
रुकमांगद अंगद बसदेव देवकी, अवर अमिनत भक्त कहूँ केता।। 4।।
हे देव सेष सनकादि श्रुति भागवत, भारती स्तवत अनिवरत गुणर्दुबगेवं।
अकल अबिछन ब्यापक ब्रह्ममेक रस सुध चौतंनि पूरन मनेवं।। 5।।
सरगुण निरगुण निरामय निरबिकार, हरि अज निरंजन बिमल अप्रमेवं।
प्रमात्मां प्रक्रिति पर प्रमुचित, सचिदांनंद गुर ग्यांन मेवं।। 6।।
हे देव पवन पावक अवनि, जलधि जलधर तरंनि।
काल जाम मृिति ग्रह ब्याध्य बाधा, गज भुजंग भुवपाल।
ससि सक्र दिगपाल, आग्या अनुगत न मुचत मृजादा।। 7।।
अभय बर ब्रिद प्रतंग्या सति संकल्प, हरि दुष्ट तारंन चरंन सरंन तैरैं।
दास रैदास यह काल ब्याकुल, त्रहि त्रहि अवर अवलंबन नहीं मेरैं।। 8।।

81.

।। राग विलावल।।
क्या तू सोवै जणिं दिवांनां।
झूठा जीवनां सच करि जांनां।। टेक।।
जिनि जीव दिया सो रिजकअ बड़ावै, घट घट भीतरि रहट चलावै।
करि बंदिगी छाड़ि मैं मेरा, हिरदै का रांम संभालि सवेरा।। 1।
जो दिन आवै सौ दुख मैं जाई, कीजै कूच रह्यां सच नांहीं।
संग चल्या है हम भी चलनां, दूरि गवन सिर ऊपरि मरनां।। 2।।
जो कुछ बोया लुनियें सोई, ता मैं फेर फार कछू न होई।
छाडेअं कूर भजै हरि चरनां, ताका मिटै जनम अरु मरनां।। 3।।
आगैं पंथ खरा है झीनां, खाडै धार जिसा है पैंनां।
तिस ऊपरि मारग है तेरा, पंथी पंथ संवारि सवेरा।। 4।।
क्या तैं खरच्या क्या तैं खाया, चल दरहाल दीवांनि बुलाया।

साहिब तोपैं लेखा लेसी, भीड़ पड़े तू भरि भरिदेसी।। 5।।
जनम सिरांनां कीया पसारा, सांझ पड़ी चहु दिसि अंधियारा।
कहै रैदासा अग्यांन दिवांनां, अजहूँ न चेतै दुनी फंध खांनां।। 6।।

82.

।। राग विलावल।।
खांलिक सकिसता मैं तेरा।
दे दीदार उमेदगार बेकरार जीव मेरा।। टेक।।
अवलि आख्यर इलल आदंम, मौज फरेस्ता बंदा।
जिसकी पनह पीर पैकंबर, मैं गरीब क्या गंदा।। 1।।
तू हानिरां हजूर जोग एक, अवर नहीं दूजा।
जिसकै इसक आसिरा नांहीं, क्या निवाज क्या पूजा।। 2।।
नाली दोज हनोज बेबखत, कमि खिजमतिगार तुम्हारा।
दरमादा दरि ज्वाब न पावै, कहै रैदास बिचारा।। 3।।

83.

।। राग विलावल।।
जो मोहि बेदन का सजि आखूँ।
हरि बिन जीव न रहै कैसैं करि राखूँ।। टेक।।
जीव तरसै इक दंग बसेरा, करहु संभाल न सुरि जन मोरा।
बिरह तपै तनि अधिक जरावै, नींदड़ी न आवै भोजन नहीं भावै।। 1।।
सखी सहेली ग्रब गहेली, पीव की बात न सुनहु सहेली।
मैं रे दुहागनि अधिक रंजानी, गया सजोबन साध न मांनीं।। 2।।
तू दांनां सांइं साहिब मेरा, खिजमतिगार बंदा मैं तेरा।
कहै रैदास अंदेसा एही, बिन दरसन क्यूँ जीवैं हो सनेही।। 3।।

84.

।। राग विलावल।।
ताथैं पतित नहीं को अपांवन। हरि तजि आंनहि ध्यावै रे।
हम अपूजि पूजि भये हरि थैं, नांउं अनूपम गावै रे।। टेक।।
अष्टादस ब्याकरन बखांनै, तीनि काल षट जीता रे।

प्रेम भगति अंतरगति नांहीं, ताथैं धानुक नीका रे।। 1।।
ताथैं भलौ स्वांन कौ सत्रु, हरि चरनां चित लावै रे।
मूंवां मुकति बैकुंठा बासा, जीवत इहाँ जस पावै रे।। 2।।
हम अपराधी नीच घरि जनमे, कुटंब लोग करैं हासी रे।
कहै रैदास नाम जपि रसनीं, काटै जंम की पासी रे।। 3।।

85.

।। राग विलावल।।
तू जानत मैं किछु नहीं भव खंडन राम।
सगल जीअ सरनागति प्रभ पूरन काम।। टेक।।
दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी।
असटदसा सिधि कर तलै सभ क्रिया तुमारी।। 1।।
जो तेरी सरनागता तिन नाही भारू।
ऊँच नीच तुमते तरे आलजु संसारू।। 2।।
कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करी जै।
जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै।। 3।।

86.

।। राग विलावल।।
जिह कुल साधु बैसनो होइ।
बरन अबरन रंकु नहीं ईसरू बिमल बासु जानी ऐ जगि सोइ।। टेक।।
ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ।
होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ।। 1।।
धंनि सु गाउ धंनि सो ठाउ धंनि पुनीत कुटंब सभ लोइ।
जिनि पीआ सार रसु तजे आन रस होइ रस मगन डारे बिखु खोइ।। 2।।
पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबरि अउरु न कोइ।
जैसे पुरैन पात रहै जल समीप भनि रविदास जनमें जगि ओइ।। 3।।

87.

।। राग विलावल।।
गोबिंदे तुम्हारे से समाधि लागी।
उर भुअंग भस्म अंग संतत बैरागी।। टेक।।

जाके तीन नैन अमृत बैन, सीसा जटाधारी, कोटि कलप ध्यान अलप, मदन अंतकारी।। 1।।

जाके लील बरन अकल ब्रह्म, गले रुण्डमाला, प्रेम मगन फिरता नगन, संग सखा बाला।। 2।।

अस महेश बिकट भेस, अजहूँ दरस आसा, कैसे राम मिलौं तोहि, गावै रैदासा।। 3।।

88.

।। राग विलावल।।
नहीं बिश्रांम लहूँ धरनींधर।
जाकै सुर नर संत सरन अभिअंतर।। टेक।।
जहाँ जहाँ गयौ, तहाँ जनम काछै, तृबिधि ताप तृ भुवनपति पाछै।। 1।।
भये अति छीन खेद माया बस, जस तिन ताप पर नगरि हतै तस।। 2।।
द्वारैं न दसा बिकट बिष कारंन, भूलि पर्यौ मन या बिष्या बन।। 3।।
कहै रैदास सुमिरौ बड़ राजा, काटि दिये जन साहिब लाजा।। 4।।

89.

।। राग भैरूँ (भैरव)।।
भेष लियो पै भेद न जान्यो।
अमृत लेई विषै सो मान्यो।। टेक।।
काम क्रोध में जनम गँवायो, साधु सँगति मिलि राम न गायो।। 1।।
तिलक दियो पै तपनि न जाई, माला पहिरे घनेरी लाई।। 2।।
कह रैदास परम जो पाऊँ, देव निरंजन सत कर ध्याऊँ।। 3।।

90.

।। राग भैरूँ।।।
ऐसा ध्यान धरूँ बनवारी।
मन पवन दिढ सुषमन नारी।। टेक।।
सो जप जपूँ जु बहुरि न जपनां, सो तप तपूं जु बहुरि न तपनां।
सो गुर करौं जु बहुरि न करनां, ऐसे मरूँ जैसे बहुरि न मरनां।। 1।।
उलटी गंग जमुन मैं ल्याऊँ, बिन हीं जल संजम कै आंऊँ।

लोचन भरि भरि ब्यंव निहारूँ, जोति बिचारि न और बिचारूँ।। 2।।
प्यंड परै जीव जिस घरि जाता, सबद अतीत अनाहद राता।
जा परि कृपा सोई भल जानै, गूंगो सा कर कहा बखानैं।। 3।।
सुंनि मंडल मैं मेरा बासा, ताथैं जीव मैं रहूँ उदासा।
कहै रैदास निरंजन ध्याऊँ, जिस धरि जांऊँ (जब) बहुरि न आंऊँ।। 4।।

91.

।। राग भैरूँ।।
अबिगत नाथ निरंजन देवा।
मैं का जांनूं तुम्हारी सेवा।। टेक।।
बांधू न बंधन छांऊँ न छाया, तुमहीं सेऊँ निरंजन राया।। 1।।
चरन पताल सीस असमांना, सो ठाकुर कैसैं संपटि समांना।। 2।।
सिव सनिकादिक अंत न पाया, खोजत ब्रह्मा जनम गवाया।। 3।।
तोडूँ न पाती पूजौं न देवा, सहज समाधि करौं हरि सेवा।। 4।।
नख प्रसेद जाकै सुरसुरी धारा, रोमावली अठारह भारा।। 5।।
चारि बेद जाकै सुमृत सासा, भगति हेत गावै रैदासा।। 6।।

92.

।। राग टोड़ी।।
पांवन जस माधो तोरा।
तुम्ह दारन अध मोचन मोरा।। टेक।।
कीरति तेरी पाप बिनासै, लोक बेद यूँ गावै।
जो हम पाप करत नहीं भूधर, तौ तू कहा नसावै।। 1।।
जब लग अंग पंक नहीं परसै, तौ जल कहा पखालै।
मन मलन बिषिया रंस लंपट, तौ हरि नांउ संभालै।। 2।।
जौ हम बिमल हिरदै चित अंतरि, दोस कवन परि धरि हौ।
कहै रैदास प्रभु तुम्ह दयाल हौ, अबंध मुकति कब करि हौ।। 3।।

93.

।। राग गुंड।।
आज नां द्यौस नां ल्यौ बलिहारा।
मेरे ग्रिह आया राजा रांम जी का प्यारा।। टेक।।

आंगण बठाड़ भवन भयौ पांवन, हरिजन बैठे हरि जस गावन।। 1।।
करूँ डंडौत चरन पखालूँ, तन मन धंन उन ऊपरि वारौं।। 2।।
कथा कहै अरु अरथ बिचारै, आपन तिरैं और कूँ तारैं।। 3।।
कहै रैदास मिले निज दास, जनम जनम के कटे पास।। 4।।

94.

।। राग जैतश्री।।
सब कछु करत न कहु कछु कैसैं।
गुन बिधि बहुत रहत ससि जैसें।। टेक।।
द्रपन गगन अनींल अलेप जस, गंध जलध प्रतिब्यंबं देखि तस।। 1।।
सब आरंभ अकांम अनेहा, विधि नषेध कीयौ अनकेहा।। 2।।
इहि पद कहत सुनत नहीं आवै, कहै रैदास सुकृत को पावै।। 3।।

95.

।। राग सारंग।।
जग मैं बेद बैद मांनी जें।
इनमैं और अंगद कछु औरे, कहौ कवन परिकीजै।। टेक।।
भौ जल ब्याधि असाधिअ प्रबल अति, परम पंथ न गही जै।
पढ़ैं गुनैं कछू समझि न परई, अनभै पद न लही जै।। 1।।
चखि बिहूंन कतार चलत हैं, तिनहूँ अंस भुज दीजै।
कहै रैदास बमेक तत बिन, सब मिलि नरक परी जै।। 2।।

96.

।। राग कानड़ा।।
चलि मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ।। टेक।।
गुरु की साटि ग्यांन का अखिर, बिसरै तौ सहज समाधि लगाऊँ।। 1।।
प्रेम की पाटी सुरति की लेखनी करिहूं, ररौ ममौ लिखि आंक दिखांऊँ।। 2।।
इहिं बिधि मुक्ति भये सनकादिक, रिदौ बिदारि प्रकास दिखाऊँ।। 3।।
कागद कैवल मति मसि करि नृमल, बिन रसना निसदिन गुण गाऊँ।। 4।।
कहै रैदास राम जपि भाई, संत साखि दे बहुरि न आऊँ।। 5।।

97.

।। राग कानड़ा।।
माया मोहिला कान्ह।
मैं जन सेवग तोरा।। टेक।।
संसार परपंच मैं ब्याकुल परमांनंदा।
त्रहि त्रहि अनाथ नाथ गोब्यंदा।। 1।।
रैदास बिनवैं कर जोरी।
अबिगत नाथ कवन गति मोरी।। 2।।

98.

।। राग केदारौ।।
कहि मन रांम नांम संभारि।
माया कै भ्रमि कहा भूलौ, जांहिगौ कर झारि।। टेक।।
देख धूँ इहाँ कौन तेरौ, सगा सुत नहीं नारि।
तोरि तंग सब दूरि करि हैं, दैहिंगे तन जारि।। 1।।
प्रान गयैं कहु कौंन तेरौ, देख सोचि बिचारि।
बहुरि इहि कल काल मांही, जीति भावै हारि।। 2।।
यहु माया सब थोथरी, भगति दिसि प्रतिपारि।
कहि रैदास सत बचन गुर के, सो जीय थैं न बिसारि।। 3।।

99.

।। राग केदारौ।।
हरि को टाँडौ लादे जाइ रे।
मैं बनिजारौ रांम कौ।।
रांम नांम धंन पायौ, ताथैं सहजि करौं ब्यौपार रे।। टेक।।
औघट घाट घनो घनां रे, त्रिगुण बैल हमार।
रांम नांम हम लादियौ, ताथैं विष लाद्यौ संसार रे।। 1।।
अनतहि धरती धन धर्यौ रे, अनतहि ढूँढ़न जाइ।
अनत कौ धर्यौ न पाइयैं, ताथैं चाल्यौ मूल गँवाइ रे।। 2।।
रैनि गँवाई सोइ करि, द्यौस गँवायो खाइ।
हीरा यहु तन पाइ करि, कौड़ी बदलै जाइ रे।। 3।।

साध संगति पूँजी भई रे, बस्त लई न्रिमोल।
सहजि बलदवा लादि करि, चहुँ दिसि टाँडो मेल रे।। 4।।
जैसा रंग कसूंभं का रे, तैसा यहु संसार।
रमइया रंग मजीठ का, ताथैं भणैं रैदास बिचार रे।। 5।।

100.

।। राग केदारा।।
प्रीति सधारन आव।
तेज सरूपी सकल सिरोमनि, अकल निरंजन राव।। टेक।।
पीव संगि प्रेम कबहूं नहीं पायौ, कारनि कौण बिसारी।
चक को ध्यान दधिसुत कौं होत है, त्यूँ तुम्ह थैं मैं न्यारी।। 1।।
भोर भयौ मोहिं इकटग जोवत, तलपत रजनी जाइ।
पिय बिन सेज क्यूँ सुख सोऊँ, बिरह बिथा तनि माइ।। 2।।
दुहागनि सुहागनि कीजै, अपनैं अंग लगाई।
कहै रैदास प्रभु तुम्हरै बिछोहै, येक पल जुग भरि जाइ।। 3।।

101.

।। राग केदारा।।
दरसन दीजै राम दरसन दीजै।
दरसन दीजै हो बिलंब न कीजै।। टेक।।
दरसन तोरा जीवनि मोरा, बिन दरसन का जीवै हो चकोरा।। 1।।
माधौ सतगुर सब जग चेला, इब कै बिछुरै मिलन दुहेला।। 2।।
तन धन जोबन झूठी आसा, सति सति भाखै जन रैदासा।। 3।।

102.

।। राग सूही।।
सो कत जानै पीर पराई।
जाकै अंतरि दरदु न पाई।। टेक।।
सह की सार सुहागनी जानै। तजि अभिमानु सुख रलीआ मानै।
तनु मनु देइ न अंतः राखै। अवरा देखि न सुनै अभाखै।। 1।।
दुखी दुहागनि दुइ पख हीनी। जिनि नाह निरंतहि भगति न कीनी।

पुरसलात का पंथु दुहेला। संग न साथी गवनु इकेला।। 2।।
दुखीआ दरदवंदु दरि आइआ। बहुतु पिआस जबाबु न पाइआ।
कहि रविदास सरनि प्रभु तेरी। जिय जानहु तिउ करु गति मेरी।। 3।।

103.

।। राग सूही।।
इहि तनु ऐसा जैसे घास की टाटी।
जलि गइओ घासु रलि गइओ माटी।। टेक।।
ऊँचे मंदर साल रसोई। एक घरी फुनी रहनु न होई।। 1।।
भाई बंध कुटंब सहेरा। ओइ भी लागे काढु सवेरा।। 2।।
घर की नारि उरहि तन लागी। उह तउ भूतु करि भागी।। 3।।
कहि रविदास सभै जग लूटिआ। हम तउ एक राम कहि छूटिआ।। 4।।

104.

।। राग मारू।।
ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै।
गरीब निवाजु गुसईआ मेरा माथै छत्रु धरै।। टेक।।
जाकी छोति जगत कउ लागै ता पर तु हीं ढरै।
नीचह ऊँच करै मेरा गोबिंदु काहू ते न डरै।। 1।।
नामदेव कबीर तिलोचनु सधना सैनु तरै।
कहि रविदासु सुनहु रे संतहि हरि जीउ ते सभै सरै।। 2।।

105.

।। राग मारू।।
हरि हरि हरि न जपसि रसना।
अवर सभ छाड़ि बचन रचना।। टेक।।
सुध सागर सुरितरु चिंतामनि कामधैन बसि जाके रे।
चारि पदारथ असट महा सिधि नव निधि करतल ताकै।। 1।।
नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अछर माही।
बिआस बीचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही।। 2।।

सहज समाधि उपाधि रहत होइ उड़े भागि लिव लागी।
कहि रविदास उदास दास मतित जनम मरन भै भागी।। 3।।

106.

।। राग बसंत।।
तू कांइ गरबहि बावली।
जैसे भादउ खूंब राजु तू तिस ते खरी उतावली।। टेक।।
तुझहि सुझंता कछू नाहि। पहिरावा देखे ऊभि जाहि।
गरबवती का नाही ठाउ। तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ।। 1।।
जैसे कुरंक नहीं पाइओ भेदु। तनि सुगंध ढूढ़ै प्रदेसु।
अप तन का जो करे बीचारू। तिसु नहीं जम कंकरू करे खुआरू।। 2।।
पुत्र कलत्र का करहि अहंकारू। ठाकुर लेखा मगनहारू।
फेड़े का दुखु सहै जीउ। पाछे किसहि पुकारहि पीउ-पीउ।। 3।।
साधू की जउ लेहि ओट। तेरे मिटहि पाप सभ कोटि-कोटि।
कहि रविदास जो जपै नामु। तिस जातु न जनमु न जोनि कामु।। 4।।

107.

।। राग मल्हार।।
हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति तास समतुलि नहीं आन कोऊ।
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ आन रे आन भरपूरि सोऊ।। टेक।।
जा कै भागवतु लेखी ऐ अवरु नहीं पेखीऐ तास की जाति आछोप छीपा।
बिआस महि लेखी ऐ सनक महि पेखी ऐ नाम की नामना सपत दीपा।। 1।।

जा कै ईदि बकरीदि कुल गऊ रे वधु करहि मानी अहि सेख सहीद पीरा।
जा कै बाप वैसी करी पूत ऐसी सरी तिहू रे लोक परसिध कबीरा।। 2।।
जा के कुटंब के ढेढ सभ ढोर ढोवंत फिरहि अजहु बंनारसी आस पासा।
आचार सहित विप्र करहि डंडउति तिन तनै रविदास दासानुदासा।। 3।।

108.

।। राग मल्हार।।
मिलत पिआरों प्रान नाथु कवन भगति ते।
साध संगति पाइ परम गते।। टेक।।

मैले कपरे कहा लउ धोवउ, आवैगी नीद कहा लगु सोवउ।। 1।।
जोई जोई जोरिओ सोई-सोई फाटिओ।
झूठै बनजि उठि ही गई हाटिओ।। 2।।
कहु रविदास भइयो जब लेखो।
जोई जोई कीनो सोई-सोई देखिओ।। 3।।

109.

।। राग गौड़।।
ऐसे जानि जपो रे जीव।
जपि ल्यो राम न भरमो जीव।। टेक।।
गनिका थी किस करमा जोग, परपूरुष सो रमती भोग।। 1।।
निसि बासर दुस्करम कमाई, राम कहत बैकुंठ जाई।। 2।।
नामदेव कहिए जाति कै ओछ, जाको जस गावै लोक।। 3।।
भगति हेत भगता के चले, अंकमाल ले बीठल मिले।। 4।।
कोटि जग्य जो कोई करै, राम नाम सम तउ न निस्तरै।। 5।।
निरगुन का गुन देखो आई, देही सहित कबीर सिधाई।। 6।।
मोर कुचिल जाति कुचिल में बास, भगति हेतु हरिचरन निवास।। 7।।
चारिउ बेद किया खंडौति, जन रैदास करै डंडौति।। 8।।

2

रैदास जीवन परिचय

रैदास अथवा संत रविदास कबीर के समसामयिक कहे जाते हैं। मध्ययुगीन संतों में रैदास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अत: इनका समय सन् 1398 से 1518 ई. के आस पास का रहा होगा। अंत: साक्ष्य के आधार पर रैदास का चर्मकार जाति का होना सिद्ध होता है।

जीवन परिचय

संत रैदास काशी के रहने वाले थे। इन्हें रामानन्द का शिष्य माना जाता है परंतु अंतरूसाक्ष्य के किसी भी स्त्रोत से रैदास का रामानन्द का शिष्य होना सिद्ध नहीं होता। इनके अतिरिक्त रैदास की कबीर से भी भेंट की अनेक कथाएँ प्रसिद्ध हैं परंतु उनकी प्रामाणिकता सन्दिग्ध है। नाभादास कृत 'भक्तमालश में रैदास के स्वभाव और उनकी चारित्रिक उच्चता का प्रतिपादन मिलता है। प्रियादास कृत 'भक्तमाल' की टीका के अनुसार चित्तौड़ की 'झालारानी' उनकी शिष्या थीं, जो महाराणा सांगा की पत्नी थीं। इस दृष्टि से रैदास का समय सन् 1482-1527 ई. (सं. 1539-1584 वि.) अर्थात विक्रम की सोलहवीं शती के अंत तक चला जाता है। कुछ लोगों का अनुमान कि यह चित्तौड़ की रानी मीराबाई ही थीं और उन्होंने रैदास का शिष्यत्व ग्रहण किया था। मीरा ने अपने अनेक पदों में रैदास का गुरु रूप में स्मरण किया है -

'गुरु रैदास मिले मोहि पूरे, धुरसे कलम भिड़ी।
सत गुरु सैन दई जब आके जोत रली।'

रैदास ने अपने पूर्ववर्ती और समसामायिक भक्तों के सम्बन्ध में लिखा है। उनके निर्देश से ज्ञात होता है कि कबीर की मृत्यु उनके सामने ही हो गयी थी। रैदास की अवस्था 120 वर्ष की मानी जाती है।

जन्म

मध्ययुगीन संतों में प्रसिद्ध रैदास के जन्म के संबंध में प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। कुछ विद्वान् काशी में जन्मे रैदास का समय 1482–1527 ई. के बीच मानते हैं। रैदास का जन्म काशी में चर्मकार कुल में हुआ था। उनके पिता का नाम श्रग्घु' और माता का नाम 'घुरविनिया' बताया जाता है। रैदास ने साधु-सन्तों की संगति से पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किया था। जूते बनाने का काम उनका पैतृक व्यवसाय था और उन्होंने इसे सहर्ष अपनाया। वह अपना काम पूरी लगन तथा परिश्रम से करते थे और समय से काम को पूरा करने पर बहुत ध्यान देते थे। उनकी समयानुपालन की प्रवृत्ति तथा मधुर व्यवहार के कारण उनके सम्पर्क में आने वाले लोग भी बहुत प्रसन्न रहते थे।

संत रविदास का जन्म भारत के यूपी के वाराणसी शहर में माता कालसा देवी और बाबा संतोख दास जी के घर 15 वीं शताब्दी में हुआ था। हालाँकि, उनके जन्म की तारीख को लेकर विवाद भी है क्योंकि कुछ का मानना है कि ये 1376, 1377 और कुछ का कहना है कि ये 1399 सीइ में हुआ था। कुछ अध्येता के आँकड़ों के अनुसार ऐसा अनुमान लगाया गया था कि रविदास का पूरा जीवन काल 15वीं से 16वीं शताब्दी सीइ में 1450 से 1520 के बीच तक रहा।

रविदास के पिता मल साम्राज्य के राजा नगर के सरपंच थे और खुद जूतों का व्यापार और उसकी मरम्मत का कार्य करते थे। अपने बचपन से ही रविदास बेहद बहादुर और ईश्वर के बहुत बड़े भक्त थे लेकिन बाद में उन्हें उच्च जाति के द्वारा उत्पन्न भेदभाव की वजह से बहुत संघर्ष करना पड़ा जिसका उन्होंने सामना किया और अपने लेखन के द्वारा रविदास ने लोगों को जीवन के इस तथ्य से अवगत करवाया। उन्होंने हमेशा लोगों को सिखाया कि अपने पड़ोसियों को बिना भेद-भेदभाव के प्यार करो।

पूरी दुनिया में भाईचारा और शांति की स्थापना के साथ ही उनके अनुयायीयों को दी गयी महान शिक्षा को याद करने के लिये भी संत रविदास का जन्म दिवस का मनाया जाता है। अपने अध्यापन के आरंभिक दिनों में काशी में रहने वाले रुढ़ीवादी ब्राह्मणों के द्वारा उनकी प्रसिद्धि को हमेशा रोका जाता था क्योंकि संत रविदास अस्पृश्यता के भी गुरु थे। सामाजिक व्यवस्था को खराब करने के लिये राजा के सामने लोगों द्वारा उनकी शिकायत की गयी थी। रविदास को भगवान के बारे में बात करने से, साथ ही उनका अनुसरण करने वाले लोगों को अध्यापन और सलाह देने के लिये भी प्रतिबंधित किया गया था।

रविदास की प्रारंभिक शिक्षा

बचपन में संत रविदास अपने गुरु पंडित शारदा नंद के पाठशाला गये जिनको बाद में कुछ उच्च जाति के लोगों द्वारा रोका किया गया था वहाँ दाखिला लेने से। हालाँकि पंडित शारदा ने यह महसूस किया कि रविदास कोई सामान्य बालक न होकर एक ईश्वर के द्वारा भेजी गयी संतान है अतः पंडित शारदानंद ने रविदास को अपनी पाठशाला में दाखिला दिया और उनकी शिक्षा की शुरुआत हुयी। वो बहुत ही तेज और होनहार थे और अपने गुरु के सिखाने से ज्यादा प्राप्त करते थे। पंडित शारदा नंद उनसे और उनके व्यवहार से बहुत प्रभावित रहते थे उनका विचार था कि एक दिन रविदास आध्यात्मिक रुप से प्रबुद्ध और महान सामाजिक सुधारक के रुप में जाने जायेंगे।

पाठशाला में पढ़ने के दौरान रविदास पंडित शारदानंद के पुत्र के मित्र बन गये। एक दिन दोनों लोग एक साथ लुका-छिपी खेल रहे थे, पहली बार रविदास जी जीते और दूसरी बार उनके मित्र की जीत हुयी। अगली बार, रविदास जी की बारी थी लेकिन अंधेरा होने की वजह से वो लोग खेल को पूरा नहीं कर सके उसके बाद दोनों ने खेल को अगले दिन सुबह जारी रखने का फैसला किया। अगली सुबह रविदास जी तो आये लेकिन उनके मित्र नहीं आये। वो लंबे समय तक इंतजार करने के बाद अपने उसी मित्र के घर गये और देखा कि उनके मित्र के माता-पिता और पड़ोसी रो रहे थे।

उन्होंने उन्हीं में से एक से इसका कारण पूछा और अपने मित्र की मौत की खबर सुनकर हक्का-बक्का रह गये। उसके बाद उनके गुरु ने संत रविदास को अपने बेटे के लाश के स्थान पर पहुँचाया, वहाँ पहुँचने पर रविदास ने अपने मित्र से कहा कि उठो ये सोने का समय नहीं है दोस्त, ये तो लुका-छिपी खेलने

का समय है। जैसै कि जन्म से ही गुरु रविदास दैवीय शक्तियों से समृद्ध थे, रविदास के ये शब्द सुनते ही उनके मित्र फिर से जी उठे। इस आश्चर्यजनक पल को देखने के बाद उनके माता-पिता और पड़ोसी चकित रह गये।

वैवाहिक जीवन

भगवान के प्रति उनके प्यार और भक्ति की वजह से वो अपने पेशेवर पारिवारिक व्यवसाय से नहीं जुड़ पा रहे थे और ये उनके माता-पिता की चिंता का बड़ा कारण था। अपने पारिवारिक व्यवसाय से जुड़ने के लिये इनके माता-पिता ने इनका विवाह काफी कम उम्र में ही श्रीमती लोना देवी से कर दिया जिसके बाद रविदास को पुत्र रत्न की प्रति हुयी जिसका नाम विजयदास पड़ा।

शादी के बाद भी संत रविदास सांसारिक मोह की वजह से पूरी तरह से अपने पारिवारिक व्यवसाय के ऊपर ध्यान नहीं दे पा रहे थे। उनके इस व्यवहार से क्षुब्द होकर उनके पिता ने सांसारिक जीवन को निभाने के लिये बिना किसी मदद के उनको खुद से और पारिवारिक संपत्ति से अलग कर दिया। इस घटना के बाद रविदास अपने ही घर के पीछे रहने लगे और पूरी तरह से अपनी सामाजिक मामलों से जुड़ गये।

बाद का जीवन

बाद में रविदास जी भगवान राम के विभिन्न स्वरुप राम, रघुनाथ, राजा राम चन्द्र, कृष्णा, गोविन्द आदि के नामों का इस्तेमाल अपनी भावनाओं को उजागर करने के लिये करने लगे और उनके महान अनुयायी बन गये।

बेगमपुरा शहर से उनके संबंध

बिना किसी दुख के शांति और इंसानियत के साथ एक शहर के रुप में गुरु रविदास जी द्वारा बेगमपुरा शहर को बसाया गया। अपनी कविताओं को लिखने के दौरान रविदास जी द्वारा बेगमपुरा शहर को एक आदर्श के रुप में प्रस्तुत किया गया था जहाँ पर उन्होंने बताया कि एक ऐसा शहर जो बिना किसी दुख, दर्द या डर के और एक जमीन है जहाँ सभी लोग बिना किसी भेदभाव, गराबी और जाति अपमान के रहते है। एक ऐसी जगह जहाँ कोई शुल्क नहीं देता, कोई भय, चिंता या प्रताड़ना नहीं हो।

मीरा बाई से उनका जुड़ाव

संत रविदास जी को मीरा बाई के आध्यात्मिक गुरु के रुप में माना जाता है, जो कि राजस्थान के राजा की पुत्री और चित्तौड़ की रानी थी। वो संत रविदास के अध्यापन से बेहद प्रभावित थी और उनकी बहुत बड़ी अनुयायी बनी। अपने गुरु के सम्मान में मीरा बाई ने कुछ पंक्तियाँ लिखी है–

"गुरु मिलीया रविदास जी–"।

वो अपने माता–पिता की एक मात्र संतान थी जो बाद में चितौड़ की रानी बनी। मीरा बाई ने बचपन में ही अपनी माँ को खो दिया जिसके बाद वो अपने दादा जी के संरक्षण में आ गयी जो कि रविदास जी के अनुयायी थे। वो अपने दादा जी के साथ कई बार गुरु रविदास से मिली और उनसे काफी प्रभावित हुयी। अपने विवाह के बाद, उन्हें और उनके पति को गुरु जी से आशीर्वाद प्राप्त हुआ। बाद में मीराबाई ने अपने पति और ससुराल पक्ष के लोगों की सहमति से गुरु जी को अपने वास्तविक गुरु के रुप में स्वीकार किया। इसके बाद उन्होंने गुरु जी के सभी धर्मों के उपदेशों को सुनना शुरु कर दिया जिसने उनके ऊपर गहरा प्रभाव छोड़ा और वो प्रभु भक्ति की ओर आकर्षित हो गयी। कृष्ण प्रेम में डूबी मीराबाई भक्ति गीत गाने लगी और दैवीय शक्ति का गुणगान करने लगी।

अपने गीतों में वो कुछ इस तरह कहती थी–

"गुरु मिलीया रविदास जी दीनी ज्ञान की गुटकी,
चोट लगी निजनाम हरी की महारे हिवरे खटकी"।

दिनों–दिन वो ध्यान की ओर आकर्षित हो रही थी और वो अब संतों के साथ रहने लगी थी। उनके पति की मृत्यु के बाद उनके देवर और ससुराल के लोग उन्हें देखने आये लेकिन वो उन लोगों के सामने बिल्कुल भी व्यग्र और नरम नहीं पड़ी। बल्कि उन्हें तो आधी रात को उन लोगों के द्वारा गंभीरी नदी में फेंक दिया गया था लेकिन गुरु रविदास जी के आशीर्वाद से वो बच गयी।

एक बार अपने देवर के द्वारा दिये गये जहरीले दूध को गुरु जी द्वारा अमृत मान कर पी गयी और खुद को धन्य समझा। उन्होंने कहा कि–

"विष को प्याला राना जी पिलाय द्यो
मेरथानी ने पाये
कर चरणामित् पी गयी रे,
गुण गोविन्द गाये"।

संत रविदास के जीवन की कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ

एक बार गुरु जी के कुछ विद्यार्थी और अनुयायी ने पवित्र नदी गंगा में स्नान के लिये पूछा तो उन्होंने ये कह कर मना किया कि उन्होंने पहले से ही अपने एक ग्राहक को जूता देने का वादा कर दिया है तो अब वही उनकी प्राथमिक जिम्मेदारी है। रविदास जी के एक विद्यार्थी ने उनसे दुबारा निवेदन किया तब उन्होंने कहा उनका मानना है कि "मन चंगा तो कठौती में गंगा" मतलब शरीर को आत्मा से पवित्र होने की जरुरत है ना कि किसी पवित्र नदी में नहाने से, अगर हमारी आत्मा और हृदय शुद्ध है तो हम पूरी तरह से पवित्र है चाहे हम घर में ही क्यों न नहाये।

एक बार उन्होंने अपने एक ब्राहमण मित्र की रक्षा एक भूखे शेर से की थी जिसके बाद वो दोनों गहरे साथी बन गये। हालाँकि दूसरे ब्राहमण लोग इस दोस्ती से जलते थे सो उन्होंने इस बात की शिकायत राजा से कर दी। रविदास जी के उस ब्राहमण मित्र को राजा ने अपने दरबार में बुलाया और भूखे शेर द्वारा मार डालने का हुक्म दिया। शेर जल्दी से उस ब्राहमण लड़के को मारने के लिये आया लेकिन गुरु रविदास को उस लड़के को बचाने के लिये खड़े देख शेर थोड़ा शांत हुआ। शेर वहाँ से चला गया और गुरु रविदास अपने मित्र को अपने घर ले गये। इस बात से राजा और ब्राह्मण लोग बेहद शर्मिंदा हुये और वो सभी गुरु रविदास के अनुयायी बन गये।

सामाजिक मुद्दों में गुरु रविदास की सहभागिता

वास्तविक धर्म को बचाने के लिये रविदास जी को ईश्वर द्वारा धरती पर भेजा गया था क्योंकि उस समय सामाजिक और धार्मिक स्वरुप बेहद दुरूखद था। क्योंकि इंसानों द्वारा ही इंसानों के लिये ही रंग, जाति, धर्म तथा सामाजिक मान्यताओं का भेदभाव किया जा चुका था। वो बहुत ही बहादुरी के साथ सभी भेदभाव को स्वीकार करते और लोगों को वास्तविक मान्यताओं और जाति के बारे में बताते। वो लोगों को सिखाते कि कोई भी अपने जाति या धर्म के लिये नहीं जाना जाता, इंसान अपने कर्म से पहचाना जाता है। गुरु रविदास जी समाज में अस्पृश्यता के खिलाफ भी लड़े जो उच्च जाति द्वारा निम्न जाति के लोगों के साथ किया जाता था।

उनके समय में निम्न जाति के लोगों की उपेक्षा होती थी, वो समाज में उच्च जाति के लोगों की तरह दिन में कहीं भी आ-जा नहीं सकते थे,

उनके बच्चे स्कूलों में पढ़ नहीं सकते थे, मंदिरों में नहीं जा सकते थे, उन्हें पक्के मकान के बजाय सिर्फ झोपड़ियों में ही रहने की आजादी थी और भी ऐसे कई प्रतिबंध थे जो बिल्कुल अनुचित थे। इस तरह की सामाजिक समयस्याओं को देखकर गुरु जी ने निम्न जाति के लोगों की बुरी परिस्थिति को हमेशा के लिये दूर करने के लिये हर एक को आध्यात्मिक संदेश देना शुरु कर दिया।

उन्होंने लोगों को संदेश दिया कि "ईश्वर ने इंसान बनाया है न कि इंसान ने ईश्वर बनाया है" अर्थात इस धरती पर सभी को भगवान ने बनाया है और सभी के अधिकार समान है। इस सामाजिक परिस्थिति के संदर्भ में, संत गुरु रविदास जी ने लोगों को वैश्विक भाईचारा और सहिष्णुता का ज्ञान दिया। गुरुजी के अध्यापन से प्रभावित होकर चितौड़ साम्राज्य के राजा और रानी उनके अनुयायी बन गये।

सिक्ख धर्म के लिये गुरु जी का योगदान

सिक्ख धर्मग्रंथ में उनके पद, भक्ति गीत, और दूसरे लेखन (41 पद) आदि दिये गये थे, गुरु ग्रंथ साहिब जो कि पाँचवें सिक्ख गुरु अर्जन देव द्वारा संकलित की गयी। सामान्यत: रविदास जी के अध्यापन के अनुयायी को रविदासीया कहा जाता है और रविदासीया के समूह को अध्यापन को रविदासीया पंथ कहा जाता है।

गुरु ग्रंथ साहिब में उनके द्वारा लिखा गया 41 पवित्र लेख है, जो इस प्रकार है, "रागा-सिरी(1), गौरी(5), असा(6), गुजारी(1), सोरथ(7), धनसरी(3), जैतसारी(1), सुही(3), बिलावल(2), गौंड(2), रामकली(1), मारु(2), केदारा(1), भाईरऊ(1), बसंत(1), और मलहार(3)"।

ईश्वर के द्वारा उनकी महानता की जाँच की गयी थी

वो अपने समय के महान संत थे और एक आम व्यक्ति की तरह जीवन को जीने की वरीयता देते है। कई बड़े राजा-रानियों और दूसरे समृद्ध लोग उनके बड़े अनुयायी थे लेकिन वो किसी से भी किसी प्रकार का धन या उपहार नहीं स्वीकारते थे। एक दिन भगवान के द्वारा उनके अंदर एक आम इंसान के लालच को परखा गया, एक दर्शनशास्त्री गुरु रविदास जी के पास एक पत्थर ले कर आये और उसके बारे में आश्चर्यजनक बात बतायी कि ये किसी भी लोहे को सोने में बदल सकता सकता है। उस दर्शनशास्त्री ने गुरु रविदास को उस पत्थर

को लेने के लिये दबाव दिया और साधारण झोपड़े की जगह बड़ी-बड़ी इमारतें बनाने को कहा। लेकिन उन्होंने ऐसा करने से मना कर दिया।

उस दर्शनशास्त्री ने फिर से उस पत्थर को रखने के लिये गुरुजी पर दबाव डाला और कहा कि मैं इसे लौटते वक्त वापस ले लूँगा साथ ही इसको अपनी झोपड़ी के किसी खास जगह पर रखने को कहा। गुरु जी ने उसकी ये बात मान ली। वो दर्शनशास्त्री कई वर्षों बाद लौटा तो पाया कि वो पत्थर उसी तरह रखा हुआ है। गुरुजी के इस अटलता और धन के प्रति इस विकर्षणता से वो बहुत खुश हुए। उन्होंने वो कीमती पत्थर लिया और वहाँ से गायब हो गये। गुरु रविदास ने हमेशा अपने अनुयायियों को सिखाया कि कभी धन के लिये लालची मत बनो, धन कभी स्थायी नहीं होता, इसके बजाय आजीविका के लिये कड़ी मेहनत करो।

एक बार जब उनको और दूसरे दलितों को पूजा करने के जुर्म में काशी नरेश के द्वारा उनके दरबार में कुछ ब्राह्मणों की शिकायत पर बुलाया गया था, तो ये ही वो व्यक्ति थे जिन्होंने सभी गैरजरुरी धार्मिक संस्कारों को हटाने के द्वारा पूजा की प्रकिया को आसान बना दिया। संत रविदास को राजा के दरबार में प्रस्तुत किया गया जहाँ गुरुजी और पंडित पुजारी से फैसले वाले दिन अपने-अपने इष्ट देव की मूर्ति को गंगा नदी के घाट पर लाने को कहा गया।

राजा ने ये घोषणा की कि अगर किसी एक की मूर्ति नदी में तैरेगी तो वो सच्चा पुजारी होगा अन्यथा झूठा होगा। दोनों गंगा नदी के किनारे घाट पर पहुँचे और राजा की घोषणा के अनुसार कार्य करने लगे। ब्राह्मण द्वारा हल्के भार वाली सूती कपड़े में लपेटी हुयी भगवान की मूर्ति लायी गई थी वहीं संत रविदास द्वारा 40 कि.ग्रा की चौकोर आकार की मूर्ति ले आयी गई थी। राजा के समक्ष गंगा नदी के राजघाट पर इस कार्यक्रम को देखने के लिये बहुत बड़ी भीड़ उमड़ी थी।

पहला मौका ब्राह्मण पुजारी को दिया गया, पुजारी जी ने ढ़ेर सारे मंत्र-उच्चारण के साथ मूर्ति को गंगा जी ने प्रवाहित किया लेकिन वह गहरे पानी में डूब गयी। उसी तरह दूसरा मौका संत रविदास का आया, गुरु जी ने मूर्ति को अपने कंधों पर लिया और शिष्टता के साथ उसे पानी में रख दिया जो कि पानी की सतह पर तैरने लगा। इस प्रक्रिया के खत्म होने के बाद ये फैसला हुआ कि ब्राह्मण झूठा पुजारी था और गुरु रविदास सच्चे भक्त थे।

दलितों को पूजा के लिये मिले अधिकार से खुश होकर सभी लोग उनके पाँव को स्पर्श करने लगे। तब से, काशी नरेश और दूसरे लोग जो कि गुरु जी के खिलाफ थे, अब उनका सम्मान और अनुसरण करने लगे। उस खास खुशी के और विजयी पल को दरबार की दिवारों पर भविष्य के लिये सुनहरे अक्षरों से लिख दिया गया।

संत रविदास को कुष्ठरोग को ठीक करने के लिये प्राकृतिक शक्ति मिली हुई थी।

समाज में उनकी महान प्राकृतिक शक्तियों से भरी गजब की क्रिया के बाद ईश्वर के प्रति उनकी सच्चाई से प्रभावित होकर हर जाति और धर्म के लोगों पर उनका प्रभाव पड़ा और सभी गुरु जी के मजबूत विद्यार्थी, अनुयायी और भक्त बन गये। बहुत साल पहले उन्होंने अपने अनुयायीयों को उपदेश दिया था और तब एक धनी सेठ भी वहाँ पहुँचा मनुष्य के जन्म के महत्व के ऊपर धार्मिक उपदेश को सुनने के लिये।

धार्मिक उपदेश के अंत में गुरु जी ने सभी को प्रसाद के रूप में अपने मिट्टी के बर्तन से पवित्र पानी दिया। लोगों ने उसको ग्रहण किया और पीना शुरू किया हालाँकि धनी सेठ ने उस पानी को गंदा समझ कर अपने पीछे फेंक दिया जो बराबर रूप से उसके पैरों और जमीन पर गिर गया। वो अपने घर गया और उस कपड़े को कुष्ठ रोग से पीड़ित एक गरीब आदमी को दे दिया। उस कपड़े को पहनते ही उस आदमी के पूरे शरीर को आराम महसूस होने लगा जबकि उसके जख्म जल्दी भरने लगे और वो जल्दी ठीक हो गया।

हालाँकि धनी सेठ को कुष्ठ रोग हो गया जो कि महँगे उपचार और अनुभवी और योग्य वैद्य द्वारा भी ठीक नहीं हो सका। उसकी स्थिति दिनों-दिन बिगड़ती चली गयी तब उसे अपनी गलतियों का एहसास हुआ और वो गुरु जी के पास माफी माँगने के लिये गया और जख्मों को ठीक करने के लिये गुरु जी से वो पवित्र जल प्राप्त किया। चूँकि गुरु जी बेहद दयालु थे इसलिये उसको माफ करने के साथ ही ठीक होने का ढेर सारा आशीर्वाद भी दिया। अंततः वो धनी सेठ और उसका पूरा परिवार संत रविदास का भक्त हो गया।

संत रविदास का सकारात्मक नजरिया

उनके समय में शुद्रों (अस्पृश्य) को ब्राह्मणों की तरह जनेऊ, माथे पर तिलक और दूसरे धार्मिक संस्कारों की आजादी नहीं थी। संत रविदास एक महान

व्यक्ति थे जो समाज में अस्पृश्यों के बराबरी के अधिकार के लिये उन सभी निषेधों के खिलाफ थे जो उन पर रोक लगाती थी। उन्होंने वो सभी क्रियाएँ जैसे जनेऊ धारण करना, धोती पहनना, तिलक लगाना आदि निम्न जाति के लोगों के साथ शुरु किया जो उन पर प्रतिबंधित था।

ब्राह्मण लोग उनकी इस बात से नाराज थे और समाज में अस्पृश्यों के लिये ऐसे कार्यों को जाँचने का प्रयास किया। हालाँकि गुरु रविदास जी ने हर बुरी परिस्थिति का बहादुरी के साथ सामना किया और बेहद विनम्रता से लोगों का जवाब दिया। अस्पृश्य होने के बावजूद भी जनेऊ पहनने के कारण ब्राह्मणों की शिकायत पर उन्हें राजा के दरबार में बुलाया गया। वहाँ उपस्थित होकर उन्होंने कहा कि अस्पृश्यों को भी समाज में बराबरी का अधिकार मिलना चाहिये क्योंकि उनके शरीर में भी दूसरों की तरह खून का रंग लाल और पवित्र आत्मा होती है

संत रविदास ने तुरंत अपनी छाती पर एक गहरी चोट की और उस पर चार युग जैसे सतयुग, त्रेतायुग, द्वापर और कलयुग की तरह सोना, चाँदी, ताँबा और सूत के चार जनेऊ खींच दिये। राजा समेत सभी लोग अचंभित रह गये और गुरु जी के सम्मान में सभी उनके चरणों को छूने लगे। राजा को अपने बचपने जैसे व्यवहार पर बहुत शर्मिंदगी महसूस हुयी और उन्होंने इसके लिये माफी माँगी। गुरु जी ने सभी माफ करते हुए कहा कि जनेऊ धारण करने का ये मतलब नहीं कि कोई भगवान को प्राप्त कर लेता है। इस कार्य में वो केवल इसलिये शामिल हुए ताकि वो लोगों को वास्तविकता और सच्चाई बता सके। गुरु जी ने जनेऊ निकाला और राजा को दे दिया इसके बाद उन्होंने कभी जनेऊ और तिलक का इस्तेमाल नहीं किया।

कुंभ उत्सव पर एक कार्यक्रम

एक बार पंडित गंगा राम गुरु जी से मिले और उनका सम्मान किया। वो हरिद्वार में कुंभ उत्सव में जा रहे थे गुरु जी ने उनसे कहा कि ये सिक्का आप गंगा माता को दे दीजियेगा अगर वो इसे आपके हाथों से स्वीकार करें। पंडित जी ने बड़ी सहजता से इसे ले लिया और वहाँ से हरिद्वार चले गये। वो वहाँ पर नहाये और वापस अपने घर लौटने लगे बिना गुरु जी का सिक्का गंगा माता को दिये।

वो अपने रास्ते में थोड़ा कमजोर होकर बैठ गये और महसूस किया कि वो कुछ भूल रहे हैं, वो दुबारा से नदी के किनारे वापस गये और जोर से चिल्लाए माता, गंगा माँ पानी से बाहर निकली और उनके अपने हाथ से सिक्के को स्वीकार किया। माँ गंगा ने संत रविदास के लिये सोने के कँगन भेजे। पंडित गंगा राम घर वापस आये वो कँगन गुरु जी के बजाय अपनी पत्नी को दे दिया।

एक दिन पंडित जी की पत्नी उस कँगन को बाजार में बेचने के लिये गयी। सोनार चालाक था, सो उसने कँगन को राजा और राजा ने रानी को दिखाने का फैसला किया। रानी ने उस कँगन को बहुत पसंद किया और एक और लाने को कहा। राजा ने घोषणा की कि कोई इस तरह के कँगन नहीं लेगा, पंडित अपने किये पर बहुत शर्मिंदा था क्योंकि उसने गुरुजी को धोखा दिया था। वो रविदास जी से मिला और माफी के लिये निवेदन किया। गुरु जी ने उससे कहा कि "मन चंगा तो कठौती में गंगा" ये लो दूसरे कँगन जो पानी से भरे जल में मिट्टी के बर्तन में गंगा के रूप में यहाँ बह रही है। गुरु जी की इस दैवीय शक्ति को देखकर वो गुरु जी का भक्त बन गया।

उनके पिता के मौत के समय की घटना

रविदास की पिता की मृत्यु के बाद उन्होंने अपने पड़ोसियों से विनती की कि वो गंगा नदी के किनारे अंतिम रिवाज में मदद करें। हालाँकि ब्राह्मण रीति के संदर्भ में खिलाफ थे कि वो गंगा के जल से स्नान करेंगे जो रस्म की जगह से जल मुख्य शहर की ओर जाता है और वो प्रदूषित हो जायेगा। गुरु जी बहुत दु:खी और मजबूर हो गये। हालाँकि उन्होंने कभी भी अपना धैर्य नहीं खोया और अपने पिता की आत्मा की शांति के लिये प्रार्थना करने लगे। अचानक से वातावरण में एक भयानक तूफान आया और नदी का पानी उल्टी दिशा में बहना प्रारंभ हो गया और जल की एक गहरी तरंग आयी और लाश को अपने साथ ले गयी। इस भवंडर ने आसपास की सभी चीजों को सोख लिया। तब से, गंगा का पानी उल्टी दिशा में बह रहा है।

कैसे बाबर प्रभावित हुआ रविदास के अध्यापन से

इतिहास के अनुसार बाबर मुगल साम्राज्य का पहला राजा था, जो 1526 में पानीपत का युद्ध जीतने के बाद दिल्ली के सिहांसन पर बैठा जहाँ उसने भगवान के भरोसे के लिये लाखों लोगों को कुर्बान कर दिया। वो पहले से ही

संत रविदास की दैवीय शक्तियों से परिचित था और फैसला किया कि एक दिन वो हुमायुँ के साथ गुरु जी से मिलेगा। वो वहाँ गया और गुरु जी को सम्मान देने के लिये उनके पैर छूए। हालाँकि आशीर्वाद के बजाय उसे गुरु जी से सजा मिली क्योंकि उसने लाखों निर्दोष लोगों की हत्याएँ की थी। गुरु जी ने उसे गहराई से समझाया जिसने बाबर को बहुत प्रभावित किया और इसके बाद वो भी संत रविदास का अनुयायी बन गया तथा दिल्ली और आगरा के गरीबों की सेवा के द्वारा समाज सेवा करने लगा।

संत रविदास की मृत्यु

समाज में बराबरी, सभी भगवान एक है, इंसानियत, उनकी अच्छाई और बहुत से कारणों की वजह से बदलते समय के साथ संत रविदास के अनुयायियों की संख्या बढ़ती ही जा रही थी। दूसरी तरफ, कुछ ब्राह्मण और पीरन दित्ता मिरासी गुरु जी को मारने की योजना बना रहे थे इस वजह से उन लोगों ने गाँव से दूर एक एकांत जगह पर मिलने का समय तय किया। किसी विषय पर चर्चा के लिये उन लोगों ने गुरु जी को वहाँ पर बुलाया जहाँ उन्होंने गुरु जी की हत्या की साजिश रची थी। हालाँकि गुरु जी को अपनी दैवीय शक्ति की वजह से पहले से ही सब कुछ पता चल गया था।

जैसे ही चर्चा शुरू हुई, गुरु जी उन्ही के एक साथी भल्ला नाथ के रूप में दिखायी दिये जो कि गलती से तब मारा गया था। बाद में जब गुरु जी ने अपने झोपड़े में शंखनाद किया, तो सभी हत्यारे गुरु जी को जिंदा देख भौंचक्के रह गये तब वो हत्या की जगह पर गये जहाँ पर उन्होंने संत रविदास की जगह अपने ही साथी भल्ला नाथ की लाश पायी। उन सभी को अपने कृत्य पर पछतावा हुआ और वो लोग गुरु जी से माफी माँगने उनके झोपड़े में गये।

हालाँकि, उनके कुछ भक्तों का मानना है कि गुरु जी की मृत्यु प्राकृतिक रूप से 120 या 126 साल में हो गयी थी। कुछ का मानना है उनका निधन वाराणसी में 1540 ई. में हुआ था।

गुरु रविदास जी के लिये स्मारक

वाराणसी में श्री गुरु रविदास पार्क

वाराणसी में श्री गुरु रविदास पार्क है, जो नगवा में उनके यादगार के रुप में बनाया गया है, जो उनके नाम पर "गुरु रविदास स्मारक और पार्क" बना है।

गुरु रविदास घाट

वाराणसी में पार्क से बिल्कुल सटा हुआ उनके नाम पर गंगा नदी के किनारे लागू करने के लिये गुरु रविदास घाट भी भारतीय सरकार द्वारा प्रस्तावित है।

संत रविदास नगर

ज्ञानपुर जिले के निकट संत रविदास नगर है, जो कि पहले भदोही नाम से था अब उसका नाम भी संत रविदास नगर है।

श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर वाराणसी

इनके सम्मान में सीर गोवर्धनपुर, वाराणसी में श्री गुरु रविदास जन्म स्थान मंदिर स्थित है, जो इनके सम्मान में बनाया गया है पूरी दुनिया में इनके अनुयायीयों द्वारा चलाया जाता है, जो अब प्रधान धार्मिक कार्यालय के रुप में है।

श्री गुरु रविदास स्मारक गेट

वाराणसी के लंका चौराहे पर एक बड़ा गेट है, जो इनके सम्मान में बनाया गया है।

इनके नाम पर देश के साथ ही विदेशों में भी स्मारक बनाये गये है।

व्यक्तित्व

रैदास के समय में स्वामी रामानन्द काशी के बहुत प्रसिद्ध प्रतिष्ठित सन्त थे। रैदास उनकी शिष्य-मण्डली के महत्त्वपूर्ण सदस्य थे। प्रारम्भ में ही रैदास बहुत परोपकारी तथा दयालु थे और दूसरों की सहायता करना उनका स्वभाव बन गया था। साधु-सन्तों की सहायता करने में उनको विशेष सुख का अनुभव होता था। वह उन्हें प्रायः मूल्य लिये बिना जूते भेंट कर दिया करते थे। उनके स्वभाव के कारण उनके माता-पिता उनसे अप्रसन्न रहते थे। कुछ समय बाद उन्होंने रैदास तथा उनकी पत्नी को अपने घर से अलग कर दिया। रैदास पड़ोस में ही अपने लिए एक अलग झोपड़ी बनाकर तत्परता से अपने व्यवसाय का काम करते थे और शेष समय ईश्वर-भजन तथा साधु-सन्तों के सत्संग में व्यतीत करते थे।

कहते हैं, ये अनपढ़ थे, किंतु संत-साहित्य के ग्रंथों और गुरु-ग्रंथ साहब में इनके पद पाए जाते हैं।

वचनबद्धता

उनके जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं से समय तथा वचन के पालन सम्बन्धी उनके गुणों का ज्ञान मिलता है। एक बार एक पर्व के अवसर पर पड़ोस के लोग गंगा-स्नान के लिए जा रहे थे। रैदास के शिष्यों में से एक ने उनसे भी चलने का आग्रह किया तो वे बोले, 'गंगा-स्नान के लिए मैं अवश्य चलता किन्तु एक व्यक्ति को आज ही जूते बनाकर देने का मैंने वचन दे रखा है। यदि आज मैं जूते नहीं दे सका तो वचन भंग होगा। गंगा स्नान के लिए जाने पर मन यहाँ लगा रहेगा तो पुण्य कैसे प्राप्त होगा? मन जो काम करने के लिए अन्त:करण से तैयार हो वही काम करना उचित है। मन सही है तो इस कठौती के जल में ही गंगास्नान का पुण्य प्राप्त हो सकता है। ' कहा जाता है कि इस प्रकार के व्यवहार के बाद से ही कहावत प्रचलित हो गयी कि - 'मन चंगा तो कठौती में गंगा।'

शिक्षा

रैदास ने ऊँच-नीच की भावना तथा ईश्वर-भक्ति के नाम पर किये जाने वाले विवाद को सारहीन तथा निरर्थक बताया और सबको परस्पर मिल जुल कर प्रेमपूर्वक रहने का उपदेश दिया। वे स्वयं मधुर तथा भक्तिपूर्ण भजनों की रचना करते थे और उन्हें भाव-विभोर होकर सुनाते थे। उनका विश्वास था कि राम, कृष्ण, करीम, राघव आदि सब एक ही परमेश्वर के विविध नाम हैं। वेद, कुरान, पुराण आदि ग्रन्थों में एक ही परमेश्वर का गुणगान किया गया है।

'कृस्न, करीम, राम, हरि, राघव, जब लग एक न पेखा।
वेद कतेब कुरान, पुरानन, सहज एक नहिं देखा।।'

उनका विश्वास था कि ईश्वर की भक्ति के लिए सदाचार, परहित - भावना तथा सदव्यवहार का पालन करना अत्यावश्यक है। अभिमान त्याग कर दूसरों के साथ व्यवहार करने और विनम्रता तथा शिष्टता के गुणों का विकास करने पर उन्होंने बहुत बल दिया। अपने एक भजन में उन्होंने कहा है -

'कह रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमान मेटि आपा पर, पिपिलक हवै चुनि खावै।'

उनके विचारों का आशय यही है कि ईश्वर की भक्ति बड़े भाग्य से प्राप्त होती है। अभिमान शून्य रहकर काम करने वाला व्यक्ति जीवन में सफल रहता है जैसे कि विशालकाय हाथी शक्कर के कणों को चुनने में असमर्थ रहता है, जबकि लघु शरीर की 'पिपीलिका' इन कणों को सरलतापूर्वक चुन लेती है। इसी प्रकार अभिमान तथा बड़प्पन का भाव त्याग कर विनम्रतापूर्वक आचरण करने वाला मनुष्य ही ईश्वर का भक्त हो सकता है।

सत्संग

शैशवावस्था से ही सत्संग के प्रति उनमें तीव्र अभिरुचि थी। अत: रामजानकी की मूर्ति बनाकर पूजन करने लगे थे। पिता ने किसी कारणवश उन्हें अपने से अलग कर दिया था और वे घर के पिछवाड़े छप्पर डालकर रहने लगे। ये परम संतोषी और उदार व्यक्ति थे। वे अपने बनाये हुये जूते बहुधा साधु-सन्तों में बांट दिया करते थे। इनकी विरक्ति के सम्बन्ध में एक प्रसंग मिलता है कि एक बार किसी महात्मा ने उन्हे 'पारस' पत्थर दिया जिसका उपयोग भी उसने बता दिया। पहले तो सन्त रैदास ने उसे लेना ही अस्वीकार कर दिया। किन्तु बार - बार आग्रह करने पर उन्होंने ग्रहण कर लिया और अपने छप्पर में खोंस देने के लिये कहा। तेरह दिन के बाद लौटकर उक्त साधु ने जब पारस पत्थर के बारे में पूछा तो संत रैदास का उत्तर था कि जहां रखा होगा, वहीं से उठा लो और सचमुच वह पारस पत्थर वहीं पड़ा मिला।

सत्य

सन्त रैदास ने सत्य को अनुपम और अनिवर्चनीय कहा है। वह सर्वत्र एक रस है। जिस प्रकार जल में तरंगे है उसी प्रकार सारा विश्व उसमें लक्षित होता है। वह नित्य, निराकार तथा सबके भीतर विद्यमान है। सत्य का अनुभव करने के लिये साधक को संसार के प्रति अनासक्त होना पड़ेगा। संत रैदास के अनुसार प्रेममूलक भक्ति के लिये अहंकार की निवृत्ति आवश्यक है। भक्ति और अहंकार एक साथ संभव नहीं है। जब तक साधक अपने साध्य के चरणों में अपना सर्वस्व अर्पण नहीं करता तब तक उसे लक्ष्य की सिद्धि नहीं हो सकती।

साधना

सन्त रैदास मध्ययुगीन इतिहास के संक्रमण काल में हुए थे। ब्राह्मणों की पैशाविक मनोवृत्ति से दलित और उपेक्षित पशुवत जीवन व्यतीत करने के लिये

बाध्य थे। यह सब उनकी मानसिकता को उद्वेलित करता था। सन्त रैदास की समन्वयवादी चेतना इसी का परिणाम है। उनकी स्वानुभूतिमयी चेतना ने भारतीय समाज में जागृति का संचार किया और उनके मौलिक चिन्तन ने शोषित और उपेक्षित शूद्रो में आत्मविश्वास का संचार किया। परिणामत: वह ब्राह्मणवाद की प्रभुता के सामने साहसपूर्वक अपने अस्तित्त्व की घोषणा करने में सक्षम हो गये। सन्त रैदास ने मानवता की सेवा में अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया। सन्त रैदास के मन में इस्लाम के लिए भी आस्था का समान भाव था। कबीर की वाणी में जहाँ आक्रोश की अभिव्यक्ति है, वहीं दूसरी ओर सन्त रैदास की रचनात्मक दृष्टि दोनो धर्मो को समान भाव से मानवता के मंच पर लाती है। सन्त रैदास वस्तुत: मानव धर्म के संस्थापक थे।

धर्म

वर्णाश्रम धर्म को समूल नष्ट करने का संकल्प, कुल और जाति की श्रेष्ठता की मिथ्या सिद्धि सन्त रैदास द्वारा अपनाये गये समन्वयवादी मानवधर्म का ही एक अंग है जिसे उन्होंने मानवतावादी समाज के रूप में संकल्पित किया था। जन्म जात मत पूछिये, का जात अरू पात। रविदास पूत सभ प्रभ के कोउ नहि जात कुजात।

भक्ति

उपनिषदों से लेकर महर्षि नारद और शाण्डिल्य ने भक्ति तत्त्व की अनेक प्रकार से व्याख्या की है। रैदास ने भक्ति में रागात्मिका वृत्ति को ही महत्व दिया है। नाम मार्ग और प्रेम भक्ति उनकी अष्टांग साधना में ही है। रैदास की अष्टांग साधना पद्धति उनकी स्वतंत्र व स्वछंद चेतना का प्रवाह है। यह साधना पूर्णत: मौलिक है।

समाज पर प्रभाव

रैदास की वाणी, भक्ति की सच्ची भावना, समाज के व्यापक हित की कामना तथा मानव प्रेम से ओत-प्रोत होती थी। इसलिए उनकी शिक्षाओं का श्रोताओं के मन पर गहरा प्रभाव पड़ता था। उनके भजनों तथा उपदेशों से लोगों को ऐसी शिक्षा मिलती थी जिससे उनकी शंकाओं का सन्तोषजनक समाधान हो जाता था और लोग स्वत: उनके अनुयायी बन जाते थे। उनकी वाणी का इतना

व्यापक प्रभाव पड़ा कि समाज के सभी वर्गों के लोग उनके प्रति श्रद्धालु बन गये। कहा जाता है कि मीराबाई उनकी भक्ति-भावना से बहुत प्रभावित हुई और उनकी शिष्या बन गयी थीं।

श्वर्णाश्रम अभिमान तजि, पद रज बंदहिजासु की।
सन्देह-ग्रन्थि खण्डन-निपन, बानि विमुल रैदास की॥

रचनाएँ

रैदास अनपढ़ कहे जाते हैं। संत-मत के विभिन्न संग्रहों में उनकी रचनाएँ संकलित मिलती हैं। राजस्थान में हस्तलिखित ग्रंथों में रूप में भी उनकी रचनाएँ मिलती हैं। रैदास की रचनाओं का एक संग्रह 'बेलवेडियर प्रेस', प्रयाग से प्रकाशित हो चुका है। इसके अतिरिक्त इनके बहुत से पद 'गुरु ग्रंथ साहिब' में भी संकलित मिलते हैं। यद्यपि दोनों प्रकार के पदों की भाषा में बहुत अंतर है तथापि प्राचीनता के कारण 'गुरु ग्रंथ साहब' में संग्रहीत पदों को प्रमाणिक मानने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। रैदास के कुछ पदों पर अरबी और फारसी का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। रैदास के अनपढ़ और विदेशी भाषाओं से अनभिज्ञ होने के कारण ऐसे पदों की प्रामाणिकता में सन्देह होने लगता है। अतः रैदास के पदों पर अरबी-फारसी के प्रभाव का अधिक संभाव्य कारण उनका लोक प्रचलित होना ही प्रतीत होता है।

महत्व

आज भी सन्त रैदास के उपदेश समाज के कल्याण तथा उत्थान के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। उन्होंने अपने आचरण तथा व्यवहार से यह प्रमाणित कर दिया है कि मनुष्य अपने जन्म तथा व्यवसाय के आधार पर महान् नहीं होता है। विचारों की श्रेष्ठता, समाज के हित की भावना से प्रेरित कार्य तथा सदव्यवहार जैसे गुण ही मनुष्य को महान् बनाने में सहायक होते हैं। इन्हीं गुणों के कारण सन्त रैदास को अपने समय के समाज में अत्याधिक सम्मान मिला और इसी कारण आज भी लोग इन्हें श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हैं। संत कवि रैदास उन महान् सन्तों में अग्रणी थे, जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराइयों को दूर करने में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। इनकी रचनाओं की विशेषता लोक-वाणी का अद्‌भुत प्रयोग रही हैं जिससे जनमानस पर इनका अमिट प्रभाव पड़ता है।

मधुर एवं सहज संत रैदास की वाणी ज्ञानाश्रयी होते हुए भी ज्ञानाश्रयी एवं प्रेमाश्रयी शाखाओं के मध्य सेतु की तरह है। गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी रैदास उच्च-कोटि के विरक्त संत थे। उन्होंने ज्ञान-भक्ति का ऊंचा पद प्राप्त किया था। उन्होंने समता और सदाचार पर बहुत बल दिया। वे खंडन-मंडन में विश्वास नहीं करते थे। सत्य को शुद्ध रूप में प्रस्तुत करना ही उनका ध्येय था। रैदास का प्रभाव आज भी भारत में दूर-दूर तक फैला हुआ है। इस मत के अनुयायी रैदासी या रविदासी कहलाते हैं।

रैदास की विचारधारा और सिद्धांतों को संत-मत की परम्परा के अनुरूप ही पाते हैं। उनका सत्यपूर्ण ज्ञान में विश्वास था। उन्होंने भक्ति के लिए परम वैराग्य अनिवार्य माना जाता है। परम तत्त्व सत्य है, जो अनिवर्चनीय है - 'यह परमतत्त्व एकरस है तथा जड़ और चेतन में समान रूप से अनुस्यूत है। वह अक्षर और अविनश्वर है और जीवात्मा के रूप में प्रत्येक जीव में अवस्थित है। संत रैदास की साधनापद्धति का क्रमिक विवेचन नहीं मिलता है। जहाँ-तहाँ प्रसंगवश संकेतों के रूप में वह प्राप्त होती है। ' विवेचकों ने रैदास की साधना में 'अष्टांग' योग आदि को खोज निकाला है। संत रैदास अपने समय के प्रसिद्ध महात्मा थे। कबीर ने संतनि में रविदास संत' कहकर उनका महत्त्व स्वीकार किया इसके अतिरिक्त नाभादास, प्रियादास, मीराबाई आदि ने रैदास का ससम्मान स्मरण किया है। संत रैदास ने एक पंथ भी चलाया, जो रैदासी पंथ के नाम से प्रसिद्ध है। इस मत के अनुयायी पंजाब, गुजरात, उत्तर प्रदेश आदि में पाये जाते हैं।

संत रविदास का इतिहास

वर्तमान में देश की स्थिति नाजुक होती जा रही है क्योंकि भारत में कुछ राष्ट्रविरोधी ताकतों के इशारे पर असामाजिक तत्त्वों द्वारा दलित समाज को उकसाया जा रहा है कि तुम हिन्दू नहीं हो तुम बुद्धिष्ठ हो और हमारे संत रविदास थे वो भी हिन्दू नहीं थे, मुसलमान और दलित भाई-भाई है और हिन्दू हमारे दुश्मन हैं, इस तरीके से भारत को टुकड़े-टुकड़े करने का भयंकर षड्यंत्र चल रहा है।

आज जो दलितों को हिन्दू समाज से तोड़ रहे हैं वो बड़े भयंकर पाप के भागीदार हो रहे हैं, उनको महान हिन्दू संत रविदास का इतिहास ठीक से पढ़कर दलित समाज को उनका मूल धर्म हिन्दू धर्म से दूर न करें।

गुरु रविदास जी का जन्म काशी में चर्मकार (चमार) कुल में हुआ था। उनके पिता का नाम संतोख दास (रग्घु) और माता का नाम कलसा देवी बताया जाता है। जिस दिन उनका जन्म हुआ उस दिन रविवार था इस कारण उन्हें रविदास कहा गया। भारत की विभिन्न प्रांतीय भाषाओं में उन्हें रोईदास, रैदास व रहदास आदि नामों से भी जाना जाता है।

रैदास ने साधु-सन्तों की संगति से पर्याप्त व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किया था। जूते बनाने का काम उनका पैतृक व्यवसाय था और उन्होंने इसे सहर्ष अपनाया। वे अपना काम पूरी लगन तथा परिश्रम से करते थे और समय से काम को पूरा करने पर बहुत ध्यान देते थे।

उनकी समयानुपालन की प्रवृति तथा मधुर व्यवहार के कारण उनके सम्पर्क में आने वाले लोग भी बहुत प्रसन्न रहते थे।

प्रारम्भ से ही रविदास जी बहुत परोपकारी तथा दयालु थे और दूसरों की सहायता करना उनका स्वभाव बन गया था। साधु-सन्तों की सहायता करने में उनको विशेष आनन्द मिलता था। वे उन्हें प्राय: मूल्य लिये बिना जूते भेंट कर दिया करते थे।

नौ वर्ष की नन्ही उम्र में ही परमात्मा की भक्ति का इतना गहरा रंग चढ गया कि उनके माता-पिता भी चिंतित हो उठे। उन्होंने उनका मन संसार की ओर आकृष्ट करने के लिए उनकी शादी करा दी और उन्हें बिना कुछ धन दिये ही परिवार से अलग कर दिया फिर भी रविदासजी अपने पथ से विचलित नहीं हुए।

संत रविदास जी पड़ोस में ही अपने लिए एक अलग झोपड़ी बनाकर तत्परता से अपने व्यवसाय का काम करते थे और शेष समय ईश्वर-भजन तथा साधु-सन्तों के सत्संग में व्यतीत करते थे।

संत रविदास जी ने अपनी वाणी के माध्यम से आध्यात्मिक, बौद्धिक व सामाजिक क्रांति का सफल नेतृत्व किया। उनकी वाणी में निर्गुण तत्त्व का मौलिक व प्रभावशाली निरूपण मिलता है।

उनका जन्म ऐसे समय में हुआ था जब भारत में मुगलों का शासन था चारों ओर गरीबी, भ्रष्टाचार व अशिक्षा का बोलबाला था।

युग प्रवर्तक स्वामी रामानंद उस काल में काशी में पंच गंगाघाट में रहते थे। वे सभी को अपना शिष्य बनाते थे। रविदास ने उन्हीं को अपना गुरु बना लिया। स्वामी रामानंद ने उन्हें रामभजन की आज्ञा दी व गुरुमंत्र दिया "रं रामाय

नमः"। गुरुजी के सान्निध्य में ही उन्होनें योग साधना और ईश्वरीय साक्षात्कार प्राप्त किया। उन्होनें वेद, पुराण आदि का समस्त ज्ञान प्राप्त कर लिया।

कहा जाता है कि भक्त रविदास का उद्धार करने के लिये भगवान स्वयं साधु वेश में उनकी झोपड़ी में आये। लेकिन उन्होनें उनके द्वारा दिये गये पारस पत्थर को स्वीकार नहीं किया।

एक बार एक पर्व के अवसर पर पड़ोस के लोग गंगा-स्नान के लिए जा रहे थे। रैदास (संत रविदास) के शिष्यों में से एक ने उनसे भी चलने का आग्रह किया तो वे बोले, गंगा-स्नान के लिए मैं अवश्य चलता किन्तु एक व्यक्ति को जूते बनाकर आज ही देने का मैंने वचन दे रखा है। यदि मैं उसे आज जूते नहीं दे सका तो वचन भंग होगा। गंगा स्नान के लिए जाने पर मन यहाँ लगा रहेगा तो पुण्य कैसे प्राप्त होगा ? मन जो काम करने के लिए अन्तःकरण से तैयार हो वही काम करना उचित है। मन सही है तो इसे कठौते के जल में ही गंगास्नान का पुण्य प्राप्त हो सकता है। कहा जाता है कि इस प्रकार के व्यवहार के बाद से ही कहावत प्रचलित हो गयी कि - मन चंगा तो कठौती में गंगा।

संत रविदास जी की महानता और भक्ति भावना की शक्ति के प्रमाण इनके जीवन के अनेक घटनाओं में मिलती है है जिसके कारण उस समय का सबसे शक्तिशाली राजा मुगल साम्राज्य बाबर भी संत रविदास जी के नतमस्तक था और जब वह संत रविदास जी से मिलता है तो संत रविदास जी बाबर को दण्डित कर देते है जिसके कारण बाबर का हृदय परिवर्तन हो जाता है और फिर सामाजिक कार्यो में लग जाता था।

उस समय मुस्लिम शासकों द्वारा प्रयास किया जाता था कि येन केन प्रकारेण हिंदुओं को मुस्लिम बनाया जाये। संत रविदास की ख्याति लगातार बढ़ रही थी, उनके लाखों भक्त थे जिनमें हर जाति के लोग शामिल थे। ये देखते हुए उस समय का परिद्ध मुस्लिम 'सदना पीर' उनको मुसलमान बनाने आया था, उसका सोचना था कि संत रैदास को मुस्लिम बनाने से उनके लाखो भक्त भी मुस्लिम हो जायेंगे ऐसा सोचकर उनपर अनेक प्रकार के दबाव बनाये जाते थे। किन्तु संत रविदास की श्रद्धा और निष्ठा हिन्दू धर्म के प्रति अटूट रहती है।

सदना पीर ने शास्त्रार्थ करके हिंदू धर्म की निंदा की और मुसलमान धर्म की प्रशंसा की। संत रविदासने उनकी बातों को ध्यान से सुना और फिर उत्तर दिया और उन्होनें इस्लाम धर्म के दोष बताते हुआ कहा कि वेद धरम है पूरन धरमा।

वेद अतिरिक्त और सब भरमा।
वेद वाक्य उत्तम धरम, निर्मल वाका ग्यान
यह सच्चा मत छोड़कर, मैं क्यों पढ़ूँ कुरान
स्त्रुति-सास्त्र-स्मृति गाई, प्राण जाय पर धरम न जाई॥

आगे कहते है कि मुझे कुरानी बहिश्त की हूरे नहीं चाहिए क्योकि ये व्यर्थ बकवाद है।

कुरान बहिश्त न चाहिए मुझको हूर हजार।
वेद धरम त्यागूँ नहीं जो गल चलै कटार॥
वेद धरम है पूरन धरमा।
करि कल्याण मिटावे भरमा॥
सत्य सनातन वेद हैं, ज्ञान धर्म मर्याद।
जो ना जाने वेद को वृथा करे बकवाद॥

संत रविदास के तर्को के आगे सदना पीर टिक न सका। सदना पीर आया तो था संत रविदास को मुसलमान बनाने के लिये लेकिन वह स्वयं हिंदू बन बैठा। रामदास नाम से इनका शिष्य बन गया। यानि स्वंय इस्लाम छोड़ दिया।

दिल्ली में उस समय सिकंदर लोदी का शासन था। उसने रविदास के विषय में काफी सुन रखा था। सिकंदर लोदी ने संत रविदास को मुसलमन बनाने के लिये दिल्ली बुलाया और उन्हें मुसलमान बनने के लिये बहुत सारे प्रलोभन दिये। संत रविदास ने काफी निर्भीक शब्दों में निंदा की।

सुल्तान सिकन्दर लोदी को जवाब देते हुए रविदासजी ने वैदिक हिन्दू धर्म को पवित्र गंगा के समान कहते हुए इस्लाम की तुलना तालाब से की है-

मैं नहीं दब्बू बाल गंवारा
गंग त्याग गहूँ ताल किनारा
प्राण तजूँ पर धर्म न देऊँ
तुमसे शाह सत्य कह देऊँ
चोटी शिखा कबहुँ तहिँ त्यागूँ
वस्त्र समेत देह भल त्यागूँ
कंठ कृपाण का करौ प्रहारा
चाहे डुबाओ सिँधु मंझारा

संत रविदास की बातो से चिढ़कर सिकंदर लोदी संत रविदास को जेल में डाल दिया। सिकंदर लोदी ने कहा कि यदि वे मुसलमान नहीं बनेंगे

तो उन्हें कठोर दंड दिया जायेगा। जेल में भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें दर्शन दिये और कहा कि धर्मनिष्ठ सेवक ही आपकी रक्षा करेंगे। अगले दिन जब सुल्तान सिकंदर नमाज पढ़ने गया तो सामने रविदास को खड़ा पाया। उसे चारो दिशाओं में संत रविदास के ही दर्शन हुये। यह चमत्कार देखकर सिकंदर लोदी घबरा गया। लोदी ने तत्काल संत रविदास को रिहा कर दिया और माफी मांग ली।

संत रविदास के जीवन में ऐसी बहुत सारी चमत्कारिक घटनाएं घटी।

भारतीय संतों ने सदा अहिंसा वृति का ही पोषण किया है। संत रविदास जाति से चर्मकार थे। लेकिन उन्होनें कभी भी जन्मजाति के कारण अपने आप को हीन नहीं माना। उन्होनें परमार्थ साधना के लिये सत्संगति का महत्व भी स्वीकारा है। वे सत्संग की महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि उनके आगमन से घर पवित्र हो जाता है। उन्होंने श्रम व कार्य के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त की तथा कहा कि अपने जीविका कर्म के प्रति हीनता का भाव मन में नहीं लाना चाहिये। उनके अनुसार श्रम ईश्वर के समान ही पूजनीय है।

संत रविदास ने अपने जीवन के अंतिम वर्षों में भारत भ्रमण किया करके समाज को उत्थान की नयी दिशा दी। संत रविदास साम्प्रदायिकता पर भी चोट करते हैं। उनका मत है कि सारा मानव वंश एक ही प्राण तत्त्व से जीवंत है। वे सामाजिक समरसता के प्रतीक महान संत थे। वे मदिरापान तथा नशे आदि के भी घोर विरोधी थे तथा इस पर उपदेश भी दिये हैं।

चित्तौड़ के राणा सांगा की पत्नी झाली रानी उनकी शिष्या बनीं वहीं चित्तौड़ में संत रविदास की छतरी बनी हुई है। मान्यता है कि वे वहीं से स्वर्गारोहण कर गये। समाज में सभी स्तर पर उन्हें सम्मान मिला। वे महान संत कबीर के गुरुभाई तथा मीरा के गुरु थे।

श्री गुरुग्रंथ साहिब में उनके पदों का समायोजन किया गया है। आज के सामाजिक वातावरण में समरसता का संदेश देने के लिये संत रविदास का जीवन आज भी प्रेरक हैं।

एक बार गंगातट पर संत रविदासजी 'राम-नाम' द्वारा भवसागर से पार हो जाने का उपदेश दे रहे थे। कुछ ईर्ष्यालु व्यक्तियों ने उनका अपमान करने हेतु बीच में टोककर कहा–''महाराज ! भवसागर से पार होने की बात तो दूर रही, इससे जरा एक पत्थर को तो नदी में तैराकर दिखाओ, आपकी बात की सच्चाई हम तभी मानेंगें। '' रविदासजी ने एक पत्थर की शिला उठाई और उस पर 'राम'

लिखकर उसे नदी में छोड़ दिया। लोगों ने आश्चर्यचकित होकर देखा कि सचमुच ही शिला जल के ऊपर तैर रही थी।

परमात्म-तत्त्व में सदा एकरूप रहने वाले सत्पुरुष चमत्कार करते नहीं, बल्कि उनके द्वारा घटित हो जाते हैं। उनके लिए तो यह सब खेलमात्र है। संत कबीरदासजी ने उन्हें ध्रुव, प्रह्लाद तथा शुकदेव जैसे उच्चकोटि के भक्तों में गिनाते हुए उन्हींकी भाँति प्रभु-प्रेम सुधारस का पान करनेवाला बताया है।

आज भी ऐसे महापुरुष इस धन्य धरा पर हैं। धनभागी हैं वे लोग जो उनके सत्संग-सान्निध्य का लाभ लेते हैं।

राष्ट्र को तोड़ने के लिए हिन्दू समाज से दलित समाज को अलग करने के लिए राष्ट्र विरोधी ताकतों द्वारा उकसाया जा रहा है, उनके लिए संत रविदास का प्रसंग प्रेरणास्रोत है, सभी हिन्दू सावधान रहें है कोई भी जाति-पांति में तोड़ता हो तो उसको संत रविदास का जीवन चरित्र देकर समझा दे जिससे भारत की अखंडता बनी रहेगी।

सामाजिक क्रांति के अग्रदूत संत रैदास

भारतीय संस्कृति अंतर्विरोधों का विचित्र समन्वय है। यहाँ एक ओर तो किसी अछूत को पूजा, उपासना और पठन-पाठन का अधिकार नहीं दिया जाता था, वहीं दूसरी ओर यदि कोई अछूत सिद्धि प्राप्त कर ले तो उसे उदारता से स्वीकार भी कर लिया जाता रहा। मध्यकालीन भारत में संत कवि रैदास इन्हीं अंतर्विरोधों का एक सशक्त उदाहरण हैं। क्रांतिकारी, समाज सुधारक, दार्शनिक, भक्त और कवि जैसी अनेक विशेषताओं से विभूषित उनके व्यक्तित्व को अब तक एक जाति विशेष तक सीमित कर उनकी परिधि को छोटा ही किया गया। जबकि मध्यकालीन संत कवियों में वे कबीर के बाद सबसे लोकप्रिय संत कवि थे। जिन्हें जयदेव, नामदेव और गुरु नानक जैसे महान संतों की अविरल परंपरा की महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में जाना जाता है। आश्चर्य की बात है कि अभी तक भी संत रैदास का जीवनवृत्त विवादास्पद है। उनके समय पर विवाद हो सकता है, किंतु हिंदी साहित्य में तो उनके नाम पर भी विवाद है। डॉ. संगमलाल पांडेय के अनुसार - 'श्रविदास के कुल बारह नाम मिलते हैं।' यथा - 'रैदास, रयदास, रुइदास, रुईदास, रयिदास, रोहीदास, रोहीतास, रहदास, रामदास, रमादास, रविदास और हरिदास।' लेकिन सामान्य रूप से प्रचलित नाम रैदास और रविदास ही है।

हिंदी साहित्य में अभी तक रैदास का समय भी विवाद का विषय है। 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल तो संभवत: आधारभूत सामग्री के अभाव में रैदास के जन्म एवं निर्वाण का कोई भी संवत तय नहीं करते हैं।' सबसे प्रथम 'आचार्य परशुराम चतुर्वेदी अनुमान के आधार पर इनका जीवनकाल विक्रम की 15वीं से 16वीं शताब्दी तक पहुँचता हुआ मानते हैं।' डॉ. रामकुमार वर्मा लिखते हैं कि – 'ये रामानंद के शिष्य और कबीर के समकालीन थे। अत: इनका आविर्भावकाल कबीर के समय में ही मानना चाहिए, जो संवत 1445 से सं. 1575 है।' ऐसा ही अनुमान 'डॉ. राजेंद्र कुमार का भी है।' डॉ. गणपति चंद्र गुप्त भी 'रैदास को कबीर का समकालीन मानते हुए उनका समय सं. 1455 से सं. 1575 ही तय करते हैं।' रैदास पर विवेचनात्मक पुस्तकें लिखने वालों में भी मतवैभिन्य देखने को मिलता है। श्री रामानंद शास्त्री एवं वीरेंद्र पांडेय ने सर्वप्रथम रैदास संप्रदाय में प्रचलित विश्वास को आधार मानते हुए लिखा है कि – 'संत रविदास का नाम जैसा कि उपलब्ध साहित्य हमें बताता है, परंपरा के अनुसार रविवार के दिन उत्पन्न होने के कारण रखा गया। आज भी अपने देश में यह परंपरा प्रचलित है। अत: हमें इस तथ्य को नि:संकोच स्वीकार कर लेना चाहिए कि संत रविदास रविवार के दिन उत्पन्न हुए थे।

जहाँ तक तिथि का संबंध है, सभी रविदासी गद्दियाँ सदियों से माघ पूर्णिमा को ही संत रविदास की जन्म तिथि मानती चली आई हैं। अत: हमें इसे ही मान्यता देनी चाहिए। यदि यह जन्मतिथि और जन्म दिन सही है तो इसके आधार पर संत रविदास का निश्चित जन्म संवत भी ढूँढ़ा जा सकता है। संवत 1441 वि. से लेकर संवत 1454–55 वि. तक जिस वर्ष भी माघ की पूर्णिमा रविवार को पड़ता है, वही रविदास का निश्चित जन्म संवत माना जाना चाहिए।' इसी कथन को आधार मानते हुए आचार्य पृथ्वी सिंह आजाद ने पंचांग के अनुसार गणना कर लिखा कि – 'हमने पंचांग के अनुसार संवत 1441 से लेकर संवत 1455 तक शोध करके देखा है। रविवार केवल संवत 1443 की माघ पूर्णिमा को पड़ता है। परंतु हम यह जन्म संवत इसलिए मानने को तैयार नहीं है कि उस दिन फाल्गुन का प्रथम प्रविष्ठा न होकर माघ का प्रविष्ठा पड़ता है और दूसरे इस संवत को न तो किसी अन्य विद्वान ने स्वीकार किया और न ही पुरातन रविदासिया संतों ने ही।' आजाद साहब ने अपनी एक अन्य पुस्तक में लिखा है कि – 'संत करमदास जी ने गुरु रविदास जी का जन्म, माघ पूर्णिमा संवत 1433 वि. माना है। गणना के अनुसार इस दिन रविवार ही पड़ता है और अन्य किसी

भी तिथि को जिन्हें रविदास जी के जन्म दिन से जोड़ा जाता है, रविवार को नहीं पड़ता।'

गुरु रविदास जी के जन्मतिथि के विषय में रविदास संप्रदाय में निम्नलिखित दोहा शताब्दियों से प्रचलित है –

चौदह सौ तैंतीस की माघ सुदी परदास।
दुखियों के कल्याण हित प्रकटे श्री रैदास॥

गुरु रविदास जी का निर्वाण संवत 1584 वि. में हुआ माना जाता है। जिसका आधार श्री अनंतदास वैष्णव द्वारा रचित 'रैदास जी की परचई' (रचनाकाल सं. 1645 वि.) का निम्नलिखित दोहा है –

''पंद्रह सै चउ असी, चीतौरे भई भीर।
जर्जर देह कंचन भई, रवि-रवि मिल्यौ शरीर॥''

संत गुरु रविदास के निर्वाण के संबंध में एक दोहा और प्रचलित है –

''पंद्रहसै चौअसी करि, कृष्ण चौदस चैतमास।
गंभीरी पे ब्रह्मलीन भये स्री रविदास।
पूरम ब्रह्मन सूँ जा मिले ब्रह्मरूप रविदास।
नामदान का गिआन देई कीन्हों जग उजिआस॥''

रैदास का जन्म किस स्थान पर हुआ यह भी पर्याप्त विवाद का विषय रहा है। इस विवाद की ओर संकेत करते हुए डॉ. पद्म गुरुचरन सिंह लिखते हैं – 'संत रविदास के जन्म स्थान के संबंध में रविदास संप्रदाय के अनुयायियों में मतभेद है। कोई इनका जन्म स्थान पश्चिमी उत्तर प्रदेश बतलाता है तो कोई गुजरात और राजस्थान। इसी तरह कुछ लोगों की धारणा है कि संत जी का जन्म स्थान राजस्थान में मेवाड़ का कोई कस्बा रहा होगा। कुछ लोग इन्हें राजस्थान में मांडवगढ़ का निवासी सिद्ध करते हैं।' इस विवाद का कारण हमें 'रैदास रामायण' की निम्न पंक्तियाँ प्रतीत होती है –

काशी ढिग माडुर स्थाना, शुद वरन करत गुजराना।
माडुर नगर लीन अवतारा, रविदास शुभ नाम हमारा॥

इन पंक्तियों में मांडुर नामक नगर को लोगों ने राजस्थान में स्थिति इसलिए मान लिया क्योंकि रैदास ने अपना देह त्याग राजस्थान में किया था। और वह काशी (वाराणसी) के पास वाले अंश को नजरअंदाज कर गए।

डॉ. काशीनाथ उपाध्याय रैदास का जन्म स्थान सीर गोवर्धनपुर को भी मानने की बात कहते हैं। वे लिखते हैं कि – ''आदि धर्म मिशन मतावलंबी श्री

बंताराम होरा की नई खोज के आधार पर कुछ आधुनिक विद्वान अब यह मानने लगे हैं कि रविदास जी का जन्म बनारस के पास की एक छोटी सी बस्ती सीर गोवर्धनपुर में हुआ था।'' उन्होंने श्री धेरा द्वारा 1964 ई. में इसी स्थान से किसी प्राचीन पांडुलिपि के प्राप्त करने का भी उल्लेख किया है। इस विवरण का आधार उन्होंने श्री वीरेंद सेठी द्वारा लिखित - 'मीरा प्रेम दीवानी' पुस्तक को माना है, इसमें यह उल्लेख है - 'हाल ही में कुछ विद्वान इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि रैदास का जन्म सीर गोवर्धनपुर गाँव है, जो बनारस से लगा हुआ है। 1971 में रविदास का स्मारक मंदिर बनाया गया, जिसका उद्घाटन बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के उप कुलपति ने किया।' मेरे विचार से यह वहीं मंदिर है, जो बनारस में बनाया गया। यह खोज भी रैदास के जन्म स्थान को बनारस के पास ही होने को प्रमाणित करती है। रैदास का जन्म काशी के पास ही हुआ इसका उल्लेख उन्होंने स्वयं अपनी वाणी में किया है -

मेरी जाति कुटवांढला ढोर ढोवन्ता।
नितहि बनारसी आस-पासा।
जाके कुटुंब के ढेढ सभ ढोर ढोढ़त।
फिरहि बनारसी आस-पासा।।
आचार सहित विप्र कराहिं डंडउति।
तिन तैन रविदास दासान दासा।।

रैदास के जन्म स्थान के बाद अब हम जाति की बात करते हैं। अंततः और वाह्य साक्ष्यों के आधार पर यह निश्चित हो चुका है कि रैदास जाति से चर्मकार थे। उन्होंने अपनी वाणी में बार-बार स्वयं को चमार घोषित किया है। कुछ उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं -

नागर जनाँ मेरी जाति विखियात चमार।
रिदै राम गोविंद गुन सार।।
कह रैदास खलास चमारा।
जो सहरू सो मीतु हमारा।।
मेरी जाति कमीनी पॉति कमीनी ओच्छा जनमु हमारा।
तुम सरना गति राजा रामचंद्र कहि रैदास चमार।।

चमार जाति उत्तर प्रदेश ही नहीं संपूर्ण भारत में अछूत समझी जाती थी, जिसमें उत्पन्न व्यक्ति को दूसरी उच्च जातियों में उत्पन्न व्यक्ति, छूना तक पाप समझते थे। इसका उल्लेख रैदास ने अपनी साखी में इस प्रकार किया है -

''रैदास तू काँवचि फली, तुझहुँ न छिवे कोइ।''

इस घृणा का कारण शायद यह हो कि इस जाति के लोग मृत पशुओं को ढोने, उनकी खाल निकालकर जूता बनाने का काम ही नहीं करते थे, बल्कि मृत पशुओं का मांस भी खाते थे। अपनी वाणी में रैदास ने अपने परिवार के लोगों का बनारस के आसपास मृत पशुओं को ढोने का उल्लेख किया है –

जाकै कुटुंब के ढेढ़ सभ ढोर ढोवंत।
फिरहि बनारसी आस-पासा॥
मेरी जाति कुटवाँढला ढोर ढुवन्ता
नितहि बनारसी आस-पासा॥

वह रैदास जिसने अपनी वाणी में बार-बार 'कह रैदास चमार' और 'कह रैदास खलास चमारा' कहकर स्वयं को चमार घोषित किया है। इसी रैदास की प्रसिद्धि, सिद्धि और लोकप्रियता को देखकर कुछ लोगों ने उन्हें पूर्व जन्म का ब्राह्मण माना है, जिसने ब्राह्मण होकर मांस खाया था इसलिए उन्हें इस जन्म में चमार के घर जन्म लेना पड़ा। उन्होंने लिखा है –

'पूरब जन्म विप्र ही होता।
मांस न छाड़यो निस दिन श्रोता।
तिहि अपराधि नीच कुल दीना।
पाछला जनम चीन्ही तिन लीना॥'

रैदास के वंश संबंधी अधिकतम जानकारी जो अब तक विद्वानों ने बड़े परिश्रम से प्राप्त की है, उसके अनुसार भी पक्के तौर पर रैदास के वंश को निश्चित करना संभव प्रतीत नहीं होता। क्योंकि रैदास संप्रदाय में प्रचलित जनश्रुतियाँ कुछ और है और हमारे पुरातन साहित्य में उपलब्ध उल्लेख कुछ और है। इस संपूर्ण सामग्री का विवेचन निम्न प्रकार किया जा रहा है –

'भविष्य पुराण' के अनुसार – 'रमानदासस्य तनयो, रैदास इति विश्रुतः॥'

रैदास के पिता का नाम मानदास दिया गया है। लेकिन 'रैदास की बानी' के संपादक ने उनके पिता का नाम 'रग्घू' दिया है। श्रीमती कला शुक्ला ने भी इसी नाम का उल्लेख किया है। बाद के सभी विद्वानों ने रैदास के पिता का नाम राघवदास या रग्घू ही दिया है।

उनकी माता का नाम 'रैदास की बानी' के संपादक ने 'घुरबिनिया' दिया है। श्रीमती कला शुक्ला ने भी यही नाम माना है। लेकिन संप्रदाय में प्रचलित रैदास की माँ का नाम 'कर्मा' या 'कर्माबाई' है। बाद के विद्वानों ने भी इसी नाम को

मान्यता दी है। कुछ विद्वान और रविदासिया धर्म के प्रर्वतकों ने रैदास की माता का नाम 'कलसी देवी' तथा पिता का नाम 'संतोखदास' दिया है। रैदास की एक बहिन के होने का उल्लेख संत कर्मदास ने 'रैदास महिमा' में किया है। जिसका नाम 'रविदासिनी' था। इसके अतिरिक्त इसका उल्लेख और कहीं नहीं मिलता।

रैदास की पत्नी का नाम 'लोना' था। रैदास संप्रदाय में भी यही नाम प्रचलित है और संबंधित साहित्य में भी यही मिलता है। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा है कि 'रविदास पुराण' के रचयिता परमानंद स्वामी ने लिखा है कि इनके एक पुत्र भी थे। जिनका नाम 'विजयदास' था। इसके अतिरिक्त इनके पुत्र होने का उल्लेख हमें और कहीं नहीं मिलता है। स्वामी रामानंद शास्त्री ने 'रैदास के पूर्वजों की तालिका' इस प्रकार दी है –

वंश
हरिनंद चतरकौर
पुत्र
राहू या राउ
पत्नी
करमा
पुत्र
रैदास

हमारे विचार से रैदास की वंशावली इस प्रकार हो सकती है –

वंश
हरिनंद चतरकौर
पुत्र
राघवदास या रघु
पत्नी
करमाबाई
संतान
पुत्र पुत्री
रविदास रविदासिनी
पत्नी
लोना
पुत्र
विजयदास

रविदास जी की शिक्षा की बात करें तो उस समय जब कि 'स्त्री शुद्रों न धियताम' के सूत्र का बड़ी मुस्तैदी से पालन किया जाता था, ऐसी स्थिति में किसी शुद्र की औपचारिक शिक्षा का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः अपने समकालीन और गुरुभाई कबीर की भाँति 'कागद मसि छुऔ नहीं कलम गहौ नहिं हाथ'। जैसी स्थिति रैदास की भी थी। संत कर्मदास ने इस संबंध में ठीक ही लिखा है –

'पंडित गुनी कोई ढिग न बिठाये।
वेद शास्त्र किन्हुँ न पढ़ाये॥
अंतरमुखी जाउ कीन्हों ध्याना।
चारिउ जुगनि का पायो गियाना॥
कागद कलम मसि कछु नाही जाना।
सतगुरु दीन्हो पूरन गियाना॥'

अधिकांश संतों की भाँति रैदास भी बहुश्रुत व्यक्ति थे। उन्होने अपना संपूर्ण ज्ञान सत्संग, भ्रमण और मनन द्वारा अर्जित किया था। जैसा कि डॉ. पद्म गुरुचरण सिंह ने भी लिखा है कि – ''इन्हें आध्यात्मिक ज्ञान सत्संग और स्वाध्ययन और व्यक्तिगत अनुभव द्वारा प्राप्त हुआ था। '' हमारा विचार है कि किसी भी युग की शिक्षा का जो उद्देश्य है वह रैदास के जीवन में पूर्णरूपेण फलीभूत हुआ था। उन्होंने 'रहने और कहने की कला' को पूरी तरह से जान लिया था। लेकिन यह सत्य है कि पाठशाला न जा पाने की विवशता में ही उनकी वाणी से यह पद मुखरित हुआ होगा। कहते हैं कि 'हारे को हरिनाम' ही अंतिम शरण है –

'चलि मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ।
गुरु की साटि ज्ञान का अक्षर,
बिसरत सहज समाधि लगाऊँ॥
प्रेम की पाटी, सुरति कर लेखनि,
दर्द-मझ लिखि आँक दिखाऊँ॥'

और उन्होंने 'प्रहलाद चरित' में तो स्पष्ट लिखा है कि मैने 'राम के नाम' के अतिरिक्त और कुछ नहीं पढ़ा है –

'हौ पढयौ राम को नाम, ऑन हिरदै नहिं आनौ।
अवर हुँ कछु न जानों, राम नाम हिरदै नहिं छाँड़ो॥'

इससे स्पष्ट है कि रैदास ने राम नाम के अतिरिक्त और कुछ नहीं पढ़ा, तो भी उन्हें वेद, गीता, उपनिषद आदि का अच्छा ज्ञान था। निष्कर्ष के रूप में

चौधरी इंद्रराज सिंह के शब्द ही पर्याप्त है। वे लिखते हैं – 'यह सत्य है कि तत्कालीन व्यवस्था के कारण और निम्न समझी जाने वाली चमार जाति का होने के कारण उन्हें किसी पाठशाला में बैठकर विधिवत वेद, शास्त्रदि या गुरुमुख से अध्ययन करने का सुयोग मिलना संभव नहीं था, परंतु उनकी वाणी के माध्यम से यह पता चलता है कि उन्हें वेद, उपनिषद, गीता, भागवत, पुराण, आदि विषयों का सार और उनकी विचारधारा का पूर्ण ज्ञान था। यहाँ हम भूल जाते हैं कि वेद या ज्ञान सुनने और मनन करने से प्राप्त होता है। ऋषियों को यह उपलब्धि श्रवण और मनन इन्हीं दो श्रोतों के द्वारा हुई थी। इन संतों को भी ज्ञानोपलब्धि सत्संग के द्वारा हुई थी और वह लगभग मौलिक थी। रैदास ने कृत्रिम अध्ययन को छोड़कर प्रभु की पाठशाला में पढ़ने का प्रयास किया। पुस्तक ज्ञान का बोध न होने के कारण ही इन्हें आत्म ज्ञान की पराकाष्ठा तक पहुँचने का अवसर मिला था।'

अब हम संत रविदास के सामाजिक चेतना या सामाजिक विचार की बात करें तो सामान्यत: रैदास का समय 15वीं शताब्दी अनुमानित किया जाता है। यह समय ऐसा था, जब भारत पर मुसलमानों के अत्याचारों, अनाचारों की आँधी जोरों पर थी। हिंदुओं की आँखों के सामने उनके देवालय घोषणाएँ करके गिराए जाते थे, उनके आराध्य देवताओं का अपमान किया जाता था। ऐसे समय में न तो वे विद्रोह ही कर सकते थे और न ही सिर झुकाये बिना जी ही सकते थे। अत: हृदय के आक्रोश को अपनी असहायता, निराशा और दीनता को प्रभु के सम्मुख कहकर मन को शांति देने के अतिरिक्त और रास्ता ही क्या था, तत्कालीन समाज की इस स्थिति को संत रैदास ने वाणी दी है–

'त्रहि-त्रहि त्रिभुवन पति पावन
अतिशय शूल सकल बलि जाऊँ।।'

मध्यकालीन भारत अंधविश्वासों के घनघोर अँधेरे में साँस ले रहा था, कुछ बेबुनियाद रूढ़ियों ने उसमें और सड़न पैदा कर दी थी। रैदास की ख्याति सर्वत्र फैल जाने के उपरांत भी सवर्ण हिंदू उन्हें अछूत ही समझते थे। दूसरा उल्लेख उनके काव्य में यूँ मिलता है –

'रैदास तूँ कॉवचि फली तूझे न छिवै कोय।'

इसके अतिरिक्त भी अपने हृदय के इस दर्द को उन्होंने अपनी वाणी में बड़ी सहजता से व्यक्त किया है–

'हम अपराधी नीच घर जन्में, कुटंब लोग हाँसी रे॥'

लोगों का यह उपहास ही व्यक्ति को अंतर्मुखी कर देता है और यह अपनी निराशा और उपेक्षा को सर्जनात्मक मोड़ देकर सामाजिक रूढ़ियों पर पुनर्चिंतन करता है, तब जाकर कहीं ये रूढ़ मान्यताएँ टूटती है। संत रैदास ने तत्कालीन रूढ़ियों के प्रति विद्रोह किया, इसलिए उन्हें सामाजिक क्रांति का अग्रदूत कहने में कोई अत्युक्ति नहीं है।

संत कवि रैदास जी ने सर्वप्रथम हिंदू-मुस्लिम एकता स्थापित करने का प्रयास किया। उनका कहना था राम और रहिम को एक समझा जाय तथा वेद और कुरान को लोग बराबर सम्मान दें -

'कृष्णा-करीम, राम-हरि, राघव, जब लग एक न पेशा
वेद-कतेब-कुरान-पुरातन सहज एक नहीं वेशा॥'

इसी तरह रैदास जी ने मंदिर-मस्जिद के झगड़े को परम-पिता परमात्मा का धर्म स्थल बताकर हिंदू और मुसलमानों को आपस में न लड़ने की सलाह दी। उनका मत है -

'मंदिर-मस्जिद एक है, इन मॅह अनतर नाहिं।
रैदास राम रहमान का, झगड़ऊ कोउ नाहिं॥
रैदास हमारा राम जोई, सोई है रहमान।
काबा कासी जानि यहि, दोउ एक समान॥'

वर्ण-व्यवस्था जैसे अभिशाप को भी रैदास ने सैद्धांतिक स्तर पर विरोध किया और कहते हैं -

'रैदास एक ही बूँद सौं, सब ही भयों वित्थार।
मूरिख है, जो करत हैं वरन अवरन विचार॥
'रैदास एक ही नूर ते जिमि उपज्यों संसार।
ऊँच-नीच किहि विध भये, ब्राह्मन और चमार॥'

इसके बाद उन्होंने स्पष्ट घोषणा कर दी कि कोई भी व्यक्ति जन्म के कारण ऊँच-नीच नहीं हो सकता, क्योंकि मनोवांछित जन्म लेना तो किसी के भी बस की बात नहीं। हाँ व्यक्ति के इहि-लौकिक कर्म अवश्य ही उसके श्रेष्ठत्व अथवा निकृष्टत्व को निर्धारित करते हैं -

'रैदास जन्म के कारणै, होत न कोई नीच।
नर को नीच करि डारि हैं, औछे करम की कीच॥'

भारत का दुर्भाग्य रहा है कि यहाँ पर जाति ही व्यक्ति का सामाजिक स्तर निर्धारित करती रही है। उसे ऊँच और नीच माने और मनवाने पर बाध्य करती रही है। संत रैदास इसलिए ऐसी जाति प्रथा को जो व्यक्ति-व्यक्ति को जोड़ती नहीं तोड़ती हो को रोग मानते हैं –

'जात-पाँत के फेर मंहि, उरझि रहई सब लोग।
मानुषता को खात हइ, रैदास जात कर रोग॥'

संत रैदास ने तत्कालीन समाज में प्रचलित इन सड़ी-गली मान्यताओं का विरोध कर वेद विहित मान्यताओं का प्रचार किया –

'जन्म जात मत पूछिए, का जात और पाँत।
'रैदास' पूत सम प्रभ के कोई नहिं जात-कुजात॥'

इसका कारण उनकी दृष्टि में यह है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी को बनाने वाला वह एक ही 'सिरजनहार' हार है। उस एक ही बूँद का विस्तार यह सारा संसार है। प्रत्येक व्यक्ति की आत्मा में उसी परमात्मा का अंश विद्यमान है, फिर किस आधार पर ब्राह्मण को श्रेष्ठ तथा शूद्र को निकृष्ट ठहराया जाए। उन्होंने जड़मति समाज को समझाया –

'एकै माटी के सभै भांडे, सभ का एकै सिरजनहार।
रैदास व्यापै एकौ घट भीतर, सभ को एकै घडै कुम्हार॥
रैदास एकै ब्रह्म का होई रहयों सगल पसार।
एकै माटी सब घट सजै, एकै सभ कूँ सरजनहार॥

इस प्रकार रैदास ने वर्ण व्यवस्था और जाति व्यवस्था का विरोध किया। वहीं पर उन्होंने इसकी नई व्याख्या भी प्रस्तुत की। उनकी दृष्टि में ब्राह्मण ऊँचे कुल में जन्म लेने के कारण नहीं होता, बल्कि ब्राह्मण वह है जिसमें ब्रह्मात्मा विद्यमान हो –

'ऊँचे कुल के कारणै ब्राह्मन कोय न होय।
जउ जानहि ब्रह्म आत्मा, रैदास कहि ब्राह्मण सोय॥ '
क्षत्रिय कौन? 'दीन-दुखी के हेत जउ वारै अपने प्रान।
'रैदास' उह नर सूर कौ, साँचा छत्री जान॥'

वैश्य कौन?

'रैदास' वैस सोई जानिये, जउ सतकार कमाय।
पून कमाई सदा लहै, लौटे सर्वत सुखाय॥
साँची हाटी बैठि करि, सौदा साँचा देई।
तकड़ी तौले साँच की, रैदास वैस है सोई॥ '

शूद्र कौन?

'रैदास' जउ अति अपवित, सोई सूदर जान।
जउ कुकरमी असुधजन, तिन्ह ही सूदर मान॥

कहा जा सकता है कि छुआछूत एवं ऊँच-नीच को ही नहीं बल्कि गुरु जी ने मांसाहार, अनैतिकता, के अतिरिक्त धनलिप्सा, दुराचरण जैसे तत्त्वों को असामाजिक बतलाकर एक लंबी क्रांति का सूत्रपात किया। धार्मिक संकीर्णताओं, भेदभावों को भी उन्होंने सर्वथा त्याज्य बतलाया है। क्योंकि वह भेदभाव ही 'वसुधैव कुटुंबकम्' का विरोधी है। इसी ने तो आदमी को आदमी से दूर किया है। मानवीयता के लोकोपकारी सिद्धांतों के प्रसार एवं प्रचारार्थ मंदिर, मस्जिद, गिरजाघर आदि पूजा स्थानों तथा काबा, काशी, मक्का, मथुरा आदि तीर्थ स्थानों का भी विशेष महत्व नहीं है। क्योंकि प्रभु का वास वहाँ नहीं व्यक्ति के हृदय में है -

'का मथुरा का द्वारका, का कासी हरिद्वार।
'रैदास' खोजा दिल आपना, तउ मिलिया दिलदार॥'

समस्त मिथ्याचारों तथा आडंबरों का संत रैदास ने डटकर विरोध किया। उनकी मान्यता थी कि 'श्मन चंगा तो कठौती में गंगाश्श। वस्तुत: मन की शुद्धता ही सर्वोपरि है उन्होंने समस्त बुराइयों पर एक-एक कर सशक्त चोट की। समाज सुधारक के नाते उन्होंने समाज की सही नब्ज को पकड़ा।

उपर्युक्त समस्त विवेचन के उपरांत निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि संत रैदास का जीवन और काव्य उदात मानवता के लिए आवश्यक सदाचारों के शाश्वत सैद्धांतिक मूल्यों का अक्षय भंडार है, जिसमें से प्रत्येक वर्ग और स्थिति तथा मानसिक स्तर पर व्यक्ति अपने लिए सुंदर-सुंदर मोतियों का चुनाव सुगमता से कर सकता है। उन्होंने हिंदू मुसलमानों में भावात्मक एकता स्थापित करने का प्रयास किए। छुआछूत तथा वर्ण व्यवस्था का विरोध कर सामाजिक स्वास्थ्य के लिए अचूक औषधि तैयार की। 'जीवहत्या' को पाप घोषित कर मांसाहारी जैसी प्रवृत्ति को समाप्त करने का प्रयास किया तथा अहिंसा के वैदिक सिद्धांत का प्रचार किया। वहीं पर मानव मात्र को पूजा के साथ-साथ श्रम के प्रति आस्था का भी उपदेश दिया। इससे भी बड़ी बात जो उस युग के और किसी संत कवि के काव्य में दिखाई नहीं देती वह है उनकी 'स्वतंत्र चेतना'। उन्होंने तत्कालीन समाज में व्याप्त सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक शोषण के खिलाफ आवाज उठाई थी। और एक ऐसे समाज की कल्पना की थी जिसमें ये सब विषमताएँ

न हों। प्रत्येक व्यक्ति श्रम करके जीविकोपार्जन करे तथा हिंदू तथा मुसलमान सब मिल कर भारत की इस पवित्र भूमि पर रहे तथा दूसरे सर्वांगीण विकास के लिए कार्य करें। इन संपूर्ण तथ्यों पर गंभीरता से विचार करने के उपरांत हम कह सकते हैं कि संत रैदास के काव्य का वैचारिक आधार बहुत दृढ़ तथा उसकी भावात्मक पृष्ठभूमि बहुत ही विस्तृत तथा सामाजिक महत्व की है जिसकी प्रासंगिकता सम-सामयिक संदर्भों में भी असंदिग्ध है।

3

रैदास के दोहे

ऐसा चाहूँ राज मैं जहाँ मिलै सबन को अन्न।
छोट बड़ो सब सम बसै, रैदास रहै प्रसन्न।। 1

करम बंधन में बन्ध रहियो, फल की ना तज्जियो आस।
कर्म मानुष का धर्म है, सत् भाखै रविदास।। 2

कृस्न, करीम, राम, हरि, राघव, जब लग एक न पेखा।
वेद कतेब कुरान, पुरानन, सहज एक नहिं देखा।। 3

कह रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमान मेटि आपा पर, पिपिलक हवै चुनि खावै।। 4

गुरु मिलीया रविदास जी दीनी ज्ञान की गुटकी।
चोट लगी निजनाम हरी की महारे हिवरे खटकी।। 5

जाति-जाति में जाति हैं, जो केतन के पात।
रैदास मनुष ना जुड़ सके जब तक जाति न जात।। 6

जा देखे घिन उपजै, नरक कुंड मैं बास।
प्रेम भगति सों ऊधरे, प्रगटत जन रैदास।। 7

रविदास जन्म के कारनै, होत न कोउ नीच।
नर कूँ नीच करि डारि है, ओछे करम की कीच।। 8

रैदास कनक और कंगन माहि जिमि अंतर कछु नाहिं।
तैसे ही अंतर नहीं हिन्दुअन तुरकन माहि।। 9

रैदास कहै जाकै हृदै, रहे रैन दिन राम।
सो भगता भगवंत सम, क्रोध न व्यापै काम।। 10

वर्णाश्रम अभिमान तजि, पद रज बंदहिजासु की।
सन्देह-ग्रन्थि खण्डन-निपन, बानि विमुल रैदास की।। 11

हरि-सा हीरा छांड कै, करै आन की आस।
ते नर जमपुर जाहिंगे, सत भाषै रविदास।। 12

हिंदू तुरक नहीं कछु भेदा सभी मह एक रक्त और मासा।
दोऊ एकऊ दूजा नाहीं, पेख्यो सोइ रैदासा।। 13

4

संत रविदास जी की तुलसीदास से तुलना

महायोगी गोरक्षनाथ के सन्दर्भ में गुरु नानकदेव, सन्त कबीरदास की कथा और किंवदन्तियों का परीक्षण हमने अब तक किया। अब जरा भक्त मीराबाई के साथ सन्त कबीरदास व सन्त रविदास से सम्पर्क, सन्त रविदास को भक्त मीराबाई के गुरु होने के तथ्यों का भी परीक्षण कर लिया जावे तो इन तीनों विभूतियों के साथ महायोगी गोरक्षनाथ की काशी में भेंट होना और सन्त रविदास की कठौती का पानी नहीं पीने पर "वो पानी मुलतान गया'' की कथा का आधार हिलता हुआ प्रतीत होता है। सन्त रविदास के जन्म के संबंध में हमें तीन तिथियां क्रमशः 1376 या 1399 या 1450 प्राप्त होती हैं, किन्तु उनके देहावसान की केवल एक तिथि वर्ष 1520 है और इस प्रकार उनकी आयु 144 या 127 या 70 वर्ष प्रकट होती है।

भक्त मीराबाई का जन्म 1498 अथवा 1506 में होकर वर्ष 1513 या 1516 में राणा कुम्भा से विवाह और राणा कुम्भा का वर्ष 1526-27 में युद्ध में मारे जाने के बाद राजपूती परंपरा अनुसार उन्हें सती किये जाने के प्रयास के तथ्य निर्विवाद हैं। मीरा की जीवनी पर अधिक चर्चा नहीं करते हुए प्रासंगिक और निर्विवाद तथ्य यह है कि राणा कुम्भा की युद्ध में मृत्यु (1526 या 1527) के बाद ही मीरा चित्तौड़ के महलों से निकल कर श्रीकृष्ण से अपनी प्रेम यात्रा

के क्रम में वृन्दावन और द्वारिका गयी, जबकि सन्त रविदास का देहावसान तो वर्ष 1520 में ही हो गया था।

प्रश्न यह है कि भक्त मीरा ने क्या महलों में रहते हुए ही सन्त रविदास से सम्पर्क किया होगा? अथवा मीरा के गुरु कोई अन्य सन्त रविदास थे?

हमारी शोधयात्रा में हमें कोई ऐसा प्रमाण नहीं मिला कि सन्त रविदास नाम से कोई अन्य सन्त रहा होगा और ज्ञात सन्त रविदास के राजपूताने (तत्समय जो भी संज्ञा रही हो) में आने के कोई प्रमाण नहीं हैं। अपितु तार्किक रूप से भक्त मीरा के विरोधाभाषी पद अवश्य मिले जो निश्चय ही एक अलग ही तथ्य को इंगित करते हैं। बाबा बेणीमाधव रचित 'गुसांई चरित अनुसार भक्त मीराबाई ने अपने परिजनों के व्यवहार से परेशान होकर किसी सुखपाल नामक ब्राहमण के साथ भक्त तुलसीदासजी को पत्रिका भिजवाई तदनुसार-

स्वसित श्री तुलसी कुलभूषण दूषन हरन गोसांई। बारहीं बार प्रनाम करहूं अब हरहूं सोक समुदाई॥
घर के स्वजन हमारे जेते सबन्ह उपाधि बढाई। साधु संग अरू भजन करत माहिं देत कलेस महाई॥
मेरे माता-पिता के समहौ हरिभक्तन सुखदाई। हमको कहा उचित करिबो है सो लिखिये समझाई॥

इसके प्रत्युत्तर में भक्त तुलसीदास ने लिखा-

जाके प्रिय न राम वैदेही। तजिए ताहि कोटि बैरी सम, जदयपि परम सनेही॥
सो छोड़िये, तज्यो पिता प्रहलाद, विभीषन बंधु, भरत महतारी।
बलिगुरु तज्यो कंत ब्रतबनितनित, भये मुद मंगलकारी॥
नाते नेह सबै राम के मनियत सुहृद सुसेव्य जहां लौं।
अंजन कहां आंखि जेहि फूटै, बहुतक कहौं कहां लौं॥
तुलसी सो सब भांति परमहित पूज्य प्रान ते प्यारो।
जासों हाय सनेह राम-पद, एतोमतो हमारो॥

सर्वोपरि रूप से भक्ति आन्दोलन की इन महान विभूतियों के जन्म और देहावसान की तालिका ही यह स्पष्ट कर देती है कि सन्त कवि मीराबाई और भक्त तुलसीदास के मध्य सम्पर्क होना असंभव है। मीराबाई आयु और भक्ती आन्दोलन की विभूतियों में पद सोपान के प्रतिष्ठित क्रम में तुलसीदास से इतनी वरिष्ठ हैं कि मीराबाई का उक्त पद उनके नाम से कूट रचित होकर किसी

विशेष उद्देश्य के निमित्त किसी छदम सन्देह को इंगित करता है। फिर यदि श्रीकृष्ण भक्त मीराबाई को किसी भी दुविधा के निवारणार्थ मार्गदर्शन ही चाहिये था तो अपने कथित (हम स्पष्ट कर चुके हैं और आगे पुनः चर्चा करेंगे कि मीराबाई और सन्त रविदास के परस्पर सम्पर्क की संभावनाएं नगण्य है) गुरु भक्त रविदास से पत्राचार करती। श्रीकृष्ण भक्ति में समर्पित मीराबाई को श्रीराम भक्त तुलसीदास से पत्राचार या अन्य प्रकार से सम्पर्क का न तो औचित्य ही था ना संभावना और न कोई प्रमाण।

बाबा बेणीमाधव ने सन्त तुलसीदास को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करने वाली अनेक कहानियां लिखी हैं जिनमें कवि केशवदास द्वारा एक ही रात में 'रामचन्द्रिका नामक वृहद काव्य की रचना कर उसके अनुमोदन के लिये तुलसीदास के पास अस्सीघाट पर जाना, भक्त सूरदास को अपनी रचना 'सूरसागर के अनुमोदन के लिये तुलसीदास के पास काशी जाना और कवि रसखान द्वारा निरन्तर तीन वर्ष तक 'रामचरित मानस' का श्रवण करना प्रमुख हैं। बाबा बेणीमाधव ने मीरा पर बडी कृपा की जो उन्हें अपनी दुविधा के निवारण के लिये मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु तुलसीदास के पास काषी जाना नहीं बताया और मात्र पत्राचार को ही माध्यम बनाया।

इसी प्रकार भक्त रविदास और मीराबाई का सम्पर्क होना भी संदिग्ध ही है। मीराबाई द्वारा रैदास को अपना गुरु मानने की जनश्रुतियों का मूल आधार मीराबाई के नाम से प्रचारित निम्नांकित पद है।

1. मेरो मन लाग्यो हरिजी सूं अब न रहूंगी अटकी। गुरु मिलिया रैदास जी दीन्ही ज्ञान की गुटकी।।
2. गुरु रैदास मिले मोहि पूरे धुर से कलम भिडी। सतगुरु सैन दई जब आके जोत में जोत जली।।
3. रैदास सन्त मिले मोहि सतगुरु दीन्हा सुरति सहदानी।
4. झांझ पखावज वेणू बाजिया झालरनो झनकार। काषी नगर के चौक माँ मने गुरु मिलिया रोहिदास।

देश (स्थान), काल (समय), और परिस्थितियों की कसौटी पर परीक्षण करें तो काशी के चौक में मीराबाई का रैदास से मिल पाना संभव ही नहीं था। यह निर्विवाद है कि रैदास के स्वर्गवास के समय मीराबाई की आयु 18-20 वर्ष थी और राणा कुंभा (भोजराज का यही नाम विख्यात होने के कारण इसी नाम को उल्लेख करने की विवशता है) तत्समय जीवित था, अतः मीराबाई मेवाड़

में ही थी। आवागमन के साधनों व सुविधा की कमी और मार्ग की कठिनाईयां इतनी विकट थी कि 120 वर्षीय वृद्ध रैदास का मारवाड आ सकना भी संभव नहीं था और ऐसा कोई तथ्य अब तक प्रकट भी नहीं हुआ है। वैसे भी रैदास अपने पारिवारिक दायित्वों को पूर्ण करने और आजीविका के लिये अपना नित्यकर्म करते हुए ही भक्ति करने वाले सन्त थे। न तो वे धुम्मकड़ साधू थे, न अपने मत के प्रचार के लिये उन्होंने कोई मिशन चलाया और न ही स्वयं को ज्ञानी या भक्त श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये ज्ञान गोष्ठियों में जाने के तथ्य मिलते हैं, फिर रैदास को गुरु मानने संबंधी ये पद कब और कैसे अस्तित्व आये? बहुत क्षीण संभावना यह है कि राणा सांगा की माँ रानी रत्नकुंवरी झाली का रैदास की शिष्या होने का उल्लेख प्रियादास लिखित भक्तमाल में है। भक्तमाल की विषय सामग्री कितनी विश्वसनीय है इस संबंध में विस्तृत चर्चा पृथक अध्याय में की गयी है। यहां यह पुनः शोध का विषय है कि राणा सांगा की माँ रैदास की शिष्या किस प्रकार थी और मीराबाई रैदास की शिष्या थी तों प्रियादास रचित भक्तमाल में मीरा का नाम क्यों नहीं आया? मीरा जैसे सर्वाधिक यशस्वी नाम को प्रियादास अपने मत के सम्मान व गुरु की कीर्ति बढ़ाने में सहायक हो सकने वाले इस अवसर को कैसे विस्मृत कर सकता था? फिलहाल, प्रस्तुत प्रसंग में ससुराल में अपनी दादी सास के पास आने वाले रैदास के शिष्यों से मीराबाई की आध्यातिमक और प्रभु चर्चाएं हुई होगी और रैदास के इन्हीं अथवा ऐसे ही शिष्यों ने कालान्तर में मीराबाई के नाम से उक्त पदों की रचना की गयी होगी।

वस्तुतः मीराबाई भक्ति काल के अन्तरिक्ष में टिमटिमा रहे संप्रदाय रूपी असंख्य छुटपुट ग्रहों के मध्य ऐसा देदीप्यमान प्रकाशपुंज है जिससे परावर्तित प्रकाश से अनेक क्षुद्र ग्रहों को पहचान मिली और कतिपय अवसरवादी समूहों ने स्वयं को प्रभासित करने के प्रयास के अतिरेक में अपने अंधकारयुक्त भाग को मीरा की परछाई बनाने में भी संकोच नहीं किया। श्रीकृष्ण के प्रेम व भक्ति की शक्ति और अलौकिक चमत्कारों की शृंखला ने मीरा की यश पताका को इतना विशाल कर दिया था कि उस समय के भक्त समूहों ने उस पताका में अपना नाम लिखने के कुत्सित प्रयास के क्रम में विरोधाभासी कथाओं और उन्हें प्रमाणित करने के लिये उनके नाम से साहित्य का सृजन तक कर लिया। अपने आध्यात्मिक मत का समर्थन जुटाने व गुरु की ख्याति बढ़ाने के प्रयास में ऐसी अनेक कथा और किंवदन्तियां अस्तित्त्व में आयी और संभवतः आती रहेगी किन्तु मीरा ना तो किसी सम्प्रदाय में दीक्षित हुई न किसी को गुरु बनाया। मीरा का

गुरु, सखा, रक्षक, पति, भजन, भक्ति, अध्यात्म अर्थात सबकुछ केवल और केवल श्रीकृष्ण थे यह सर्वकालिक ध्रुव सत्य है। देखा जाये तो मीरा स्वयं एकल सेना होकर एक संपूर्ण संप्रदाय है जिसका अनुयायी प्रत्येक वो जीव है, जो श्रीकृष्ण से प्रेम (केवल भक्ति नहीं) करता है। इन दासपंथी भक्तों ने प्रेमपंथी मीरा जैसे अन्तरिक्ष, जिसकी किसी से कोई प्रतिस्पर्धा ही नहीं है, को भी अपने जीर्ण-षीर्ण शामियाने में छांव तलाषने वाला बताने में संकोच नहीं किया तो अन्य प्रतिद्वन्द्वी संप्रदायों से संबद्ध साधुओं की प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचाने वाली कथाओं की असत्यता का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कथन योगी गोरक्षनाथ के संस्कृत ग्रन्थों में निहित योग सम्बन्धी पक्ष को नहीं समझने के कारण ही इस प्रकार उपालम्भ दिया गया है। फिर स्वयं योगी गोरक्षनाथ के प्रारंभिक संस्कृत साहित्य को छोड़ भी दें, तो योगी याज्ञवल्क्य, कपिल और पतंजलि के पुरातन साहित्य के अतिरिक्त पाश्चात्य विद्वान डब्ल्यू. जे. ब्रिग्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'गोरक्षनाथ एण्ड दर्शनी योगीज, में अनेक नाथयोगियों के नाम दिये हैं, जो न केवल शास्त्रज्ञ थे अपितु विद्वत्ता में उनका कोई सानी नहीं था। यहां तक कि इस काल में भी कतिपय को छोड़कर नाथ सम्प्रदाय के समस्त नाथयोगी शास्त्रज्ञ के साथ व्यावहारिक विषयों के पंडित भी हैं।

इसी भांति नाथ सम्प्रदाय में केवल निम्न जातियों के लोगों के आकर्षित होने का दीनदयाल जी ओझा का कथन भी भावना विषेष को तो इंगित करता ही है साथ ही आलोच्य लेख में ही मारवाड़ के राजाओं का नाथ मत में दीक्षित होना बताना उनके कथन को विरोधाभासी भी सिद्ध करता है। नाथ सम्प्रदाय में दीक्षित समस्त वर्णों के कुल गौत्रों के नामों पर दृष्टि नहीं जाने की बात छोड़ भी दें, तो भी अन्य बड़े-बड़े राजा रजवाडों और राजपुरुषों की ओर भी सम्भवतः उन्होंने न तो दृष्टिपात किया है और न ही ब्राह्माणवाद व सामन्तवाद में बराबरी के गोरक्षनाथ के सिद्धान्त को समझा है।

वास्तविकता यह है कि, वेद विमुखता और ब्राह्माण विरोधिता के कारण जो लोग समाज में अगृहीत रह गये उन्हें महायोगी गोरक्षनाथ ने योग की शक्तियों से योग्यता प्रदान कर उन शास्त्रज्ञों के आगे ला खड़ा किया, जिन्हें अपने शास्त्रज्ञान पर गर्व था। इसका सबसे अधिक उल्लेखनीय उदाहरण ज्ञानेश्वरी के रचयिता और महाराष्ट्र के सुप्रसिद्ध संत ज्ञानेश्वर द्वारा भैंसे जैसे शूद्र पशु के मुंह से वेदों का उच्चारण करवाने का चमत्कार बहुत अधिक पुराना नहीं है। कुत्ते के

पीछे घी की रोटी लेकर भागने वाले नामदेव का ब्रह्मज्ञान, रविदास की कठौति में से प्रकट होने वाली गंगा, निम्न जाति की कर्मा की खिचड़ी खाने वाले कृष्ण, शबरी के झूठे बेर खाने वाले राम, दलित और अछूतों के देवता (मलिन मानसिकता वाले लोगों के शब्दों में कहें तो ढेढों के देवता) कहलाने वाले युगपुरुष बाबा रामदेव, पराजय को विजय में बदल देने वाले दैत्य माता के पुत्र बर्बरीक (खाटूश्याम), लोक देवता गोगादेव, पाबूदेव व देवनारायण और ऐसे अनेक पतितों के उद्धारक स्वरूपों की पूजा ब्राह्माण समाज में स्वीकृत नहीं हो सकी। ऐसा ही पतित पावन स्वरूप योगी गोरक्षनाथ कर्मकाण्डी ब्राह्माणत्व पर एक करारी चोट था।

द्वितीयतः नाथ सम्प्रदाय के लिखित (विशेषतः हिन्दी में) इतिहास और साहित्य की हस्तलिखित प्रतियां बहुत प्राचीन नहीं मिलतीं। जो प्रतियां मिलती हैं उनमें योगी गोरक्षनाथ की रचनाएं सबसे प्राचीन हैं, जो विक्रम संवत 1715 की होना बतायी जाती हैं। निश्चय ही ये योगी गोरक्षनाथ की कृतियों का रचनाकाल नहीं हो सकता। हां प्रकाशनकाल हो सकता है। क्योंकि यदि सन्त कवि तुलसीदासजी से तुलना करें तो उनका जन्म श्रावण शुक्ल सप्तमी विक्रम संवत 1554 अंग्रेजी तिथि में सन 1532 है। तुलसीदास जी ने रामचरित मानस के बालकाण्ड में स्वयं लिखा है कि उन्होंने रामचरित मानस की रचना का आरंभ अयोध्यापुरी में विक्रम संवत 1631 (1574 ईस्वी) के रामनवमी मंगलवार को किया था। रामचरित मानस को लिखने में उन्हें दो वर्ष सात माह और छब्बीस दिन का समय लगा था। रामचरित मानस संवत 1633 (1576 ईस्वी) के मार्गषीर्ष के शुक्लपक्ष में रामविवाह के दिन पूर्ण हुआ था।

अब यदि योगी गोरक्षनाथजी की रचनाओं के बताये गये समय और तुलसीदास के रामचरितमानस की रचना के मध्य समय का अन्तर निकाला जाये तो योगी गोरक्षनाथ की रचनाएं रामचरित मानस से 84 वर्ष बाद की होनी चाहिये। तो क्या तुलसीदास ने 84 वर्ष पूर्व रामचरितमानस के प्रारम्भ में ही 'गोरख जगायो जोग, भक्ति भगायो लोग' लिख दिया था? इसका आगे अर्थ यह हुआ कि न केवल योगी गोरक्षनाथ के जन्म एवं काल वरन उनकी रचनाओं के समय के साथ भी षड़यन्त्र किया गया जो उनका हिन्दी का पहला कवि होने के श्रेय को हथियाने के संबंध में था। यह तो महायोगी गोरक्षनाथ जैसे पूर्ण प्रतिष्ठित व्यक्तित्व की महिमा को जनसामान्य में क्षति पहुचाने का बहुत शूद्र उदाहरण मात्र है, किन्तु अन्य रमते योगियों की वाणियों का हस्तलिखित रूप में नहीं मिलना

कोई आश्चर्य की बात नहीं है। जैसा कि इनकी संज्ञा से ही सिद्ध है कि, ये वाणियां हैं, क्योंकि ये शिष्य परम्परा और अनुयायियों के माध्यम से श्रुति द्वारा आयी हैं। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि, यद्यपि श्रुति परम्परा से आने वाले साहित्य में, शिष्यों की प्रगाढ़ श्रद्धा और विश्वास के कारण उसकी मौलिकता पर सन्देह नहीं किया जा सकता किन्तु स्मृति में त्रुटि की सम्भावना के कारण उनमें कुछ परिवर्तन अथवा विस्मृति हो सकती है। फिलहाल, उपरोक्त गवेषणा इस तथ्य को सिद्ध करती हैं कि, योगी गोरक्षनाथ हिन्दी के सबसे पहले कवि हैं।

वास्तविकता यह भी है कि, जिस प्रकार महर्षि वाल्मीकि द्वारा संस्कृत में रचित रामायण महाकवि तुलसीदास द्वारा लोकभाषा में रामचरितमानस में रूपान्तरित होकर ही लोकप्रिय हो सकी, उसी प्रकार योगी गोरक्षनाथ द्वारा रचित संस्कृत ग्रन्थों ने पहले तो शास्त्रज्ञों की कुण्ठाओं पर चोट की, जिससे समाज का संभ्रांत और उच्च समझे जाने वाले वर्ग के लोग नाथपंथ से जुड़े और इसके पश्चात लोकभाषा में रचित उनकी वाणियों ने समाज के निम्न और अशिक्षित लोगों के लिये योगमार्ग प्रषस्त किया। उनकी वाणियों में आत्मानुभूति एवं सामाजिक सन्दर्भ के पक्ष को भी दार्शनिक चिन्तन के समान ही महत्त्व दिया गया है। नाथपंथ की इसी विषेषता ने इस मत को समाज के सभी वर्ण और वर्गों में लोकप्रिय बना दिया कि महाकवि तुलसीदास को रामचरितमानस के आरम्भ में ही "गोरक्ष जगायो जोग, भक्त भिगायो लोग लिखना पड़ा।

संत गुरु कबीर एवं संत गुरु रैदासः वैचारिक अंतः संबंध

वैदिक युग से आज तक चली आ रही भारतीय वर्णाश्रम व्यवस्था ने मानव जाति के साथ बहुत अन्याय किया है। छोटे-बड़े के नाम पर अलग-अलग सिद्धांत बनाए गए जिनका कि अभी तक पालन किया जाता रहा है। और इन सिद्धांतों के कारण सवर्ण और अवर्ण लोगों के बीच की सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक खाई इतनी गहरी हो गई कि उसे कम कर पाना अत्यंत कठिन हो गया है। कठोर कानून बनाने के बावजूद आज भी निम्न जातियों के साथ बुरा बर्ताव किया जा रहा है। इसके कारण न जाने कितने दंगे हुए, कितने लोगों को आज भी मन्दिर प्रवेश की अनुमति नहीं है।

भक्तिकालीन कवियों ने इस अमानवीय व्यवस्था के खिलाफ सबसे पहले आवाज बुलन्द की। राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक दृष्टि से निस्तेज मध्ययुग

को स्वर्ण युग बनाने का श्रेय निस्संदेह भक्तिकालीन संत कवियों और मुख्य रूप से उनकी लोकचेतना को जाता है। संतकाव्य ईश्वर के नाम पर जातिगत और धार्मिक भेदभाव के विरुद्ध बिगुल है। इनकी कविता 'वसुधैव कुटुम्बकम' के सिद्धांत पर आधारित है। वर्णाश्रम के विरोधी रामभक्त कवि रामानंद ने अपने शिष्यों के माध्यम से रामभक्ति का प्रचार-प्रसार किया। भले ही रामानंद रामभक्त थे किंतु उनके शिष्यों में सगुण-निर्गुण उपासक दोनों थे। कबीर और रैदास उनके बारह शिष्यों में प्रमुख माने जाते हैं। कबीर और रैदास उदात्त मानवतावादी प्राणधारा के उन कवियों में से थे जिन्होंने मध्यकालीन युग में गरीब और हताश लोगों को अपनी बानी से प्रोत्साहित कर उनका मार्गदर्शन किया। वर्णभेद, जातिभेद एवं सांप्रदायिकता का विरोध और निर्गुण की उपासना आदि कुछ ऐसी समानताएँ हैं, जो हमें कबीर और रैदास दोनों में ही देखने को मिलती हैं। दोनों की पैदाइश काशी की थी और जाति से एक चमार तो दूसरा जुलाहा था। स्वयं जातिगत भेदभाव से पीड़ित होने के बावजूद दोनों ही कवियों ने छाती ठोंककर अपनी जाति का उल्लेख अपनी बानियों में किया।

कहे रैदास खलास चमारा।

रैदास स्वयं का उदाहरण देकर कहते हैं कि सच्चे भक्त की कोई जाति नहीं होती और सच्ची भक्ति के कारण नीच जात में उपजा मानव भी श्रद्धेय बन जाता है।

जाके कुटंब के ढेढ सब ढोर ढोवंत फिरहिं, अजहूँ बनारसी आसा पासा।
आचार सहित बिप्र करहिं दंडौति तिन तनै रैदास दासानुदास॥

जहाँ शूद्रों को मन्दिर प्रवेश पर मनाही थी वहाँ कबीर और रैदास जैसे संतों ने मन्दिरों का ही विरोध किया, उसमें रखी उन मूर्तियों का विरोध किया जो सिर्फ सवर्णों की संपत्ति समान थीं। दरअसल, इन संतो का मानना था कि जब सबका रचियता एक है चाहे वह सवर्ण-अवर्ण हो या हिन्दू-मुस्लमान। तो उस रचियता पर सबका एकसमान अधिकार होना चाहिए। रैदास कहते हैं-

जब सभ करि दो हाथ पग, दोउ नैन दोउ कान।
रविदास पृथक कैसे भये, हिन्दु मुसलमान॥

रैदास की मानवतावादी दृष्टि सब को धार्मिक व सामाजिक समानता का दर्जा देती है और उन्हें एक-दूसरे के करीब लाने का कार्य करती है। ऐसा नहीं है कि कबीर पुरोहितों और मौलवियों पर कठोर शब्दवार करते हैं तो यह माना

जाए कि उनकी दृष्टि सांप्रदायिक थी। बल्कि सच तो यह है कि कबीर ने हिन्दु-मुस्लिम में कोई भेद नहीं किया। दोनों ही उनके लिए एकसमान थे। उन्हें कुछ नापसन्द था तो वह थोथा ज्ञान और पाखण्ड जो मावन-धर्म के विरुद्ध था। सच तो यह है कि इन दोनों संतों ने साम्प्रदायिक सद्भाव की मिसाल कायम की है। कबीर कहते हैं-

भाई रे दुई जगदीश कहां ते आया, कहु कौन भरमाया।

दरअसल, सांप्रदायिक सद्भाव का यह प्रयास उस समय की सबसे बड़ी जरूरत थी क्योंकि इन दोनों धर्मों के मालिक बने बैठे लोग एक-दूसरे के धर्म का न केवल दुष्प्रचार कर रहे थे बल्कि मन्दिर मस्जिद भी तुडवा रहे थे। हिन्दुओं में केवल सवर्णों के लिए ही ईश्वर पूजनीय था और शूद्रों के लिए सवर्ण पूजनीय थे। सदियों से चली आ रही जाति प्रथा की बुराईयों को पहचानकर इन्होंने कर्म को महत्व दिया। रैदास का मानना है -

जन्म जात कूँ छांडि करि, करनी जात परधान।
इह्यौ बेद को धरम है, करै रविदास बखान।।

रविदास के मानवीय-धर्म पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की यह टिप्पणी एकदम सही है कि ''अन्य संतों की तुलना में महात्मा रविदास ने अधिक स्पष्ट और जोरदार भाषा में कहा है कि 'कर्म ही धर्म' है। उनकी वाणियों से स्पष्ट होता है कि भगवद्भजन, सदाचारमय जीवन, निरहंकार वृति और सबकी भलाई के लिए किया जाने वाला कर्म, ये ही वास्तविक धर्म है। '' जब थोथे धर्म ज्ञान और पाखण्डी विचारधारा का इन्होंने विद्रोह किया तो ये विद्रोही कहलाए। देखा जाए तो यह धर्मविद्रोह नहीं बल्कि उसका शुद्धिकरण है। और संभवत: इसीलिए इन्होंने निर्गुण निराकार ब्रह्म की भक्ति की। और यह निर्गण निराकार ब्रह्म उन सभी निम्न जातियों और समाज से बेदखल लोगों का बहुत बड़ा धार्मिक विकल्प था जिन्हें मन्दिरों से दूर रहने की हिदायतें दी जाती थीं या धार्मिक रूप से बेदखल कर दिया गया था।। व्रत, तीर्थ, स्नान, मालाजाप, उपवास, रोजा आदि का विरोध कर कबीर और रैदास ने सच्चे मन से निराकार ब्रह्म की भक्ति करने का रास्ता प्रशस्त कर उन लोगों को नई राह दिखाई जो किनारे पर फेंक दिए गए थे। जीवनभर आर्थिक दरिद्रता का सामना करते-करते, कपड़ा बुनते-बुनते, जूतियाँ गाँठते-गाँठते इन्होंने उस फटीचर रूढ़ियों, कुरीतियों और आडंबरों से क्षीण समाज की भी बुनाई सिलाई करते रहे। उनकी जाति से बड़ा उनका जीवनयापन और जीवनदर्शन रहा जिसने न केवल ज्ञान और भक्ति

की आँधी आई बल्कि श्रमिकों को सम्मानपूर्वक जीने की राह बताई और भारतीय समाज और संस्कृति के विकृत अंश का विरेचन भी किया।

ब्राह्मणवादी विचारधारा के लोगों ने समाज को बाँटने और समाज में अपना वर्चस्व बनाने के लिए भक्ति जैसे सद्भाव के साथ छेड़छाड़ कर स्वयं को उसका उत्तराधिकारी बनाया था। और इसी कुटिल सोच के कारण जातिप्रथा और अस्पृश्यता जैसी कुप्रथाओं का प्रारंभ हुआ। धर्म के नाम पर हो रहे तमाशे को इन संतों ने बखूबी पहचान लिया था और इसीलिए इस गंदगी की सफाई की शुरूआत भी इन्होंने वहीं से की जहाँ से यह महामारी फैली थी। इन्होंने भी भक्ति का सहारा लिया। किंतु इनकी भक्ति में धार्मिक-सामाजिक संकीर्णताओं के लिए कोई जगह न थी। तभी तो इनके लिए सामान्य स्थानों और तीर्थ स्थानों में कोई भेद नहीं था। इनके लिए तो सच्चा तीर्थ स्थान तो वह दिल है, जो प्रेम की बानी बोलता है और वहीं प्रभु का वास भी है।

का मथुरा, का द्वारका, का काशी, हरिद्वार?
रविदास जो खोजा दिल आपना तो मिलिया दिलदार।

'झीनी झीनी बीनी चदरिया में जो ध्वनि और मनुष्यवादी ऊर्ध्व दृष्टि मौजूद है, उसमें कबीर ने सुर, नर, मुनि को अपनी चदरिया उढ़ाई नहीं है। जिस तार से उन्होंने उदरिया बीनी है उसी से उन्होंने ब्राह्मणवादी पुरोहितवाद को नंगा किया है। ..'सो चादर सुर, नर, मुनि ओढ़ी, ओढ़ के मैली कीन्ही चदरिया, दास कबीर जतन से ओढ़ी, जस की तस कर दीन्हीं चदरिया'। यही है सामान्य आदमी का सत्य जो कबीर जैसे जुलाहे की तरह ही अपने जीव को मैला नहीं होने देता।'

रैदास ने जिस ब्रह्म का पूजन किया वह निर्गुण निराकार न होकर सगुण निराकार है। और उसकी शरण के बिना जीव का उद्धार नहीं हो सकता।

बिनु रघुनाथ शरनि काकि लीजै।

रैदास ने माधव, राम, हरि नामों से ईश्वर को पुकारा अवश्य है, किंतु उनके ब्रह्म का स्वरूप भी वही है, जो कबीर के यहाँ हैं।

दसरथ सुत तिहुँ लोक बखना राम नाम का मरम है आना।

रैदास कहते हैं -

राम कहत सब जग भुलाना सो यह राम न होई।
जा रामहि सब जग जानत भरम भूलै रे भाई।

कबीर की भाँति रैदास की बानी में निर्गुण ब्रह्म की अनुभूति और जिज्ञासा दिखाई देती है। मूर्ति पूजा, तीर्थ यात्रा, ढोंग-ढकोसलें आदि बाह्य विधानों का विरोध कर तन-मन अर्पित कर परमात्मा को प्रसन्न करने की कोशिश करते हैं।

तन मन अरपउ पूज चढाउ। गुरु प्रसादि निरजंन पावउ।।

कबीर की सांस्कृतिक चेतना भारतीय संस्कृति की घिसी-पिटी धारणा का तिरस्कार करती है। कबीर विद्रोही थे मगर भारतीय समाज के उन जड़ पहलुओं के जो मानव को मानवीय अधिकारों से दूर करते थे। उस हिस्से के जो सड़ गल चुके थे। और जिनसे अंधविश्वास की बू आती थी। कबीर तत्कालीन धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जड़ता को दुत्कारते हुए एक मानव धर्म के लिए आवाज बुलन्द कर रहे थे। समाज और धर्म के ठेकेदारों द्वारा निम्न जाति जनसमूह के लिए बंद किए गए द्वारों को पीटकर उनसे प्रश्न करने का साहस करती है कबीर की कविता। उन लोगों द्वारा फैलाई गई भेदगत गन्दगी को साफ करने का प्रयत्न करती है उनकी कविता। उस युग में काव्यरचना इस लालच से की जाती थी कि किसी शासक का संरक्षण प्राप्त हो सके। मगर कबीर जैसे क्रांतिकारी, विद्रोही और असमझौतावादी संत ने मानव जीवन की बेहतरी के अलावा न कोई सपना देखा न कोई समझौता किया।

''कबीर ने जीवनभर जो कुछ प्रचारा और कहा उसे, पचाना और हजम करना तो दूर, उसे गले के नीचे उतार पाने तक का बूता समाज, शासन तथा धर्म के मसीहाओं के पास न तब था और न आज है।' कबीर जाति, धर्म, वर्ण, वर्ग, संप्रदायादि को नकारने वाले केवल इंसानियत के पुजारी थे और उस इंसानियत के लिए वह अपना सब कुछ दाँव पर लगाकर एक अद्‌भूत अस्वीकार का साहस लेकर कर्मक्षेत्र में उतरे थे। मगर उनका साथ देने वाला उन जैसा साहसी पुरुष न उस समय हुआ और न ही आज भी है। बड़े दु:ख की बात है कि कड़वे लगने वाले इनके बोल के पीछे छिपी मिठास को कोई भी न भाँप सका।

कबिरा खड़ा बजार में लिये लुकाठी हाथ।
जो घर जारे आपना चले हमारे साथ।।

बिना थके बिना हारे जीवनभर कबीर एक सच्चे मानव धर्म की खोज के लिए चलते रहे, बोलते रहे। उन्होंने हिन्दु मुस्लिम दोनों को नकारा और उन भटके ठेकेदारों को प्रेम की राह दिखाने का अथक प्रयास करते रहे।

अरे इन दोउ राह न पाई
हिन्दुवन की हिन्दुवाई देखी, तुरकन की तुरकाई।।

कभी कबीर इनका मखौल उड़ाते हैं तो कभी इनके ढ़ोंग ढँकोसलों की धज्जियाँ उड़ाते हैं। इंसानियत को भूल कर खोखले रीतिरिवाजों की वकालत

करने वाले पाखंडी मुल्ला-पंडितों पर अन्दर तक तिलमिला देने वाली फब्तियाँ कसते हैं।

साधे पांडे निपुण कसाई
बकरि मारि भेड़ि को धाए, दि लमें दरद न आई
करि अस्नान तिलक दे बैठे, विधिसों देव पुजाई,
आत्म मार पलक में बिनसे, रूधिर की नदी बहाई,
अति पुनीत ऊंचे कुल कहिए, सभा माहिं अधिकाई
इनसे दिच्छा सब कोई मांगे, हांसि आवै मोंहि भाई॥

और

काजी कौन कतेब बखाने।
पढ़त पढ़त केते दिन बीते, एकै नहिं जाने॥

कबीर की वाणी कटु अवश्य थी किंतु वे अंहकारी नहीं थे। वैसे भी जो इंसान प्रेम की राह पर चलने से पहले अपना अहंकार रूपी सिर काटकर रख दे उसमें अहंकार कैसे हो सकता है।

कबीर यह घर प्रेम का खाला का घर नाहिं।
सीस उतारे मुँह धरे तो घर पैठे आहि॥

कबीर का अंदाज-ए-बयान बेहद ही बेबाक और फक्कड़ाना है। इनकी हृदय की मिठास और कोमलता के दर्शन इनके भक्ति विषयक पदों में होते हैं। कबीर भी नारियल की तरह बाहर से कठोर और अन्दर से कोमल थे। उन्होंने तत्कालीन समाज को कोई क्षति नहीं पहुँचाई, बल्कि उन्होंने क्षतिग्रस्त समाज को एक ऐसी नई राह दिखाई जिसकी छाप आज तक विद्यमान है। इन्होंने इन्सान और इन्सानियत के टूटे हुए पुल को बाँधने का कार्य किया। उनकी बाहरी कठोरता का कारण भी वही सुविधाभोगी और स्वार्थी समाज था जिन्होंने कबीर की चिंता और रुदन को अनसुना कर दिया था। विवशत: इन्हे विद्रोही स्वर अपनाना पड़ा:

सुखिया सब संसार है, खावे और सोवे।
दुखिया दास कबीर है जागे और रोवे॥

कबीर और रैदास ने जीवन को क्षणिक माना है। कबीर इसकी तुलना पानी के बलबुले से करते हैं तों रैदास इसे कुशुम्भ फूल के रंग के समान क्षणिक है-

जैसा रंगु कुसुभु का तैसा इहु संसारू।

रैदास ने जीव को परमात्मा का अंश स्वीकारा है। सोई मुकुंद हमार पित माता कहकर ब्रह्म के बिना हमारा कोई अस्तित्त्व नहीं और भक्ति भावना से हीन जीव माटी का पुतरा है।

ऊँचे मन्दिर सुंदर नारी।
राम ना बिनु बाकी हारी।।

दोनों ही संतों ने सत्गुरु, सतसंग और सत् आचरण के तीन सौपान बताए हैं जिनके बिना परमेश्वर की प्राप्ति असंभव थीं। रैदास का मानना है कि साधु संगति के बिना भगवान के प्रति प्रेमभाव उत्पन्न नहीं हो सकता और बिना भाव के भक्ति नहीं हो सकती।

साधु संगति बिनु भाव नहीं उपजै। भाव बिनु भगति होई न तेरि।।

जीव का साध्य यही है कि वह संत आचरण का अनुकरण करते हुए भक्ति में तल्लीन होकर अपने अहम् को उस अव्यक्त शक्ति में इस प्रकार विलीन कर दे जिससे सभी प्रकार के भेद समाप्त हो जाए और जीव और आत्मा में कोई भेद न रह जाए।

संत अनंतंहि अंतः नाहि।

सद्गुरु के प्रति न केवल कबीर और रैदास बल्कि सभी भक्त कवियों में श्रद्धाभाव देखने को मिलता है क्योंकि सद्गुरु के संबंध में सबका यह मानना है कि इनके बिना परमेश्वर से मिलन असंभव है। सद्गुरु की सहायता से ही वह अव्यक्त शक्ति से अपना रागात्मक संबंध जोड़ सकता है। कबीर ने तो गुरु को गोविन्द से भी ऊपर का दर्जा दिया है।

गुरु गोविन्द दोउ खड़े काके लागूं पांय।
बलिहारी गुरु के जाक गोविन्द दिया मिलाय।।

बेशक ये संत अनपढ़ थे किंतु सत्संग एवं अनुभव द्वारा अर्जित इनका ज्ञान और भक्ति उन पंडितों से कहीं अधिक सच्ची और पवित्र था जो दिन-रात गंगा में डूबकियाँ लगाते और मन्दिर की घण्टियाँ बजाते रहते थे। ये दोनों ही संत आंतरिक साधना पर बल देते हैं। कभी कबीर कहते हैं-

कर का मनका डारिके मन का मनका फेर।

तो कभी कहते हैं -

मन न रंगाए, रंगाए जोगी कपड़ा।

मगर रैदास का तरीका थोड़ा अलग है। वे कबीर की तरह धार्मिक क्षेत्र के दोषों पर कठोर प्रहार नहीं करते। वह तो बड़ी विनम्रता से पूजन सामग्री को जूठा बता मन की पवित्रता को पूजन सामग्री बनाने का आग्रह करते हैं।

दूधु त बछरै थनहु बिटारियो। फूलु भवरि जलु मीनि बिगारिओ।
माई गोविन्द पूजा कहा लै चरावउ। अवरु न फूलु अनूपु न पावउ।।

यहाँ विचारणीय बात यह है कि ब्राह्मणवादी विचारधारा के लोगों ने धार्मिक कर्मकाण्ड़ों में शुचिता पर अत्याधिक बल दिया और इसी बल का सहारा लेकर अस्पृश्यता जैसा रोग फैलाया। मगर रैदास ने इस शुचिता पर विनम्र शब्दों में ऐसा कठोर प्रहार किया कि मनुस्मृति जैसे ग्रन्थों के सिद्धांतों की भी धज्जियाँ उड़ गई। उनका तर्क बहुत ही सराहनीय है क्योंकि जब फूल, पानी जैसी वस्तुएँ भी पवित्र नहीं है तो सवर्ण और अवर्ण का भेद कैसा? अगर निर्मल कुछ हो सकता है तो केवल मन के भाव, बाकी सब तो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जूठे हैं। सचमुच इन दोनों ही संतों ने उन औपचारिकताओं को धर्म से दूर करना चाहा था जो पूजा और अर्चना को कठिन और अर्थहीन बनाती हैं। रैदास कर्मकांड को विशेष महत्व नहीं देते हैं। उनकी आस्था उस धर्म एवं साधना पर नहीं है, जो केवल दिखावा है। इसीलिए वे मूर्ति पूजा, यज्ञ, पुराण कथा आदि की भी उपेक्षा करते हैं। उसकी दृष्टि में ईश्वर कर्मा है, सर्वव्यापक है, अन्तर्यामी है तथा भक्ति से प्रसन्न होकर दीन और दलितों का उद्धार करने वाला है। यह सच है कि इन दोनों संतों की भक्ति में नवधा भक्ति के गुण नहीं मिलते। मिलते भी कैसे ? इनका परमेश्वर तो निर्गुण निराकार जो ठहरा, लेकिन फिर भी इनकी भक्ति में जो भक्ति और भावना और मधुरता है वह सूर या तुलसी जैसे भक्तों से किसी मायने में कम नहीं।

प्रभुजी! तुम चंदन हम पानी, जाकी अंग अंग बास समानी।
प्रभुजी! तुम घन बन हम मोरा, जैसे चितवत चंद चकोरा।
प्रभुजी! तुम दीपक हम बाती, जाकी जोकि बरै दिन राती।
प्रभुजी! तुम मोती हम धागा, जैसे सोनहि मिलत सुहागा।
प्रभुजी! तुम वामी हम दासा, ऐसी भक्ति करै रैदासा।

कबीर ने मोहमाया का बड़े कटु शब्दों में विरोध किया है। उनका तो यहाँ तक मानना है कि इसके जाल में त्रिदेव तक फंसे हुए हैं।

माया महाठगिनी हम जानी।
तिरगुन फांसि लिए कर डौलै बोलै मधुर बानी।।

इस विषय पर रैदास की दृष्टि कबीर से थोड़ी अलग तरीके से देखती है। क्योंकि रैदास भक्त होने के साथ-साथ गृहस्थ जीवन भी जी रहे थे। इसलिए उन्होंने कंचन-कामिनी का विरोध न करके उसकी अति अर्थात् उसके नशे में डूबे रहने को बुरा बताया। घर-परिवार छोड़कर वन भागने वाले वैरागियों को नसीहत दी।

वन खोजो पी ना मिला बन में प्रीतम नाहिं, रविदास पी हम बसे, रहियो मानव प्रेमी माहि।

वस्तुत: रैदास और कबीर के व्यक्तित्व की तुलना उस कमल से की जा सकती है, जो संसार रूपी कीचड़ में पैदा होकर भी उस सांसारिक गंदगी से अनछुआ रहता है। न केवल अनछुआ बल्कि अपनी सुन्दरता से तालाब को भी सुन्दर बनाता है। दरअसल, रैदास और कबीर उस थोथे पुस्तकीय ज्ञान की निंदा करते हैं जिसका प्रयोग पाखंडी लोग अपने स्वार्थ हेतु करते हैं। इन संतों ने मन्दिर से बेहतर मन मन्दिर को बताया जिसमें प्रज्ज्वलित सच्ची भक्त-भावना रूपी ज्योति से परमेश्वर की दिन-रात आरती की जानी चाहिए। इन्होंने तो ज्ञान, भक्ति और सत्कर्म का समन्वय कर ऐसी माला बनाई जिसे फेरने से न केवल समाज और धर्म के दोष दूर होगें बल्कि मानव-विकास का सच्चा मार्ग भी प्रशस्त होता है। इन्होंने मूर्तिपूजा का विरोध कर मानवता की पूजा करने पर जोर दिया। नाम की जगह भाव को महत्व दिया। इन्होंने न केवल ईश्वर और मनुष्य को पास लाने का कार्य किया बल्कि मनुष्य को मनुष्य से प्रेम करना सिखाया। इन्होंने बार-बार अहंकार को त्याग करने और मानव प्रेम की वकालत की बात की।

इसी मानव प्रेम की चाह कबीर को भी है। क्योंकि उनका लोकधर्म शास्त्रीय धर्म और झूठे लोक विश्वास की आलोचना है। इस संबंध में मैनेजर पाण्डेय का यह कथन पूर्णत: सत्य प्रतीत होता है कि ''कबीर के लोकधर्म में व्यक्ति के आध्यात्मिक उत्कर्ष से अधिक महत्वपूर्ण है समाज में मनुष्यत्व का जागरण। भक्ति दर्शन के अनुसार भक्ति के क्षेत्र में अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष, ब्राह्मण-शुद्र आदि का भेद नहीं होता। कबीर इस आध्यात्मिक सत्य को सामाजिक सत्य बनाते हैं और एक समतामूलक समाज के निर्माण की माँग करते हैं और इस माँग को करते-करते उनका इस देश से मोहभंग हो जाता है तभी तो वह अपना अलग यूटोपिया बनाते हैं अमरदेश।

जहवाँ से आयो अमर वह देसवा।
पानी न पान धरती अकसवा, चाँद न सूर न रैन दिवसवा।
बाम्हन छत्री न सूद्र बैसवा, मुगल पठान न सैयद सेखवा।।
आदि जोत, नहिं गौर गनेसवा, ब्रह्म बिसनु महेस न सेसवा।
जोगी न जंगम मुनि दुरबेसवा आदि न अंन न काल कलेसवा।
दास कबीर के आए संदेसवा, सार सबद गहि चलौ वहि देसवा।।

सार सबद गहि चलो वह देसवा यानी कबीर स्वयं भी यही कहते हैं कि उनके सारे शब्दों का एक ही सार, एक ही उद्देश्य है एक समतामूलक समाज। ''कबीर की कविता सपना देखती है, ऐसे अमरलोक का, जिसमें मनुष्य की मनुष्यता ही महत्वपूर्ण है। कबीर के देखें सपने में न ब्राह्मण हैं, न क्षत्रिय। न सैयद हैं न शेख। न शूद्र हैं न वैश्य। कबीर का सपना न तो सिर्फ सामाजिक 'मुक्ति' तक सीमित है, न सिर्फ आध्यात्मिक मुक्ति तक। उनके सपने में ये दोनों मुक्तियाँ एक-दूसरे का विरोध नहीं, पोषण करती हैं। कबीर जैसा सपना रैदास भी देखते हैं। उनका बेगमपुरा वही जगह है, जो कबीर के यहाँ हैं।

ऐसा चाहूँ राज मैं जहाँ मिलै सबन को अन्न।
छोट बड़ो सब सम बसै रैदास रहै प्रसन्न॥

कहना न होगा कि इन दोनों संतों का एक ही सपना है भेदभाव मुक्त समाज। ऐसा समाज जहाँ किसी भी आधार पर मानव को मानव से दूर करने वाली लकीरें न हों और इनका यही सपना आज भी इन्हें हमारे और भी निकट ला देता है।

5

पद संत रविदास जी

1. अखि लखि लै नहीं का कहि पंडित, कोई न कहै समझाई।
अखि लखि लै नहीं का कहि पंडित, कोई न कहै समझाई।
अबरन बरन रूप नहीं जाके, सु कहाँ ल्यौ लाइ समाई।। टेक।।
चंद सूर नहीं राति दिवस नहीं, धरनि अकास न भाई।
करम अकरम नहीं सुभ असुभ नहीं, का कहि देहु बड़ाई।। 1।।
सीत बाइ उश्न नहीं सरवत, कांम कुटिल नहीं होई।
जोग न भोग रोग नहीं जाकै, कहौ नांव सति सोई।। 2।।
निरंजन निराकार निरलेपहि, निरबिकार निरासी।
काम कुटिल ताही कहि गावत, हर हर आवै हासी।। 3।।
गगन धूर धूसर नहीं जाकै, पवन पूर नहीं पांनी।
गुन बिगुन कहियत नहीं जाकै, कहौ तुम्ह बात सयांनीं।। 4।।
याही सूँ तुम्ह जोग कहते हौ, जब लग आस की पासी।
छूटै तब हीं जब मिलै एक ही, भणै रैदास उदासी।। 5।।
2. अब कुछ मरम बिचारा हो हरि।
अब कुछ मरम बिचारा हो हरि।
आदि अंति औसांण राम बिन, कोई न करै निरवारा हो हरि।। टेक।।
जल मैं पंक पंक अमृत जल, जलहि सुधा कै जैसैं।
ऐसैं करमि धरमि जीव बाँध्यौ, छूटै तुम्ह बिन कैसैं हो हरि।। 1।।

जप तप बिधि निषेद करुणांमैं, पाप पुनि दोऊ माया।
अस मो हित मन गति विमुख धन, जनमि जनमि डहकाया हो हरि।। 2।।
ताड़ण, छेदण, त्रयण, खेदण, बहु बिधि करि ले उपाई।
लूंण खड़ी संजोग बिनां, जैसैं कनक कलंक न जाई।। 3।।
भणैं रैदास कठिन कलि केवल, कहा उपाइ अब कीजै।
भौ बूड़त भैभीत भगत जन, कर अवलंबन दीजै।। 4।।

3. अब कैसे छूटै राम नाम रट लागी

अब कैसे छूटै राम नाम रट लागी।
प्रभु जी, तुम चंदन हम पानी, जाकी अँग-अँग बास समानी।
प्रभु जी, तुम घन बन हम मोरा, जैसे चितवत चंद चकोरा।
प्रभु जी, तुम दीपक हम बाती, जाकी जोति बरै दिन राती।
प्रभु जी, तुम मोती हम धागा, जैसे सोनहिं मिलत सुहागा।
प्रभु जी, तुम तुम स्वामी हम दासा, ऐसी भक्ति करै रैदासा।

4. अब मैं हार्यौ रे भाई,

अब मैं हार्यौ रे भाई।
थकित भयौ सब हाल चाल थैं, लोग न बेद बड़ाई।। टेक।।
थकित भयौ गाइण अरु नाचण, थाकी सेवा पूजा।
काम क्रोध थैं देह थकित भई, कहूँ कहाँ लूँ दूजा।। 1।।
रांम जन होउ न भगत कहाँऊँ, चरन पखालूँ न देवा।
जोई-जोई करौ उलटि मोहि बाधै, ताथैं निकटि न भेवा।। 2।।
पहली ग्यांन का कीया चांदिणां, पीछैं दीया बुझाई।
सुनि सहज मैं दोऊ त्यागे, राम कहूँ न खुदाई।। 3।।
दूरि बसै षट क्रम सकल अरु, दूरिब कीन्हे सेऊ।
ग्यान ध्यानं दोऊ दूरि कीन्हे, दूरिब छाड़े तेऊ।। 4।।
पंचू थकित भये जहाँ-तहाँ, जहाँ-तहाँ थिति पाई।
जा करनि मैं दौर्यौ फिरतौ, सो अब घट मैं पाई।। 5।।
पंचू मेरी सखी सहेली, तिनि निधि दई दिखाई।
अब मन फूलि भयौ जग महियां, उलटि आप मैं समाई।। 6।।
चलत चलत मेरौ निज मन थाक्यौ, अब मोपैं चल्यौ न जाई।
सांई सहजि मिल्यौ सोई सनमुख, कहै रैदास बताई।। 7।।

5. अब मोरी बूड़ी रे भाई,

अब मोरी बूड़ी रे भाई।
ता थैं चढ़ी लोग बड़ाई।। टेक।।
अति अहंकार ऊर मां, सत रज तामैं रह्यौ उरझाई।
करम बलि बसि पर्यौ कछू न सूझै, स्वांमी नांऊं भुलाई।। 1।।
हम मांनूं गुनी जोग सुनि जुगता, हम महा पुरिष रे भाई।
हम मांनूं सूर सकल बिधि त्यागी, ममिता नहीं मिटाई।। 2।।
मांनूं अखिल सुनि मन सोध्यौ, सब चेतनि सुधि पाई।
ग्यांन ध्यांन सब हीं हंम जांन्यूं, बूझै कौंन सूं जाई।। 3।।
हम मांनूं प्रेम प्रेम रस जांन्यूं, नौ बिधि भगति कराई।
स्वांग देखि सब ही जग लटक्यौ, फिरि आपन पौर बधाई।। 4।।
स्वांग पहरि हम साच न जांन्यूं, लोकनि इहै भरमाई।
स्यंघ रूप देखी पहराई, बोली तब सुधि पाई।। 5।।
ऐसी भगति हमारी संतौ, प्रभुता इहै बड़ाई।
आपन अनिन और नहीं मांनत, ताथैं मूल गँवाई।। 6।।
भणैं रैदास उदास ताही थैं, इब कछू मोपैं करी न जाई।
आपौ खोयां भगति होत है, तब रहै अंतरि उरझाई।। 7।। (राग रामकली)

6. अब हम खूब बतन घर पाया
अब हम खूब बतन घर पाया।
उहाँ खैर सदा मेरे भाया।। टेक।।
बेगमपुर सहर का नांउं, फिकर अंदेस नहीं तिहि ठाँव।। 1।।
नही तहॉ सीस खलात न मार, है फन खता न तरस जवाल।। 2।।
आंवन जांन रहम महसूर, जहॉ गनियाव बसै माबूँद।। 3।।
जोई सैल करै सोई भावै, महरम महल मैं को अटकावै।। 4।।
कहै रैदास खलास चमारा, सो उस सहरि सो मीत हमारा।। 5।।
(राग गौड़ी)

7. अबिगत नाथ निरंजन देवा
अबिगत नाथ निरंजन देवा।
मैं का जांनूं तुम्हारी सेवा।। टेक।।
बांधू न बंधन छांऊँ न छाया, तुमहीं सेऊँ निरंजन राया।। 1।।
चरन पताल सीस असमांना, सो ठाकुर कैसैं संपटि समांना।। 2।।
सिव सनिकादिक अंत न पाया, खोजत ब्रह्मा जनम गवाया।। 3।।

तोड़ूँ न पाती पूजौं न देवा, सहज समाधि करौं हरि सेवा।। 4।।
नख प्रसेद जाकै सुरसुरी धारा, रोमावली अठारह भारा।। 5।।
चारि बेद जाकै सुमृत सासा, भगति हेत गावै रैदासा।। 6।।

8. अहो देव तेरी अमित महिमां, महादैवी माया

अहो देव तेरी अमित महिमां, महादैवी माया।
मनुज दनुज बन दहन, कलि विष कलि किरत सबै समय समंन।।
निरबांन पद भुवन, नांम बिघनोघ पवन पात।। टेक।।
गरग उत्तम बांमदेव, विस्वामित्र ब्यास जमदंग्नि श्रिंगी ऋषि दुर्बासा।
मारकंडेय बालमीक भ्रिगु अंगिरा, कपिल बगदालिम सुकमातंम न्यासा।।1।।
अत्रिय अष्टाब्रक गुर गंजानन, अगस्ति पुलस्ति पारासुर सिव विधाता।
रिष जड़ भरथ सऊ भरिष, चिवनि बसिष्टि जिह्ववनि ज्यागबलिक तव ध्यांनि राता।। 2।।
ध्रू अंबरीक प्रहलाद नारद, बिदुर द्रोवणि अक्रूर पांडव सुदांमां।
भीषम उधव बभीषन चंद्रहास, बलि कलि भक्ति जुक्ति जयदेव नांमां।।3।।
गरुड़ हनूंमांनु मांन जनकात्मजा, जय बिजय द्रोपदी गिरि सुता श्री प्रचेता।
रुकमांगद अंगद बसदेव देवकी, अवर अमिनत भक्त कहूँ केता।। 4।।
हे देव सेष सनकादि श्रुति भागवत, भारती स्तवत अनिवरत गुणर्दुबगेवं।
अकल अबिछन ब्यापक ब्रह्ममेक रस सुध चौतंनि पूरन मनेवं।। 5।।
सरगुण निरगुण निरामय निरबिकार, हरि अज निरंजन बिमल अप्रमेवं।
प्रमात्मां प्रक्रिति पर प्रमुचित, सचिदांनंद गुर ग्यांन मेवं।। 6।।
हे देव पवन पावक अवनि, जलधि जलधर तरंनि।
काल जाम मिृति ग्रह ब्याध्य बाधा, गज भुजंग भुवपाल।
ससि सक्र दिगपाल, आग्या अनुगत न मुचत मृजादा।। 7।।
अभय बर ब्रिद प्रतंग्या सति संकल्प, हरि दुष्ट तारंन चरंन सरंन तैरैं।
दास रैदास यह काल ब्याकुल, त्रहि त्रहि अवर अवलंबन नहीं मेरैं।। 8।।

(राग धनाश्री)

9. आज दिवस लेऊँ बलिहारा

आज दिवस लेऊँ बलिहारा।
मेरे घर आया रामका प्यारा टेक।
आँगन बँगला भवन भयो पावन।
हरिजन बैठे हरिजस गावन ।1।

करूँ डंडवत चरन पखारूँ।
तन-मन-धन उन उपरि वारूँ ।2।
कथा कहै अरु अरथ बिचारैं।
आप तरैं औरन को तारैं ।3।
कह रैदास मिलैं निज दासा।
जनम जनमकै काटैं पासा ।4।

10. आज नां द्यौस नां ल्यौ बलिहारा
आज नां द्यौस नां ल्यौ बलिहारा।
मेरे ग्रिह आया राजा रांम जी का प्यारा।। टेक।।
आंगण बठाड़ भवन भयौ पांवन, हरिजन बैठे हरि जस गावन।। 1।।
करूँ डंडौत चरन पखालूँ, तन मन धंन उन ऊपरि वारौं।। 2।।
कथा कहै अरु अरथ बिचारै, आपन तिरैं और कूँ तारैं।। 3।।
कहै रैदास मिले निज दास, जनम जनम के कटे पास।। 4।।
(राग गुंड)

11. आयौ हो आयौ देव तुम्ह सरनां
आयौ हो आयौ देव तुम्ह सरनां।
जांनि क्रिया कीजै अपनों जनां।। टेक।।
त्रिबिधि जोनी बास, जम की अगम त्रस, तुम्हारे भजन बिन, भ्रमत फिर्यौं।
ममिता अहं विषै मदि मातौ, इहि सुखि कबहूँ न दूभर तिर्यौं।। 1।।
तुम्हारे नांइ बेसास, छाड़ी है आंन की आस, संसारी धरम मेरौ मन न धीजै।
रैदास दास की सेवा मांनि हो देवाधिदेवा, पतितपांवन, नांउ प्रकट कीजै।।2।।
(राग रामकली)

12. इहि तनु ऐसा जैसे घास की टाटी
इहि तनु ऐसा जैसे घास की टाटी।
जलि गइओ घासु रलि गइओ माटी।। टेक।।
ऊँचे मंदर साल रसोई। एक घरी फुनी रहनु न होई।। 1।।
भाई बंध कुटंब सहेरा। ओइ भी लागे काढु सवेरा।। 2।।
घर की नारि उरहि तन लागी। उह तउ भूतु करि भागी।। 3।।
कहि रविदास सभै जग लूटिआ। हम तउ एक राम कहि छूटिआ।। 4।।
(राग सूही)

13. इहै अंदेसा सोचि जिय मेरे

इहै अंदेसा सोचि जिय मेरे।
निस बासुरि गुन गाँऊँ रांम तेरे।। टेक।।
तुम्ह च्यतंत मेरी च्यंता हो न जाई, तुम्ह च्यंतामनि होऊ कि नांहीं।। 1।।
भगति हेत का का नहीं कीन्हा, हमारी बेर भये बल हीनां।। 2।।
कहै रैदास दास अपराधी, जिहि तुम्ह ढरवौ सो मैं भगति न साधी।। 3।।
(राग सोरठी)

14. ऐसा ध्यान धरूँ बनवारी

ऐसा ध्यान धरूँ बनवारी।
मन पवन दिढ सुषमन नारी।। टेक।।
सो जप जपूँ जु बहुरि न जपनां, सो तप तपूं जु बहुरि न तपनां।
सो गुर करौं जु बहुरि न करनां, ऐसे मरूँ जैसे बहुरि न मरनां।। 1।।
उलटी गंग जमुन मैं ल्याऊँ, बिन हीं जल संजम कै आंऊँ।
लोचन भरि भरि ब्यंव निहारूँ, जोति बिचारि न और बिचारूँ।। 2।।
प्यंड परै जीव जिस घरि जाता, सबद अतीत अनाहद राता।
जा परि कृपा सोई भल जानैं, गूंगो सा कर कहा बखानैं।। 3।।
सुंनि मंडल मैं मेरा बासा, ताथैं जीव मैं रहूँ उदासा।
कहै रैदास निरंजन ध्याऊँ, जिस धरि जांऊँ (जब) बहुरि न आंऊँ।। 4।।
(राग भैरूँ)

15. ऐसी भगति न होइ रे भाई

ऐसी भगति न होइ रे भाई।
रांम नांम बिन जे कुछ करिये, सो सब भरम कहाई।। टेक।।
भगति न रस दांन, भगति न कथै ग्यांन, भगत न बन मैं गुफा खुँदाई।
भगति न ऐसी हासि, भगति न आसा पासि, भगति न यहु सब कुल कानि गँवाई।। 1।।
भगति न इंद्री बाधें, भगति न जोग साधें, भगति न अहार घटायें, ए सब क्रम कहाई।
भगति न निद्रा साधें, भगति न बैराग साधें, भगति नहीं यहु सब बेद बड़ाई।। 2।।
भगति न मूंड़ मुड़ायें, भगति न माला दिखायें, भगत न चरन धुवांयें, ए सब गुनी जन कहाई।

भगति न तौ लौं जांनीं, जौ लौं आप कूँ आप बखांनीं, जोई जोई करै सोई क्रम चढ़ाई।। 3।।

आपौ गयौ तब भगति पाई, ऐसी है भगति भाई, राम मिल्यौ आपौ गुण खोयौ, रिधि सिधि सबै जु गँवाई।

कहै रैदास छूटी ले आसा पास, तब हरि ताही के पास, आतमां स्थिर तब सब निधि पाई।। 4।।

16. ऐसी मेरी जाति भिख्यात चमारं
ऐसी मेरी जाति भिख्यात चमारं।
हिरदै राम गौब्यंद गुन सारं।। टेक।।
सुरसुरी जल लीया क्रित बारूणी रे, जैसे संत जन करता नहीं पांन।
सुरा अपवित्र नित गंग जल मांनियै, सुरसुरी मिलत नहीं होत आंन।। 1।।
ततकरा अपवित्र करि मांनियैं, जैसें कागदगर करत बिचारं।
भगत भगवंत जब ऊपरैं लेखियैं, तब पूजियै करि नमसकारं।। 2।।
अनेक अधम जीव नांम गुण उधरे, पतित पांवन भये परसि सारं।
भणत रैदास ररंकार गुण गावतां, संत साधू भये सहजि पारं।। 3।।
(राग आसा)

17. ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै
ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै।
गरीब निवाजु गुसाईआ मेरा माथै छत्रु धरै ।
जाकी छोति जगत कउ लागै ता पर तुहीं ढरै।
नीचउ ऊच करै मेरा गोबिंदु काहू ते न डरै ।
नामदेव कबीरू तिलोचनु सधना सैनु तरै।
कहि रविदासु सुनहु रे संतहु हरिजीउ ते सभै सरै ।

18. ऐसे जानि जपो रे जीव
ऐसे जानि जपो रे जीव।
जपि ल्यो राम न भरमो जीव।। टेक ।।
गनिका थी किस करमा जोग, परपूरुष सो रमती भोग।। 1 ।।
निसि बासर दुस्करम कमाई, राम कहत बैकुंठ जाई।। 2 ।।
नामदेव कहिए जाति कै ओछ, जाको जस गावै लोक।। 3 ।।
भगति हेत भगता के चले, अंकमाल ले बीठल मिले।। 4 ।।
कोटि जग्य जो कोई करै, राम नाम सम तउ न निस्तरै।। 5 ।।

निरगुन का गुन देखो आई, देही सहित कबीर सिधाई।। 6 ।।
मोर कुचिल जाति कुचिल में बास, भगति हेतु हरिचरन निवास।। 7 ।।
चारिउ बेद किया खंडौति, जन रैदास करै डंडौति।। 8 ।।
(राग गौड़)

19. ऐसौ कछु अनभै कहत न आवै
ऐसौ कछु अनभै कहत न आवै।
साहिब मेरौ मिलै तौ को बिगरावै।। टेक ।।
सब मैं हरि हैं हरि मैं सब हैं, हरि आपनपौ जिनि जांनां।
अपनी आप साखि नहीं दूसर, जांननहार समांनां।। 1 ।।
बाजीगर सूँ रहनि रही जै, बाजी का भरम इब जांनं।
बाजी झूठ साच बाजीगर, जानां मन पतियानां।। 2 ।।
मन थिर होइ तौ कांइ न सूझै, जानैं जांनन हारा।
कहै रैदास बिमल बसेक सुख, सहज सरूप संभारा।। 3 ।।
(राग रामकली)

20. कवन भगितते रहै प्यारो पाहुनो रे
कवन भगितते रहै प्यारो पाहुनो रे।
घर घर देखों मैं अजब अभावनो रे टेकघ
मैला मैला कपड़ा केता एक धोऊँ।
आवै आवै नींदहि कहाँलों सोऊँ । 1।
ज्यों ज्यों जोड़ै त्यों त्यों फाटै।
झूठै सबनि जरै उड़ि गये हाटै । 2।
कह रैदास परौ जब लेख्यौ।
जोई जोई, कियो रे सोई सोई देख्यौ । 3।

21. कहा सूते मुगध नर काल के मंझि मुख
कहा सूते मुगध नर काल के मंझि मुख।
तजि अब सति राम च्यंतत अनेक सुख।। टेक।।
असहज धीरज लोप, कृश्न उधरन कोप, मदन भवंग नहीं मंत्र जंत्र।
विषम पावक झाल, ताहि वार न पार, लोभ की श्रपनी ग्यानं हंता।। 1।।
विषम संसार भौ लहरि ब्याकुल तवै, मोह गुण विषै सन बंध भूता।
टेरि गुर गारड़ी मंत्र श्रवणं दीयौ, जागि रे रांम कहि कांइ सूता।। 2।।

सकल सुमृति जिती, संत मिति कहैं तिती, पाइ नहीं पनंग मति परंम बेता।
ब्रह्म रिषि नारदा स्यंभ सनिकादिका, राम रमि रमत गये परितेता।। 3।।
जजनि जाप निजाप रटणि तीर्थ दांन, वोखदी रसिक गदमूल देता।
नाग दवणि जरजरी, रांम सुमिरन बरी, भणत रैदास चेतनि चेता।। 4।।

22. कहि मन रांम नांम संभारि

कहि मन रांम नांम संभारि।
माया कै भ्रमि कहा भूलौ, जांहिगौ कर झारि।। टेक।।
देख धूँ इहाँ कौन तेरौ, सगा सुत नहीं नारि।
तोरि तंग सब दूरि करि हैं, दैहिंगे तन जारि।। 1।।
प्रान गयैं कहु कौंन तेरौ, देख सोचि बिचारि।
बहुरि इहि कल काल मांही, जीति भावै हारि।। 2।।
यहु माया सब थोथरी, भगति दिसि प्रतिपारि।
कहि रैदास सत बचन गुर के, सो जीय थैं न बिसारि।। 3।।
(राग केदारौ)

23. कांन्हां हो जगजीवन मोरा

कांन्हां हो जगजीवन मोरा।
तू न बिसारीं रांम मैं जन तोरा।। टेक।।
संकुट सोच पोच दिन राती, करम कठिन मेरी जाति कुभाती।। 1।।
हरहु बिपति भावै करहु कुभाव, चरन न छाडूँ जाइ सु जाव।
कहै रैदास कछु देऊ अवलंबन, बेगि मिलौ जनि करहु बिलंबन।। 2।।
(राग रामकली)

24. किहि बिधि अणसरूं रे, अति दुलभ दीनदयाल

किहि बिधि अणसरूं रे, अति दुलभ दीनदयाल।
मैं महाबिषई अधिक आतुर, कांमना की झाल।। टेक।।
कह द्यंभ बाहरि कीयैं, हरि कनक कसौटी हार।
बाहरि भीतरि साखि तू, मैं कीयौ सुसा अंधियार।। 1 ।।
कहा भयौ बहु पाखंड कीयैं, हरि हिरदै सुपिनैं न जांन।
ज्यू दारा बिभचारनीं, मुख पतिब्रता जीय आंन।। 2 ।।
मैं हिरदै हारि बैठो हरी, मो पैं सयौं न एको काज।
भाव भगति रैदास दे, प्रतिपाल करौ मोहि आज।। 3 ।।
(राग सोरठी)

25. केसवे बिकट माया तोर
केसवे बिकट माया तोर।
ताथैं बिकल गति मति मोर।। टेक।।
सु विष डसन कराल अहि मुख, ग्रसित सुठल सु भेख।
निरखि माखी बकै व्याकुल, लोभ काल न देख।। 1 ।।
इन्द्रीयादिक दुख दारुन, असंख्यादिक पाप।
तोहि भजत रघुनाथ अंतरि, ताहि त्रस न ताप।। 2 ।।
प्रतंग्या प्रतिपाल चहुँ जुगि, भगति पुरवन कांम।
आस तोर भरोस है, रैदास जै जै राम।। 3 ।।
26. कौंन भगति थैं रहै प्यारे पांहुनौं रे
कौंन भगति थैं रहै प्यारे पांहुनौं रे।
धरि धरि देखैं मैं अजब अभावनौं रे।। टेक।।
मैला मैला कपड़ा केताकि धोउँ, आवै आवै नींदड़ी कहाँ लौं सोऊँ।। 1।।
ज्यूँ ज्यूँ जोड़ौं त्यूँ त्यूँ फाटे, झूठे से बनजि रे उठि गयौ हाटे।। 2 ।।
कहैं रैदास पर्यौ जब लेखौ, जोई जोई कीयौ रे, सोई सोई देखौ।। 3 ।।
(राग धनाश्री)
27. कोई सुमार न देखौं, ए सब ऊपिली चोभा
कोई सुमार न देखौं, ए सब ऊपिली चोभा।
जाकौं जेता प्रकासै, ताकौं तेती ही सोभा।। टेक ।।
हम ही पै सीखि सीखि, हम हीं सूँ मांडै।
थोरै ही इतराइ चालै, पातिसाही छाडै।। 1।।
अति हीं आतुर बहै, काचा हीं तोरै।
कुंडै जलि ऐसै, न हींयां डरै खोरै।। 2 ।।
थोरैं थोरैं मुसियत, परायौ धंनां।
कहै रैदास सुनौं, संत जनां।। 3 ।।
(राग गौड़ी)
28. क्या तू सोवै जणिं दिवांनां
क्या तू सोवै जणिं दिवांनां।
झूठा जीवनां सच करि जांनां।। टेक।।
जिनि जीव दिया सो रिजकअ बड़ावै, घट घट भीतरि रहट चलावै।
करि बंदिगी छाड़ि मैं मेरा, हिरदै का रांम संभालि सवेरा।। 1।।

जो दिन आवै सौ दुख मैं जाई, कीजै कूच रह्यां सच नांहीं।
संग चल्या है हम भी चलनां, दूरि गवन सिर ऊपरि मरनां।। 2 ।।
जो कुछ बोया लुनियें सोई, ता मैं फेर फार कछू न होई।
छाडेअं कूर भजै हरि चरनां, ताका मिटै जनम अरु मरनां।। 3 ।।
आगैं पंथ खरा है झीनां, खाडै धार जिसा है पैंनां।
तिस ऊपरि मारग है तेरा, पंथी पंथ संवारि सवेरा।। 4 ।।
क्या तैं खरच्या क्या तैं खाया, चल दरहाल दीवांनि बुलाया।
साहिब तोपैं लेखा लेसी, भीड़ पड़े तू भरि भरिदेसी।। 5 ।।
जनम सिरांनां कीया पसारा, सांझ पड़ी चहु दिसि अंधियारा।
कहै रैदासा अग्यांन दिवांनां, अजहूँ न चेतै दुनी फंध खांनां।। 6 ।।
(राग विलावल)

29. खांलिक सकिसता मैं तेरा

खांलिक सकिसता मैं तेरा।
दे दीदार उमेदगार बेकरार जीव मेरा।। टेक।।
अवलि आख्यर इलल आदंम, मौज फरेस्ता बंदा।
जिसकी पनह पीर पैकंबर, मैं गरीब क्या गंदा।। 1 ।।
तू हानिरां हजूर जोग एक, अवर नहीं दूजा।
जिसकै इसक आसिरा नांहीं, क्या निवाज क्या पूजा।। 2 ।।
नाली दोज हनोज बेबखत, कमि खिजमतिगार तुम्हारा।
दरमादा दरि ज्वाब न पावै, कहै रैदास बिचारा।। 3 ।।
(राग विलावल)

30. गाइ गाइ अब का कहि गाऊँ

गाइ गाइ अब का कहि गाऊँ।
गांवणहारा कौ निकटि बतांऊँ।। टेक ।।
जब लग है या तन की आसा, तब लग करै पुकारा।
जब मन मिट्यौ आसा नहीं की, तब को गाँवणहारा।। 1 ।।
जब लग नदी न संमदि समावै, तब लग बढ़ै अहंकारा।
जब मन मिल्यौ रांम सागर सूँ, तब यहु मिटी पुकारा।। 2 ।।
जब लग भगति मुकति की आसा, परम तत सुणि गावै।
जहाँ जहाँ आस धरत है यहु मन, तहाँ तहाँ कछू न पावै।। 3 ।।
छाड़ै आस निरास परंमपद, तब सुख सति करि होई।

कहै रैदास जासूँ और कहत हैं, परम तत अब सोई।। 4 ।।

(राग रामकली)

31. गोबिंदे तुम्हारे से समाधि लागी

गोबिंदे तुम्हारे से समाधि लागी।

उर भुअंग भस्म अंग संतत बैरागी।। टेक।।

जाके तीन नैन अमृत बैन, सीसा जटाधारी, कोटि कलप ध्यान अलप, मदन अंतकारी।। 1 ।।

जाके लील बरन अकल ब्रह्म, गले रुण्डमाला, प्रेम मगन फिरता नगन, संग सखा बाला।। 2 ।।

अस महेश बिकट भेस, अजहूँ दरस आसा, कैसे राम मिलौं तोहि, गावै रैदासा।। 3 ।।

(राग विलावल)

32. गौब्यंदे भौ जल ब्याधि अपारा

गौब्यंदे भौ जल ब्याधि अपारा।

तामैं कछू सूझत वार न पारा।। टेक।।

अगम ग्रेह दूर दूरंतर, बोलि भरोस न देहू।

तेरी भगति परोहन, संत अरोहन, मोहि चढ़ाइ न लेहू।। 1 ।।

लोह की नाव पखांनि बोझा, सुकृत भाव बिहूंनां।

लोभ तरंग मोह भयौ पाला, मीन भयौ मन लीना।। 2 ।।

दीनानाथ सुनहु बीनती, कौंनै हेतु बिलंबे।

रैदास दास संत चरंन, मोहि अब अवलंबन दीजै।। 3 ।।

33. चमरटा गाँठि न जनई

चमरटा गाँठि न जनई।

लोग गठावै पनही।। टेक।।

आर नहीं जिह तोपउ।

नहीं रांबी ठाउ रोपउ।। 1।।

लोग गंठि गंठि खरा बिगूचा।

हउ बिनु गांठे जाइ पहूचा।। 2।।

रविदासु जपै राम नामा,

मोहि जम सिउ नाही कामा।। 3।।

(राग सोरठी)

34. चलि मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ
चलि मन हरि चटसाल पढ़ाऊँ।। टेक।।
गुरु की साटि ग्यांन का अखिर, बिसरै तौ सहज समाधि लगाऊँ।। 1।।
प्रेम की पाटी सुरति की लेखनी करिहूं, ररौ ममौ लिखि आंक दिखांऊँ।।2।।
इहिं बिधि मुक्ति भये सनकादिक, रिदौ बिदारि प्रकास दिखाऊँ।। 3।।
कागद कैवल मति मसि करि नृमल, बिन रसना निसदिन गुण गाऊँ।। 4।।
कहै रैदास राम जपि भाई, संत साखि दे बहुरि न आऊँ।। 5।।
(राग कानड़ा)

35. जग मैं बेद बैद मांनी जें
जग मैं बेद बैद मांनी जें।
इनमैं और अंगद कछु औरे, कहौ कवन परिकीजै।। टेक।।
भौ जल ब्याधि असाधिअ प्रबल अति, परम पंथ न गही जै।
पढ़ैं गुनैं कछू समझि न परई, अनभै पद न लही जै।। 1।।
चखि बिहूंन कतार चलत हैं, तिनहूँ अंस भुज दीजै।
कहै रैदास बमेक तत बिन, सब मिलि नरक परी जै।। 2।।
(राग सारंग)

36. जन कूँ तारि तारि तारि तारि बाप रमइया
जन कूँ तारि तारि तारि तारि बाप रमइया।
कठन फंध पर्यौ पंच जमइया।। टेक।।
तुम बिन देव सकल मुनि ढूँढ़े, कहूँ न पायौ जम पासि छुड़इया।। 1।।
हमसे दीन, दयाल न तुमसे, चरन सरन रैदास चमइया।। 2।।
(राग धनाश्री)

37. जब रामनाम कहि गावैगा
जब रामनाम कहि गावैगा,
तब भेद अभेद समावैगा टेक।
जे सुख ह्वैं या रसके परसे,
सो सुखका कहि गावैगा ।1।
गुरु परसाद भई अनुभौ मति,
बिस अमरित सम धावैगा ।2।
कह रैदास मेटि आपा-पर,
तब वा ठौरहि पावैगा ।3।

38. जयौ रांम गोब्यंद बीठल बासदेव
जयौ रांम गोब्यंद बीठल बासदेव।
हरि बिश्न बैकुंठ मधुकीटभारी।।
कृश्न केसों रिषीकेस कमलाकंत।
अहो भगवंत त्रिबधि संतापहारी।। टेक।।
अहो देव संसार तौ गहर गंभीर।
भीतरि भ्रमत दिसि ब दिसि, दिसि कछू न सूझै।।
बिकल ब्याकुल खेंद, प्रणतंत परमहेत।
ग्रसित मति मोहि मारग न सूझै।।
देव इहि औसरि आंन, कौंन संक्या समांन।
देव दीन उधंरन, चरंन सरन तेरी।।
नहीं आंन गति बिपति कौं हरन और।
श्रीपति सुनसि सीख संभाल प्रभु करहु मेरी।। 1।।
अहो देव कांम केसरि काल, भुजंग भांमिनी भाल।
लोभ सूकर क्रोध बर बारनूँ।। 2।।
ग्रब गैंडा महा मोह टटनीं, बिकट निकट अहंकार आरनूँ।
जल मनोरथ ऊरमीं, तरल तृसना मकर इन्द्री जीव जंत्रक मांही।
समक ब्याकुल नाथ, सत्य बिष्यादिक पंथ, देव देव विश्राम नांही।। 3।।
अहो देव सबै असंगति मेर, मधि फूटा भेर।
नांव नवका बड़ैं भागि पायौ।
बिन गुर करणधार डोलै न लागै तीर।
विषै प्रवाह औ गाह जाई।
देव किहि करौं पुकार, कहाँ जाँऊँ।
कासूँ कहूँ, का करूँ अनुग्रह दास की त्रसहारी।
इति ब्रत मांन और अवलंबन नहीं।
तो बिन त्रिबधि नाइक मुरारी।। 3।।
अहो देव जेते कयैं अचेत, तू सरबगि मैं न जांनूं।
ग्यांन ध्यांन तेरौ, सत्य सतिम्रिद परपन मन सा मल।
मन क्रम बचन जंमनिका, ग्यान बैराग दिढ़ भगति नाहीं।
मलिन मति रैदास, निखल सेवा अभ्यास।
प्रेम बिन प्रीति सकल संसै न जांहीं।। 4।।

(राग धनाश्री)
39. जिनि थोथरा पिछोरे कोई
जिनि थोथरा पिछोरे कोई।
जो र पिछौरे जिहिं कण होई।। टेक।।
झूठ रे यहु तन झूठी माया, झूठा हरि बिन जन्म गंवाया।। 1।।
झूठा रे मंदिर भोग बिलासा, कहि समझावै जन रैदासा।। 2।। (राग सोरठी)
40. जिह कुल साधु बैसनो होइ
जिह कुल साधु बैसनो होइ।
बरन अबरन रंकु नहीं ईसरू बिमल बासु जानी ऐ जगि सोइ।। टेक।।
ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ।
होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ।। 1।।
धंनि सु गाउ धंनि सो ठाउ धंनि पुनीत कुटंब सभ लोइ।
जिनि पीआ सार रसु तजे आन रस होइ रस मगन डारे बिखु खोइ।। 2।।
पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबरि अउरु न कोइ।
जैसे पुरैन पात रहै जल समीप भनि रविदास जनमें जगि ओइ।। 3।।
(राग विलावल)
41. जीवत मुकंदे मरत मुकंदे
जीवत मुकंदे मरत मुकंदे।
ताके सेवक कउ सदा अनंदे।। टेक।।
मुकंद-मुकंद जपहु संसार। बिन मुकंद तनु होइ अउहार।
सोई मुकंदे मुकति का दाता। सोई मुकंदु हमरा पित माता।। 1।।
मुकंद-मुकंदे हमारे प्रानं। जपि मुकंद मसतकि नीसानं।
सेव मुकंदे करै बैरागी। सोई मुकंद दुरबल धनु लाधी।। 2।।
एक मुकंदु करै उपकारू। हमरा कहा करै संसारू।
मेटी जाति हूए दरबारि। तुही मुकंद जोग जुगतारि।। 3।।
उपजिओ गिआनु हूआ परगास। करि किरपा लीने करि दास।
कहु रविदास अब त्रिसना चूकी। जपि मुकंद सेवा ताहू की।। 4।।
(राग गौड़ी)
42. जो तुम तोरौ रांम मैं नहीं तोरौं
जो तुम तोरौ रांम मैं नहीं तोरौं।
तुम सौं तोरि कवन सूँ जोरौं।। टेक।।

तीरथ ब्रत का न करौं अंदेसा, तुम्हारे चरन कवल का भरोसा।। 1।।
जहाँ जहाँ जांऊँ तहाँ तुम्हारी पूजा, तुम्ह सा देव अवर नहीं दूजा।। 2।।
मैं हरि प्रीति सबनि सूँ तोरी, सब स्यौं तोरि तुम्हैं स्यूँ जोरी।। 3।।
सब परहरि मैं तुम्हारी आसा, मन क्रम वचन कहै रैदासा।। 4।। (राग सोरठी)

43. जो मोहि बेदन का सजि आखूँ

जो मोहि बेदन का सजि आखूँ।
हरि बिन जीव न रहै कैसैं करि राखूँ।। टेक।।
जीव तरसै इक दंग बसेरा, करहु संभाल न सुरि जन मोरा।
बिरह तपै तनि अधिक जरावै, नींदड़ी न आवै भोजन नहीं भावै।। 1।।
सखी सहेली ग्रब गहेली, पीव की बात न सुनहु सहेली।
मैं रे दुहागनि अधिक रंजानी, गया सजोबन साध न मांनीं।। 2।।
तू दांनां सांई साहिब मेरा, खिजमतिगार बंदा मैं तेरा।
कहै रैदास अंदेसा एही, बिन दरसन क्यूँ जीवैं हो सनेही।। 3।।
(राग विलावल)

44. तब रांम रांम कहि गावैगा

तब रांम रांम कहि गावैगा।
ररंकार रहित सबहिन थैं, अंतरि मेल मिलावैगा।। टेक।।
लोहा सम करि कंचन समि करि, भेद अभेद समावैगा।
जो सुख कै पारस के परसें, तो सुख का कहि गावैगा।। 1।।
गुर प्रसादि भई अनभै मति, विष अमृत समि धावैगा।
कहै रैदास मेटि आपा पर, तब वा ठौरहि पावैगा।। 2।।

45. ताथैं पतित नहीं को अपांवन

ताथैं पतित नहीं को अपांवन। हरि तजि आंनहि ध्यावै रे।
हम अपूजि पूजि भये हरि थैं, नांउं अनूपम गावै रे।। टेक।।
अष्टादस ब्याकरन बखांनै, तीनि काल षट जीता रे।
प्रेम भगति अंतरगति नांहीं, ताथैं धानुक नीका रे।। 1।।
ताथैं भलौ स्वांन कौ सत्रु, हरि चरनां चित लावै रे।
मूंवां मुकति बैकुंठा बासा, जीवत इहाँ जस पावै रे।। 2।।
हम अपराधी नीच घरि जनमे, कुटंब लोग करैं हासी रे।
कहै रैदास नाम जपि रसनीं, काटै जंम की पासी रे।। 3।।

(राग विलावल)

46. तुझहि चरन अरबिंद भँवर मनु

तुझहि चरन अरबिंद भँवर मनु।

पान करत पाइओ, पाइओ रामईआ धनु।। टेक।।

कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु।

प्रेम जाइ तउ डरपै तेरो जनु।। 1।।

संपति बिपति पटल माइआ धनु।

ता महि भगत होत न तेरो जनु।। 2।।

प्रेम की जेवरी बाधिओ तेरो जन।

कहि रविदास छूटिबो कवन गुनै।। 3।।

(राग आसा)

47. तुझा देव कवलापती सरणि आयौ

तुझा देव कवलापती सरणि आयौ।

मंझा जनम संदेह भ्रम छेदि माया।। टेक।।

अति संसार अपार भौ सागरा, ता मैं जांमण मरण संदेह भारी।

कांम भ्रम क्रोध भ्रम लोभ भ्रम, मोह भ्रम, अनत भ्रम छेदि मम करसि यारी।। 1।।

पंच संगी मिलि पीड़ियौ प्रांणि यौं, जाइ न न सकू बैराग भागा।

पुत्र बरग कुल बंधु ते भारज्या, भखैं दसौ दिसि रिस काल लागा।। 2।।

भगति च्यंतौं तो मोहि दु:ख ब्यापै, मोह च्यंतौ तौ तेरी भगति जाई।

उभै संदेह मोहि रैंणि दिन ब्यापै, दीन दाता करौं कौंण उपाई।। 3।।

चपल चेत्यौ नहीं बहुत दु:ख देखियौ, कांम बसि मोहियौ क्रम फंधा।

सकति सनबंध कीयौ, ग्यान पद हरि लीयौ, हिरदै बिस रूप तजि भयौ अंधा।। 4।।

परम प्रकास अबिनास अघ मोचनां, निरखि निज रूप बिश्रांम पाया।

बंदत रैदास बैराग पद च्यंतता, जपौ जगदीस गोब्यंद राया।। 5।।

(राग धनाश्री)

48. तू कांइ गरबहि बावली

तू कांइ गरबहि बावली।

जैसे भादउ खूंब राजु तू तिस ते खरी उतावली।। टेक।।

तुझहि सुझंता कछू नाहि। पहिरावा देखे ऊभि जाहि।

गरबवती का नाही ठाउ। तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ।। 1।।
जैसे कुरंक नहीं पाइओ भेदु। तनि सुगंध ढूढ़ै प्रदेसु।
अप तन का जो करे बीचारू। तिसु नहीं जम कंकरू करे खुआरू।। 2।।
पुत्र कलत्र का करहि अहंकारू। ठाकुर लेखा मगनहारू।
फेड़े का दुखु सहै जीउ। पाछे किसहि पुकारहि पीउ-पीउ।। 3।।
साधू की जउ लेहि ओट। तेरे मिटहि पाप सभ कोटि-कोटि।
कहि रविदास जो जपै नामु। तिस जातु न जनमु न जोनि कामु।। 4।।

(राग बसंत)

49. तू जानत मैं किछु नहीं भव खंडन राम
तू जानत मैं किछु नहीं भव खंडन राम।
सगल जीअ सरनागति प्रभ पूरन काम।। टेक।।
दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी।
असटदसा सिधि कर तलै सभ क्रिया तुमारी।। 1।।
जो तेरी सरनागता तिन नाही भारू।
ऊँच नीच तुमते तरे आलजु संसारू।। 2।।
कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करी जै।
जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै।। 3।।

(राग विलावल)

50. तेरा जन काहे कौं बोलै
तेरा जन काहे कौं बोलै।
बोलि बोलि अपनीं भगति क्यों खोलै।। टेक।।
बोल बोलतां बढ़ै बियाधि, बोल अबोलैं जाई।
बोलै बोल अबोल कौं पकरैं, बोल बोलै कूँ खाई।। 1।।
बोलै बोल मांनि परि बोलैं, बोलै बेद बड़ाई।
उर में धरि धरि जब ही बोलै, तब हीं मूल गँवाई।। 2।।
बोलि बोलि औरहि समझावै, तब लग समझि नहीं रे भाई।
बोलि बोलि समझि जब बूझी, तब काल सहित सब खाई।। 3।।
बोलै गुर अरु बोलै चेला, बोल्या बोल की परमिति जाई।
कहै रैदास थकित भयौ जब, तब हीं परंमनिधि पाई।। 4।।

51. त्यू तुम्ह कारन केसवे, लालचि जीव लागा
त्यू तुम्ह कारन केसवे, लालचि जीव लागा।

निकटि नाथ प्रापति नहीं, मन मंद अभागा।। टेक।।
साइर सलिल सरोदिका, जल थल अधिकाई।
स्वांति बूँद की आस है, पीव प्यास न जाई।। 1।।
जो रस नेही चाहिए, चितवत हूँ दूरी।
पंगल फल न पहूँचई, कछू साध न पूरी।। 2।।
कहै रैदास अकथ कथा, उपनषद सुनी जै।
जस तूँ तस तूँ तस तूँ हीं, कस ओपम दीजै।। 3।।

52. त्यूँ तुम्ह कारनि केसवे, अंतरि ल्यौ लागी
त्यूँ तुम्ह कारनि केसवे, अंतरि ल्यौ लागी।
एक अनूपम अनभई, किम होइ बिभागी।। टेक।।
इक अभिमानी चातृगा, विचरत जग मांहीं।
जदपि जल पूरण मही, कहूं वाँ रुचि नांहीं।। 1।।
जैसे कांमीं देखे कांमिनीं, हिरदै सूल उपाई।
कोटि बैद बिधि उचरैं, वाकी बिथा न जाई।। 2।।
जो जिहि चाहे सो मिलै, आरत्य गत होई।
कहै रैदास यहु गोपि नहीं, जानैं सब कोई।। 3।।
(राग रामकली)

53. देवा हम न पाप करंता
देवा हम न पाप करंता।
अहो अंनंता पतित पांवन तेरा बिड़द क्यू होता।। टेक।।
तोही मोही मोही तोही अंतर ऐसा।
कनक कुटक जल तरंग जैसा।। 1।।
तुम हीं मैं कोई नर अंतरजांमी।
ठाकुर थैं जन जांणिये, जन थैं स्वांमीं।। 2।।
तुम सबन मैं, सब तुम्ह मांहीं।
रैदास दास असझसि, कहै कहाँ ही।। 3।।

54. देहु कलाली एक पियाला
देहु कलाली एक पियाला।
ऐसा अवधू है मतिवाला।। टेक।।
ए रे कलाली तैं क्या कीया,
सिरकै सा तैं प्याला दीया।। 1।।

कहै कलाली प्याला देऊँ,
पीवनहारे का सिर लेऊँ।। 2।।
चंद सूर दोऊ सनमुख होई,
पीवै पियाला मरै न कोई।। 3।।
सहज सुनि मैं भाठी सरवै,
पीवै रैदास गुर मुखि दरवै।। 4।।
(राग आसा)

55. न बीचारिओ राजा राम को रसु
न बीचारिओ राजा राम को रसु।
जिह रस अनरस बीसरि जाही।। टेक।।
दूलभ जनमु पुंन फल पाइओ बिरथा जात अबिबेके।
राजे इन्द्र समसरि ग्रिह आसन बिनु हरि भगति कहहु किह लेखै।। 1।।
जानि अजान भए हम बावर सोच असोच दिवस जाही।
इन्द्री सबल निबल बिबेक बुधि परमारथ परवेस नहीं।। 2।।
कहीअत आन अचरीअत आन कछु समझ न परै अपर माइआ।
कहि रविदास उदास दास मति परहरि कोपु करहु जीअ दइआ।। 3।।
(राग सोरठी)

56. नरहरि चंचल मति मोरी
नरहरि चंचल मति मोरी।
कैसैं भगति करौ रांम तोरी।। टेक।।
तू कोहि देखै हूँ तोहि देखैं, प्रीती परस्पर होई।
तू मोहि देखै हौं तोहि न देखौं, इहि मति सब बुधि खोई।। 1।।
सब घट अंतरि रमसि निरंतरि, मैं देखत ही नहीं जांनां।
गुन सब तोर मोर सब औगुन, क्रित उपगार न मांनां।। 2।।
मैं तैं तोरि मोरी असमझ सों, कैसे करि निसतारा।
कहै रैदास कृश्न करुणांमैं, जै जै जगत अधारा।। 3।।

57. नरहरि प्रगटसि नां हो प्रगटसि नां
नरहरि प्रगटसि नां हो प्रगटसि नां।
दीनानाथ दयाल नरहरि।। टेक।।
जन मैं तोही थैं बिगरां न अहो, कछू बूझत हूँ रसयांन।
परिवार बिमुख मोहि लाग, कछू समझि परत नहीं जाग।। 1।।

इक भंमदेस कलिकाल, अहो मैं आइ पर्यौ जंम जाल।
कबहूँक तोर भरोस, जो मैं न कहूँ तो मोर दोस।। 2।।
अस कहियत तेऊ न जांन, अहो प्रभू तुम्ह श्रबंगि सयांन।
सुत सेवक सदा असोच, ठाकुर पितहि सब सोच।। 3।।
रैदास बिनवैं कर जोरि, अहो स्वांमीं तोहि नांहि न खोरि।
सु तौ अपूरबला अक्रम मोर, बलि बलि जांऊं करौ जिनि और।। 4।।

58. नहीं बिश्रांम लहूँ धरनींधर

नहीं बिश्रांम लहूँ धरनींधर।
जाकै सुर नर संत सरन अभिअंतर।। टेक।।
जहाँ जहाँ गयौ, तहाँ जनम काछै, तृबिधि ताप तृ भुवनपति पाछै।। 1।।
भये अति छीन खेद माया बस, जस तिन ताप पर नगरि हतै तस।। 2।।
द्वारैं न दसा बिकट बिष कारंन, भूलि पर्यौ मन या बिष्या बन।। 3।।
कहै रैदास सुमिरौ बड़ राजा, काटि दिये जन साहिब लाजा।। 4।।
(राग विलावल)

59. नामु तेरो आरती मजनु मुरारे

नामु तेरो आरती मजनु मुरारे।
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पसारे।। टेक।।
नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा नामु तेरा केसरो ले छिड़का रे।
नामु तेरा अंमुला नामु तेरो चंदनों, घसि जपे नामु ले तुझहि का उचारे।। 1।।
नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे।
नाम तेरे की जोति लगाई भइओ उजिआरो भवन सगला रे।। 2।।
नामु तेरो तागा नामु फूल माला, भार अठारह सगल जूठा रे।
तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ नामु तेरा तुही चवर ढोला रे।। 3।।
दसअठा अठसठे चारे खाणी इहै वरतणि है सगल संसारे।
कहै रविदासु नाम तेरो आरती सतिनामु है हरि भोग तुहारे।। 4।।
(राग धनाश्री)

60. परचौ राम रमै जै कोइ

परचौ राम रमै जै कोइ।
पारस परसें दुबिध न होइ।। टेक।।
जो दीसै सो सकल बिनास, अण दीठै नांही बिसवास।
बरन रहित कहै जे रांम, सो भगता केवल निहकांम।। 1।।

फल कारनि फलै बनराइं, उपजै फल तब पुहप बिलाइ।
ग्यांनहि कारनि क्रम कराई, उपज्यौ ग्यानं तब क्रम नसाइ।। 2।।
बटक बीज जैसा आकार, पसर्यौ तीनि लोक बिस्तार।
जहाँ का उपज्या तहाँ समाइ, सहज सुन्य में रह्यौ लुकाइ।। 3।।
जो मन ब्यदै सोई ब्यंद, अमावस मैं ज्यू दीसै चंद।
जल मैं जैसैं तूबां तिरै, परचे प्यंड जीवै नहीं मरै।। 4।।
जो मन कौंण ज मन कूँ खाइ, बिन द्वारै त्रीलोक समाइ।
मन की महिमां सब कोइ कहै, पंडित सो जे अनभै रहे।। 5।।
कहै रैदास यहु परम बैराग, रांम नांम किन जपऊ सभाग।
घ्रित कारनि दधि मथै सयांन, जीवन मुकति सदा निब्रांन।। 6।।
(राग रामकली)

61. पहलै पहरै रैंणि दै बणजारिया

पहलै पहरै रैंणि दै बणजारिया, तै जनम लीया संसार वै।।
सेवा चुका रांम की बणजारिया, तेरी बालक बुधि गँवार वे।।
बालक बुधि गँवार न चेत्या, भुला माया जालु वे।।
कहा होइ पीछैं पछतायैं, जल पहली न बँधीं पाल वे।।
बीस बरस का भया अयांनां, थंभि न सक्या भार वे।।
जन रैदास कहै बनिजारा, तैं जनम लया संसार वै।। 1।।
दूजै पहरै रैंणि दै बनजारिया, तूँ निरखत चल्या छांवं वे।।
हरि न दामोदर ध्याइया बनजारिया, तैं लेइ न सक्या नांव वे।।
नांउं न लीया औगुन कीया, इस जोबन दै तांण वे।।
अपणीं पराई गिणीं न काई, मंदे कंम कमांण वे।।
साहिब लेखा लेसी तूँ भरि देसी, भीड़ पड़ै तुझ तांव वे।।
जन रैदास कहै बनजारा, तू निरखत चल्या छांव वे।। 2।।
तीजै पहरै रैंणिं दै बनजारिया, तेरे ढिलढ़े पड़े परांण वे।।
काया रवंनीं क्या करै बनजारिया, घट भीतरि बसै कुजांण वे।।
इक बसै कुजांण काया गढ़ भीतरि, अहलां जनम गवाया वे।।
अब की बेर न सुकृत कीता, बहुरि न न यहु गढ़ पाया वे।।
कंपी देह काया गढ़ खीनां, फिरि लगा पछितांणवे।।
जन रैदास कहै बनिजारा, तेरे ढिलड़े पड़े परांण वे।। 3।।
चौथे पहरै रैंणि दै बनजारिया, तेरी कंपण लगी देह वे।।

साहिब लेखा मंगिया बनजारिया, तू छडि पुरांणां थेह वे।।
छड़ि पुरांणं ज्यंद अयांणां, बालदि हाकि सबेरिया।।
जम के आये बंधि चलाये, बारी पुगी तेरिया।।
पंथि चलै अकेला होइ दुहेला, किस कूँ देइ सनेहं वे।।
जन रैदास कहै बनिजारा, तेरी कंपण लगी देह वे।। 4।।
(राग जंगली गौड़ी)

62. प्रभु जी तुम चंदन हम पानी

प्रभु जी तुम चंदन हम पानी।
जाकी अंग-अंग बास समानी।
प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा।
जैसे चितवत चंद चकोरा,
प्रभु जी तुम दीपक हम बाती।
जाकी जोति बरै दिन राती।
प्रभु जी तुम मोती हम धागा।
जैसे सोनहिं मिलत सोहागा।
प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा।
ऐसी भक्ति करै 'रैदासा'

63. प्रभु जी तुम संगति सरन तिहारी

प्रभु जी तुम संगति सरन तिहारी। जग-जीवन राम मुरारी,
गली-गली को जल बहि आयो, सुरसरि जाय समायो।
संगति के परताप महातम, नाम गंगोदक पायो,
स्वाति बूँद बरसे फनि ऊपर, सोई विष होइ जाई।
ओही बूँद कै मोती निपजै, संगति की अधिकाई,
तुम चंदन हम रेंड बापुरे, निकट तुम्हारे आसा।
संगति के परताप महातम, आवै बास सुबासा,
जाति भी ओछी, करम भी ओछा, ओछा कसब हमारा।
नीचे से प्रभु ऊँच कियो है, कहि 'रैदास' चमारा,

64. प्रानी किआ मेरा किआ तेरा

प्रानी किआ मेरा किआ तेरा।
तैसे तरवर पंखि बसेरा।। टेक।।
जल की भीति पवन का थंभा।

रकत बुंद का गारा।
हाड़ मास नाड़ी को पिंजरू।
पंखी बसै बिचारा।। 1।।
राखहु कंध उसारहु नीवां।
साढ़े तीनि हाथ तेरी सीवां।। 2।।
बंके बाल पाग सिर डेरी।
इहु तनु होइगो भसम की ढेरी।। 3।।
ऊँचे मंदर सुंदर नारी।
राम नाम बिनु बाजी हारी।। 4।।
मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी।
ओछा जनमु हमारा।
तुम सरनागति राजा रामचंद।
कहि रविदास चमारा।। 5।।
(राग सोरठी)

65. प्रीति सधारन आव

प्रीति सधारन आव।
तेज सरूपी सकल सिरोमनि, अकल निरंजन राव।। टेक।।
पीव संगि प्रेम कबहूं नहीं पायौ, कारनि कौण बिसारी।
चक को ध्यान दधिसुत कौं होत है, त्यूँ तुम्ह थैं मैं न्यारी।। 1।।
भोर भयौ मोहिं इकटग जोवत, तलपत रजनी जाइ।
पिय बिन सेज क्यूँ सुख सोऊँ, बिरह बिथा तनि माइ।। 2।।
दुहागनि सुहागनि कीजै, अपनैं अंग लगाई।
कहै रैदास प्रभु तुम्हरै बिछोहै, येक पल जुग भरि जाइ।। 3।।
(राग केदारा)

66. पार गया चाहै सब कोई

पार गया चाहै सब कोई।
रहि उर वार पार नहीं होई।। टेक।।
पार कहैं उर वार सूँ पारा,
बिन पद परचौ भ्रमहि गवारा।। 1।।
पार परंम पद मंझि मुरारी,
तामैं आप रमैं बनवारी।। 2।।

पूरन ब्रह्म बसै सब ठाई,
कहै रैदास मिले सुख सांई। । 3।।
(राग सोरठी)
67. पांडे कैसी पूज रची रे
पांडे कैसी पूज रची रे।
सति बोलै सोई सतिबादी, झूठी बात बची रे।। टेक।।
जो अबिनासी सबका करता, ब्यापि रह्यौ सब ठौर रे।
पंच तत जिनि कीया पसारा, सो यौ ही किधौं और रे।। 1।।
तू ज कहत है यौ ही करता, या कौं मनिख करै रे।
तारण सकति सहीजे यामैं, तौ आपण क्यूँ न तिरै रे।। 2।।
अहीं भरोसै सब जग बूझा, सुंणि पंडित की बात रे।।
याकै दरसि कौंण गुण छूटा, सब जग आया जात रे।। 3।।
याकी सेव सूल नहीं भाजै, कटै न संसै पास रे।
सौचि बिचारि देखिया मूरति, यौं छाड़ौ रैदास रे।। 4।।
(राग सोरठी)
68. पांवन जस माधो तोरा
पांवन जस माधो तोरा।
तुम्ह दारन अध मोचन मोरा।। टेक।।
कीरति तेरी पाप बिनासै, लोक बेद यूँ गावै।
जो हम पाप करत नहीं भूधर, तौ तू कहा नसावै।। 1।।
जब लग अंग पंक नहीं परसै, तौ जल कहा पखालै।
मन मलन बिषिया रंस लंपट, तौ हरि नांउ संभालै।। 2।।
जौ हम बिमल हिरदै चित अंतरि, दोस कवन परि धरि हौ।
कहै रैदास प्रभु तुम्ह दयाल हौ, अबंध मुकति कब करि हौ।। 3।।
(राग टोड़ी)
69. बपुरौ सति रैदास कहै
बपुरौ सति रैदास कहै।
ग्यान बिचारि नांइ चित राखै, हरि कै सरनि रहै रे।। टेक।।
पाती तोड़ै पूज रचावै, तारण तिरण कहै रे।
मूरति मांहि बसै परमेसुर, तौ पांणी मांहि तिरै रे।। 1।।
त्रिबिधि संसार कवन बिधि तिरिबौ, जे दिढ नांव न गहै रे।

नाव छाड़ि जे डूंगै बैठे, तौ दूणां दूख सहै रे।। 2।।
गुरु कौं सबद अरु सुरति कुदाली, खोदत कोई लहै रे।
रांम काहू कै बाटै न आयौ, सोनैं कूल बहै रे।। 3।।
झूठी माया जग डहकाया, तो तनि ताप दहै रे।
कहै रैदास रांम जपि रसनां, माया काहू कै संगि न रहै रे।। 4।।
(राग सोरठी)

70. बरजि हो बरजि बीठल, माया जग खाया
बरजि हो बरजि बीठल, माया जग खाया।
महा प्रबल सब हीं बसि कीये, सुर नर मुनि भरमाया।। टेक।।
बालक बिरधि तरुन अति सुंदरि, नांनां भेष बनावै।
जोगी जती तपी संन्यासी, पंडित रहण न पावै।। 1।।
बाजीगर की बाजी कारनि, सबकौ कौतिग आवै।
जो देखै सो भूलि रहै, वाका चेला मरम जु पावै।। 2।।
खंड ब्रह्मांड लोक सब जीते, ये ही बिधि तेज जनावै।
स्वंभू कौ चित चोरि लीयौ है, वा कै पीछैं लागा धावै।। 3।।
इन बातनि सुकचनि मरियत है, सबको कहै तुम्हारी।
नैन अटकि किनि राखौ केसौ, मेटहु बिपति हमारी।। 4।।
कहै रैदास उदास भयौ मन, भाजि कहाँ अब जइये।
इत उत तुम्ह गौब्यंद गुसांई, तुम्ह ही मांहि समइयै।। 5।।
(राग आसावरी)

71. बंदे जानि साहिब गनीं
बंदे जानि साहिब गनीं।
संमझि बेद कतेब बोलै, ख्वाब मैं क्या मनीं।। टेक।।
ज्वांनीं दुनी जमाल सूरति, देखिये थिर नांहि बे।
दम छसै सहंस्र इकवीस हरि दिन, खजांनें थैं जांहि बे।। 1।।
मतीं मारे ग्रब गाफिल, बेमिहर बेपीर बे।
दरी खानैं पड़ै चोभा, होत नहीं तकसीर बे।। 2।।
कुछ गाँठि खरची मिहर तोसा, खैर खूबी हाथि बे।
धणीं का फुरमांन आया, तब कीया चालै साथ बे।। 3।।
तजि बद जबां बेनजरि कम दिल, करि खसकी कांणि बे।
रैदास की अरदास सुणि, कछू हक हलाल पिछांणि बे।। 4।।

(राग आसा)

72. भगति ऐसी सुनहु रे भाई

भगति ऐसी सुनहु रे भाई।
आई भगति तब गई बड़ाई।। टेक।।
कहा भयौ नाचौं अरु गायैं, कहौं भयौ तप कीन्हैं।
कहा भयौ जे चरन पखालै, जो परम तत नहीं चीन्हैं।। 1।।
कहा भयौ जू मूँड मुंड़ायौ, बहु तीरथ ब्रत कीन्हैं।
स्वांमी दास भगत अरु सेवग, जो परंम तत नहीं चीन्हैं।। 2।।
कहै रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमांन मेटि आपा पर, पिपलक होइ चुणि खावै।। 3।।

73. भाई रे भ्रम भगति सुजांनि

भाई रे भ्रम भगति सुजांनि।
जौ लूँ नहीं साच सूँ पहिचानि।। टेक।।
भ्रम नाचण भ्रम गाइण, भ्रम जप तप दांन।
भ्रम सेवा भ्रम पूजा, भ्रम सूँ पहिचांनि।। 1।।
भ्रम षट क्रम सकल सहिता, भ्रम गृह बन जांनि।
भ्रम करि करम कीये, भरम की यहु बांनि।। 2।।
भ्रम इंद्री निग्रह कीयां, भ्रंम गुफा में बास।
भ्रम तौ लौं जांणियै, सुनि की करै आस।। 3।।
भ्रम सुध सरीर जौ लौं, भ्रम नांउ बिनांउं।
भ्रम भणि रैदास तौ लौं, जो लौं चाहे ठांउं।। 4।।

(राग रामकली)

74. भाई रे रांम कहाँ हैं मोहि बतावो

भाई रे रांम कहाँ हैं मोहि बतावो।
सति रांम ताकै निकटि न आवो।। टेक।।
राम कहत जगत भुलाना, सो यहु रांम न होई।
करंम अकरंम करुणांमै केसौ, करता नांउं सु कोई।। 1।।
जा रामहि सब जग जानैं, भ्रमि भूले रे भाई।
आप आप थैं कोई न जांणै, कहै कौंन सू जाई।। 2।।
सति तन लोभ परसि जीय तन मन, गुण परस नहीं जाई।
अखिल नांउं जाकौ ठौर न कतहूँ, क्यूं न कहै समझाई।। 3।।

भयौ रैदास उदास ताही थैं, करता को है भाई।
केवल करता एक सही करि, सति रांम तिहि ठांई।। 4।।
(राग रामकली)

75. भाई रे सहज बन्दी लोई

भाई रे सहज बन्दी लोई, बिन सहज सिद्धि न होई।
लौ लीन मन जो जानिये, तब कीट भृंगी होई।। टेक।
आपा पर चीन्हे नहीं रे, और को उपदेस।
कहाँ ते तुम आयो रे भाई, जाहुगे किस देस।। 1।।
कहिये तो कहिये काहि कहिये, कहाँ कौन पतियाइ।
रैदास दास अजान है करि, रह्यो सहज समाइ।। 2।।
(राग आसा)

76. भेष लियो पै भेद न जान्यो

भेष लियो पै भेद न जान्यो।
अमृत लेई विषै सो मान्यो।। टेक।।
काम क्रोध में जनम गँवायो, साधु सँगति मिलि राम न गायो।। 1।।
तिलक दियो पै तपनि न जाई, माला पहिरे घनेरी लाई।। 2।।
कह रैदास परम जो पाऊँ, देव निरंजन सत कर ध्याऊँ।। 3।।
(राग भैरूँ-भैरव)

77. मन मेरे सोई सरूप बिचार

मन मेरे सोई सरूप बिचार।
आदि अंत अनंत परंम पद, संसै सकल निवारं।। टेक।।
जस हरि कहियत तस तौ नहीं, है अस जस कछू तैसा।
जानत जानत जानि रह्यौ मन, ताकौ मरम कहौ निज कैसा।। 1।।
कहियत आन अनुभवत आन, रस मिल्या न बेगर होई।
बाहरि भीतरि गुप्त प्रगट, घट घट प्रति और न कोई।। 2।।
आदि ही येक अंति सो एकै, मधि उपाधि सु कैसे।
है सो येक पै भ्रम तैं दूजा, कनक अल्यंकृत जैसैं।। 3।।
कहै रैदास प्रकास परम पद, का जप तप ब्रत पूजा।
एक अनेक येक हरि, करौं कवण बिधि दूजा।। 4।।
(राग सोरठी)

78. मरम कैसैं पाइबौ रे
मरम कैसैं पाइबौ रे।
पंडित कोई न कहै समझाइ, जाथैं मरौ आवागवन बिलाइ।। टेक।।
बहु बिधि धरम निरूपिये, करता दीसै सब लोई।
जाहि धरम भ्रम छूटिये, ताहि न चीन्हैं कोई।। 1।।
अक्रम क्रम बिचारिये, सुण संक्या बेद पुरांन।
बाकै हृदै भै भ्रम, हरि बिन कौंन हरै अभिमांन।। 2।।
सतजुग सत त्रेता तप, द्वापरि पूजा आचार।
तीन्यूं जुग तीन्यूं दिढी, कलि केवल नांव अधार।। 3।।
बाहरि अंग पखालिये, घट भीतरि बिबधि बिकार।
सुचि कवन परिहोइये, कुंजर गति ब्यौहार।। 4।।
रवि प्रकास रजनी जथा, गत दीसै संसार पारस मनि तांबौ छिवै।
कनक होत नहीं बार, धन जोबन प्रभु नां मिलै।। 5।।
ना मिलै कुल करनी आचार।
एकै अनेक बिगाइया, ताकौं जाणैं सब संसार।। 6।।
अनेक जतन करि टारिये, टारी टरै न भ्रम पास।
प्रेम भगति नहीं उपजै, ताथैं रैदास उदास।। 7।।
(राग गौड़ी)
79. माटी को पुतरा कैसे नचतु है
माटी को पुतरा कैसे नचतु है।
देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है।। टेक।।
जब कुछ पावै तब गरबु करतु है।
माइआ गई तब रोवनु लगतु है।। 1।।
मन बच क्रम रस कसहि लुभाना।
बिनसि गइआ जाइ कहूँ समाना।। 2।।
कहि रविदास बाजी जगु भाई।
बाजीगर सउ मोहि प्रीति बनि आई।। 3।।
(राग आसा)
80. माधवे का कहिये भ्रम ऐसा
माधवे का कहिये भ्रम ऐसा।
तुम कहियत होह न जैसा।। टेक।।

त्रिपति एक सेज सुख सूता, सुपिनैं भया भिखारी।
अछित राज बहुत दुख पायौ, सा गति भई हमारी।। 1।।
जब हम हुते तबैं तुम्ह नांहीं, अब तुम्ह हौ मैं नांहीं।
सलिता गवन कीयौ लहरि महोदधि, जल केवल जल मांही।। 2।।
रजु भुजंग रजनी प्रकासा, अस कछु मरम जनावा।
संमझि परी मोहि कनक अल्यंक्रत ज्यूं, अब कछू कहत न आवा।। 3।।
करता एक भाव जगि भुगता, सब घट सब बिधि सोई।
कहै रैदास भगति एक उपजी, सहजैं होइ स होई।। 4।।
(राग सोरठी)

81. माधवे तुम न तोरहु तउ हम नहीं तोरहि

माधवे तुम न तोरहु तउ हम नहीं तोरहि।
तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि।। टेक।।
जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा।
जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा।। 1।।
जउ तुम दीवरा तउ हम बाती।
जउ तुम तीरथ तउ हम जाती।। 2।।
साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी।
तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी।। 3।।
जह जह जाउ तहा तेरी सेवा।
तुम सो ठाकुरु अउरु न देवा।। 4।।
तुमरे भजन कटहि जम फाँसा।
भगति हेत गावै रविदासा।। 5।।
(राग सोरठी)

82. माधौ अविद्या हित कीन्ह

माधौ अविद्या हित कीन्ह।
ताथैं मैं तोर नांव न लीन्ह।। टेक।।
मिग्र मीन भ्रिग पतंग कुंजर, एक दोस बिनास।
पंच ब्याधि असाधि इहि तन, कौंन ताकी आस।। 1।।
जल थल जीव जंत जहाँ-जहाँ लौं करम पासा जाइ।
मोह पासि अबध बाधौ, करियै कौंण उपाइ।। 2।।
त्रिजुग जोनि अचेत संम भूमि, पाप पुन्य न सोच।

मानिषा अवतार दुरलभ, तिहू संकुट पोच।। 3।।
रैदास दास उदास बन भव, जप न तप गुरु ग्यांन।
भगत जन भौ हरन कहियत, ऐसै परंम निधांन।। 4।।
(राग आसा)
83. माधौ भ्रम कैसैं न बिलाइ
माधौ भ्रम कैसैं न बिलाइ।
ताथैं द्वती भाव दरसाइ।। टेक।।
कनक कुंडल सूत्र पट जुदा, रजु भुजंग भ्रम जैसा।
जल तरंग पांहन प्रितमां ज्यूँ, ब्रह्म जीव द्वती ऐसा।। 1।।
बिमल ऐक रस, उपजै न बिनसै, उदै अस्त दोई नांहीं।
बिगता बिगति गता गति नांहीं, बसत बसै सब मांहीं।। 2।।
निहचल निराकार अजीत अनूपम, निरभै गति गोब्यंदा।
अगम अगोचर अखिर अतरक, त्रिगुण नित आनंदा।। 3।।
सदा अतीत ग्यांन ध्यानं बिरिजित, नीरबिकांर अबिनासी।
कहै रैदास सहज सूंनि सति, जीवन मुकति निधि कासी।। 4।।
(राग सोरठी)
84. माधौ संगति सरनि तुम्हारी
माधौ संगति सरनि तुम्हारी।
जगजीवन कृश्न मुरारी।। टेक।।
तुम्ह मखतूल गुलाल चत्रभुज, मैं बपुरौ जस कीरा।
पीवत डाल फूल रस अंमृत, सहजि भई मति हीरा।। 1।।
तुम्ह चंदन मैं अरंड बापुरौ, निकटि तुम्हारी बासा।
नीच बिरख थैं ऊँच भये, तेरी बास सुबास निवासा।। 2।।
जाति भी वोंछी जनम भी वोछा, वोछा करम हमारा।
हम सरनागति रांम राइ की, कहै रैदास बिचारा।। 3।।
(राग आसा)
85. माया मोहिला कान्ह
माया मोहिला कान्ह।
मैं जन सेवग तोरा।। टेक।।
संसार परपंच मैं ब्याकुल परंमांनंदा।
त्रहि त्रहि अनाथ नाथ गोब्यंदा।। 1।।

रैदास बिनवैं कर जोरी।
अबिगत नाथ कवन गति मोरी।। 2।।
(राग कानड़ा)
86. मिलत पिआरों प्रान नाथु कवन भगति ते
मिलत पिआरों प्रान नाथु कवन भगति ते।
साध संगति पाइ परम गते।। टेक।।
मैले कपरे कहा लउ धोवउ, आवैगी नीद कहा लगु सोवउ।। 1।।
जोई जोई जोरिओ सोई-सोई फाटिओ।
झूठै बनजि उठि ही गई हाटिओ।। 2।।
कहु रविदास भइयो जब लेखो।
जोई जोई कीनो सोई-सोई देखिओ।। 3।।
(राग मल्हार)
87. मेरी प्रीति गोपाल सूँ जिनि घटै हो
मेरी प्रीति गोपाल सूँ जिनि घटै हो।
मैं मोलि महँगी लई तन सटै हो।। टेक।।
हिरदै सुमिरंन करौं नैन आलोकनां, श्रवनां हरि कथा पूरि राखूँ।
मन मधुकर करौ, चरणां चित धरौं, रांम रसाइन रसना चाखूँ।। 1।।
साध संगति बिनां भाव नहीं उपजै, भाव बिन भगति क्यूँ होइ तेरी।
बंदत रैदास रघुनाथ सुणि बीनती, गुर प्रसादि क्रिया करौ मेरी।। 2।।
(राग धनाश्री)
88. मैं का जांनूं देव मैं का जानूं
मैं का जांनूं देव मैं का जानूं।
मन माया के हाथि बिकांनूं।। टेक।।
चंचल मनवां चहु दिसि धावैय जिभ्या इंद्री हाथि न आवै।
तुम तौ आहि जगत गुर स्वांमीं, हम कहियत कलिजुग के कामी।। 1।।
लोक बेद मेरे सुकृत बढ़ाई, लोक लीक मोपैं तजी न जाई।
इन मिलि मेरौ मन जु बिगार्यौ, दिन दिन हरि जी सूँ अंतर पार्यौ।। 2।।
सनक सनंदन महा मुनि ग्यांनी, सुख नारद ब्यास इहै बखांनीं।
गावत निगम उमांपति स्वांमीं, सेस सहंस मुख कीरति गांमी।। 3।।
जहाँ जहाँ जांऊँ तहाँ दुख की रासी, जौ न पतियाइ साध है साखी।
जमदूतनि बहु बिधि करि मार्यौ, तऊ निलज अजहूँ नहीं हार्यौ।। 4।।

हरि पद बिमुख आस नहीं छूटै, ताथैं त्रिसनां दिन दिन लूटै।
बहु बिधि करम लीयैं भटकावै, तुमहि दोस हरि कौं न लगावै।। 5।।
केवल रांम नांम नहीं लीया। संतुति विषै स्वादि चित दीया।
कहै रैदास कहाँ लग कहिये, बिन जग नाथ सदा सुख सहियै।। 6।।
(राग धनाश्री)

89. मो सउ कोऊ न कहै समझाइ

मो सउ कोऊ न कहै समझाइ।
जाते आवागवनु बिलाइ।। टेक।।
सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार।
तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार।। 1।।
पार कैसे पाइबो रे।।
बहु बिधि धरम निरूपीऐ करता दीसै सभ लोइ।
कवन करम ते छूटी ऐ जिह साधे सभ सिधि होई।। 2।।
करम अकरम बीचारी ए संका सुनि बेद पुरान।
संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु।। 3।।
बाहरु उदकि पखारीऐ घट भीतरि बिबिध बिकार।
सुध कवन पर होइबो सुव कुंजर बिधि बिउहार।। 4।।
रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार।
पारस मानो ताबो छुए कनक होत नहीं बार।। 5।।
परम परस गुरु भेटीऐ पूरब लिखत लिलाट।
उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट।। 6।।
भगत जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार।
सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक बिचार।। 7।।
अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टरै भ्रम फास।
प्रेम भगति नहीं उपजै ता ते रविदास उदास।। 8।।
(राग गौड़ी बैरागणि)

90. यह अंदेस सोच जिय मेरे

यह अंदेस सोच जिय मेरे।
निसिबासर गुन गाऊ्म तेरे।। टेक ।।
तुम चिंतित मेरी चिंतहु जाई।
तुम चिंतामनि हौ एक नाई ।1।

भगत-हेत का का नहिं कीन्हा।
हमरी बेर भए बलहीना ।2।
कह रैदास दास अपराधी।
जेहि तुम द्रवौ सो भगति न साधी ।3।

91. या रमां एक तूं दांनां, तेरा आदू बैश्नौं
या रमां एक तूं दांनां, तेरा आदू बैश्नौं।
तू सुलितांन सुलितांनां बंदा सकिसंता रजांनां।। टेक।।
मैं बेदियांनत बदनजर दे, गोस गैर गुफतार।
बेअदब बदबखत बीरां, बेअकलि बदकार।। 1।।
मैं गुनहगार गुमराह गाफिल, कंम दिला करतार।
तूँ दयाल ददि हद दांवन, मैं हिरसिया हुसियार।। 2।।
यहु तन हस्त खस्त खराब, खातिर अंदेसा बिसियार।
रैदास दास असांन, साहिब देहु अब दीदार।। 3।।

(राग जंगली गौड़ी)

92. रथ कौ चतुर चलावन हारौ
रथ कौ चतुर चलावन हारौ।
खिण हाकै खिण ऊभौ राखै, नहीं आन कौ सारौ।। टेक।।
जब रथ रहै सारहीं थाके, तब को रथहि चलावै।
नाद बिनोद सबै ही थाकै, मन मंगल नहीं गावैं।। 1।।
पाँच तत कौ यहु रथ साज्यौ, अरधैं उरध निवासा।
चरन कवल ल्यौ लाइ रह्यौ है, गुण गावै रैदासा।। 2।।

(राग सोरठी)

93. राम गुसईआ जीअ के जीवना
राम गुसईआ जीअ के जीवना।
मोहि न बिसारहु मैं जनु तेरा।। टेक।।
मेरी संगति पोच सोच दिनु राती। मेरा करमु कटिलता जनमु कुभांति।। 1।।
मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई। चरण न छाडउ सरीर कल जाई।। 2।।
कहु रविदास परउ तेरी साभा। बेगि मिलहु जन करि न बिलंबा।। 3।।

(राग गौड़ी)

94. राम जन हूँ उंन भगत कहाऊँ
राम जन हूँ उंन भगत कहाऊँ, सेवा करौं न दासा।

गुनी जोग जग्य कछू न जांनूं, ताथैं रहूँ उदासा।। टेक।।
भगत हूँ वाँ तौ चढ़ै बड़ाई। जोग करौं जग मानैं।
गुणी हूँ वांथैं गुणीं जन कहैं, गुणी आप कूँ जानैं।। 1।।
ना मैं ममिता मोह न महियाँ, ए सब जांहि बिलाई।
दोजग भिस्त दोऊ समि करि जांनूँ, दहु वां थैं तरक है भाई।। 2।।
मै तैं ममिता देखि सकल जग, मैं तैं मूल गँवाई।
जब मन ममिता एक एक मन, तब हीं एक है भाई।। 3।।
कृश्न करीम रांम हरि राधौ, जब लग एक एक नहीं पेख्या।
बेद कतेब कुरांन पुरांननि, सहजि एक नहीं देख्या।। 4।।
जोई जोई करि पूजिये, सोई सोई काची, सहजि भाव सति होई।
कहै रैदास मैं ताही कूँ पूजौं, जाकै गाँव न ठाँव न नांम नहीं कोई।। 5।।
(राग रामकली)

95. राम बिन संसै गाँठि न छूटै

राम बिन संसै गाँठि न छूटै।
कांम क्रोध मोह मद माया, इन पंचन मिलि लूटै।। टेक।।
हम बड़ कवि कुलीन हम पंडित, हम जोगी संन्यासी।
ग्यांनी गुनीं सूर हम दाता, यहु मति कदे न नासी।। 1।।
पढ़ें गुनें कछू संमझि न परई, जौ लौ अनभै भाव न दरसै।
लोहा हरन होइ धूँ कैसें, जो पारस नहीं परसै।। 2।।
कहै रैदास और असमझसि, भूलि परै भ्रम भोरे।
एक अधार नांम नरहरि कौ, जीवनि प्रांन धन मोरै।। 3।।

96. राम मैं पूजा कहा चढ़ाऊँ

राम मैं पूजा कहा चढ़ाऊँ।
फल अरु फूल अनूप न पाऊँ।। टेक ।।
थन तर दूध जो बछरू जुठारी।
पुहुप भँवर जल मीन बिगारी ।1।
मलयागिर बेधियो भुअंगा।
विष अमृत दोउ एक संगा ।2।
मन ही पूजा मन ही धूप।
मन ही सेऊँ सहज सरूप ।3।
पूजा अरचा न जानूँ तेरी।

कह रैदास कवन गति मोरी ।4।

97. रामा हो जगजीवन मोरा

रामा हो जगजीवन मोरा।

तूँ न बिसारि राम मैं जन तोरा।। टेक ।।

संकट सोच पोच दिनराती।

करम कठिन मोरि जाति कुजाती।1।

हरहु बिपति भावै करहु सो भाव।

चरण न छाड़ौं जाव सो जाव।2।

कह रैदास कछु देहु अलंबन।

बेगि मिलौ जनि करो बिलंबन।3।

98. रांम राइ का कहिये यहु ऐसी

रांम राइ का कहिये यहु ऐसी।

जन की जांनत हौ जैसी तैसी।। टेक।।

मीन पकरि काट्यौ अरु फाट्यौ, बांटि कीयौ बहु बांनीं।

खंड खंड करि भोजन कीन्हौं, तऊ न बिसार्यौं पांनी।। 1।।

तै हम बाँधे मोह पासि मैं, हम तूं प्रेम जेवरिया बांध्यौ।

अपने छूटन के जतन करत हौ, हम छूटे तूँ आराध्यौ।। 2।।

कहै रैदास भगति इक बाढ़ी, अब काकौ डर डरिये।

जा डर कौं हम तुम्ह कौं सेवैं, सु दुख अजहूँ सहिये।। 3।।

(राग सोरठी)

99. रांमहि पूजा कहाँ चढ़ाऊँ

रांमहि पूजा कहाँ चढ़ाऊँ।

फल अरु फूल अनूप न पांऊँ।। टेक।।

थनहर दूध जु बछ जुठार्यौ, पहुप भवर जल मीन बिटार्यौ।

मलियागिर बेधियौ भवंगा, विष अंम्रित दोऊँ एकै संगा।। 1।।

मन हीं पूजा मन हीं धूप, मन ही सेऊँ सहज सरूप।। 2।।

पूजा अरचा न जांनूं रांम तेरी, कहै रैदास कवन गति मेरी।। 3।।

(राग आसा)

100. रे चित चेति चेति अचेत काहे

रे चित चेति चेति अचेत काहे, बालमीकौं देख रे।

जाति थैं कोई पदि न पहुच्या, राम भगति बिसेष रे।। टेक।।

षट क्रम सहित जु विप्र होते, हरि भगति चित द्रिढ नांहि रे।
हरि कथा सूँ हेत नांहीं, सुपच तुलै तांहि रे।। 1।।
स्वान सत्रु अजाति सब थैं, अंतरि लावै हेत रे।
लोग वाकी कहा जानैं, तीनि लोक पवित रे।। 2।।
अजामिल गज गनिका तारी, काटी कुंजर की पासि रे।
ऐसे द्रुमती मुकती कीये, क्यूँ न तिरै रैदास रे।। 3।।
(राग सोरठी)

101. रे मन माछला संसार समंदे

रे मन माछला संसार समंदे, तू चित्र बिचित्र बिचारि रे।
जिहि गालै गिलियाँ ही मरियें, सो संग दूरि निवारि रे।। टेक।।
जम छैड़ि गणि डोरि छै कंकन, पर त्रिया गालौ जांणि रे।
होइ रस लुबधि रमैं यू मूरिख, मन पछितावै न्यांणि रे।। 1।।
पाप गिल्यौ छै धरम निबौली, तू देखि देखि फल चाखि रे।
पर त्रिया संग भलौ जे होवै, तौ राणां रांवण देखि रे।। 2।।
कहै रैदास रतन फल कारणि, गोब्यंद का गुण गाइ रे।
काचौ कुंभ भर्यौ जल जैसैं, दिन दिन घटतौ जाइ रे।। 3।।
(राग सोरठी)

102. सगल भव के नाइका

सगल भव के नाइका।
इकु छिनु दरसु दिखाइ जी।। टेक।।
कूप भरिओ जैसे दादिरा, कछु देसु बिदेसु न बूझ।
ऐसे मेरा मन बिखिआ बिमोहिआ, कछु आरा पारु न सूझ।। 1।।
मलिन भई मति माधव, तेरी गति लखी न जाइ।
करहु क्रिपा भ्रमु चूकई, मैं सुमति देहु समझाइ।। 2।।
जोगीसर पावहि नहीं, तुअ गुण कथन अपार।
प्रेम भगति कै कारणै, कहु रविदास चमार।। 3।।
(राग गौड़ी पूर्वी)

103. सब कछु करत न कहु कछु कैसैं

सब कछु करत न कहु कछु कैसैं।
गुन बिधि बहुत रहत ससि जैसें।। टेक।।
द्रपन गगन अनींल अलेप जस, गंध जलध प्रतिब्यंबं देखि तस।। 1।।

सब आरंभ अकांम अनेहा, विधि नषेध कीयौ अनकेहा।। 2।।
इहि पद कहत सुनत नहीं आवै, कहै रैदास सुकृत को पावै।। 3।।
(राग जैतश्री)
104. संत की संगति संत कथा रसु
संत की संगति संत कथा रसु।
संत प्रेम माझै दीजै देवा देव।। टेक।।
संत तुझी तनु संगति प्रान।
सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव।। 1।।
संत आचरण संत चो मारगु।
संत च ओल्हग ओल्हगणी।। 2।।
अउर इक मागउ भगति चिंतामणि।
जणी लखावहु असंत पापी सणि।। 3।।
रविदास भणै जो जाणै सो जाणु।
संत अनंतहि अंतः नाही।। 4।।
(राग आसा)
105. संतौ अनिन भगति यहु नांहीं
संतौ अनिन भगति यहु नांहीं।
जब लग सत रज तम पांचूँ गुण ब्यापत हैं या मांही।। टेक।।
सोइ आंन अंतर करै हरि सूँ, अपमारग कूँ आनैं।
कांम क्रोध मद लोभ मोह की, पल पल पूजा ठानैं।। 1।।
सति सनेह इष्ट अंगि लावै, अस्थलि अस्थलि खेलै।
जो कुछ मिलै आंनि अखित ज्यूं, सुत दारा सिरि मेलै।। 2।।
हरिजन हरि बिन और न जानैं, तजै आंन तन त्यागी।
कहै रैदास सोई जन ब्रिमल, निसदिन जो अनुरागी।। 3।।
106. साध का निंदकु कैसे तरै
साध का निंदकु कैसे तरै।
सर पर जानहु नरक ही परै।। टेक।।
जो ओहु अठिसठि तीरथ न्हावै। जे ओहु दुआदस सिला पूजावै।
जे ओहु कूप तटा देवावै। करै निंद सभ बिरथा जावै।। 1।।
जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति। अरपै नारि सीगार समेति।
सगली सिंम्रिति स्रवनी सुनै। करै निंद कवनै नहीं गुनै।। 2।।

जो ओहु अनिक प्रसाद करावै। भूमि दान सोभा मंडपि पावै।
अपना बिगारि बिरांना साढै। करै निंद बहु जोनी हाढै।। 3।।
निंदा कहा करहु संसारा। निंदक का प्ररगटि पाहारा।
निंदकु सोधि साधि बीचारिआ। कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ।। 4।।
(राग गौड़ी)

107. सु कछु बिचार्यौ ताथैं
सु कछु बिचार्यौ ताथैं मेरौ मन थिर के रह्यौ।
हरि रंग लागौ ताथैं बरन पलट भयौ।। टेक।।
जिनि यहु पंथी पंथ चलावा, अगम गवन मैं गमि दिखलावा।। 1।।
अबरन बरन कथैं जिनि कोई, घटि घटि ब्यापि रह्यौ हरि सोई।। 2।।
जिहि पद सुर नर प्रेम पियासा, सो पद्म रमि रह्यौ जन रैदासा।। 3।।
(राग आसा)

108. सेई मन संमझि समरंथ सरनांगता
सेई मन संमझि समरंथ सरनांगता।
जाकी आदि अंति मधि कोई न पावै।।
कोटि कारिज सरै, देह गुंन सब जरैं, नैंक जौ नाम पतिव्रत आवै।। टेक।।
आकार की वोट आकार नहीं उबरै, स्यो बिरंच अरु बिसन तांई।
जास का सेवग तास कौं पाई है, ईस कौं छांड़ि आगै न जाही।। 1।।
गुणंमई मूंरति सोई सब भेख मिलि, निग्रुण निज ठौर विश्रांम नांही।
अनेक जूग बंदिगी बिबिध प्रकार करि, अंति गुंण सेई गुंण मैं समांही।। 2।।
पाँच तत तीनि गुण जूगति करि करि सांईया, आस बिन होत नहीं करम काया।
पाप पूंनि बीज अंकूर जांमै मरै, उपजि बिनसै तिती श्रब माया।। 3।।
क्रितम करता कहैं, परम पद क्यूँ लहैं, भूलि भ्रम मैं पर्यौ लोक सारा।
कहै रैदास जे रांम रमिता भजै, कोई ऐक जन गये उतरि पारा।। 4।।
(राग रामगरी)

109. सो कत जानै पीर पराई
सो कत जानै पीर पराई।
जाकै अंतरि दरदु न पाई।। टेक।।
सह की सार सुहागनी जानै। तजि अभिमानु सुख रलीआ मानै।
तनु मनु देइ न अंतः राखै। अवरा देखि न सुनै अभाखै।। 1।।

दुखी दुहागनि दुइ पख हीनी। जिनि नाह निरंतहि भगति न कीनी।
पुरसलात का पंथु दुहेला। संग न साथी गवनु इकेला।। 2।।
दुखीआ दरदवंदु दरि आइआ। बहुतु पिआस जबाबु न पाइआ।
कहि रविदास सरनि प्रभु तेरी। जिय जानहु तिउ करु गति मेरी।। 3।।
(राग सूही)

110. हउ बलि बलि जाउ रमईया कारने
हउ बलि बलि जाउ रमईया कारने।
कारन कवन अबोल।। टेक।।
हम सरि दीनु दइआलु न तुमसरि। अब पतीआरु किआ कीजै।
बचनी तोर मोर मनु मानैं। जन कउ पूरनु दीजै।। 1।।
बहुत जनम बिछुरे थे माधउ, इहु जनमु तुम्हरे लेखे।
कहि रविदास अस लगि जीवउ। चिर भइओ दरसनु देखे।। 2।।
(राग धनाश्री)

111. हरि को टाँडौ लादे जाइ रे
हरि को टाँडौ लादे जाइ रे।
मैं बनिजारौ रांम कौ।।
रांम नांम धन पायौ, ताथैं सहजि करौं ब्यौपार रे।। टेक।।
औघट घाट घनो घनां रे, त्रिगुण बैल हमार।
रांम नांम हम लादियौ, ताथैं विष लाद्यौ संसार रे।। 1।।
अनतहि धरती धन धर्यौ रे, अनतहि ढूँढ़न जाइ।
अनत कौ धर्यौ न पाइयैं, ताथैं चाल्यौ मूल गँवाइ रे।। 2।।
रैनि गँवाई सोइ करि, द्यौस गँवायो खाइ।
हीरा यहु तन पाइ करि, कौड़ी बदलै जाइ रे।। 3।।
साध संगति पूँजी भई रे, बस्त लई त्रिमोल।
सहजि बलदवा लादि करि, चहुँ दिसि टाँडो मेल रे।। 4।।
जैसा रंग कसूंभं का रे, तैसा यहु संसार।
रमइया रंग मजीठ का, ताथैं भणैं रैदास बिचार रे।। 5।।
(राग केदारौ)

112. हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति
हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति तास समतुलि नहीं आन कोऊ।
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ आन रे आन भरपूरि सोऊ।। टेक।।

जा कै भागवतु लेखी ऐ अवरु नहीं पेखीऐ तास की जाति आछोप छीपा।
बिआस महि लेखी ऐ सनक महि पेखी ऐ नाम की नामना सपत दीपा।।1।।
जा कै ईदि बकरीदि कुल गऊ रे वधु करहि मानी अहि सेख सहीद पीरा।
जा कै बाप वैसी करी पूत ऐसी सरी तिहू रे लोक परसिध कबीरा।। 2।।
जा के कुटंब के ढेढ सभ ढोर ढोवंत फिरहि अजहु बंनारसी आस पासा।
आचार सहित विप्र करहि डंडउति तिन तनै रविदास दासानुदासा।। 3।।
(राग मल्हार)

113. हरि हरि हरि न जपसि रसना
हरि हरि हरि न जपसि रसना।
अवर सभ छाड़ि बचन रचना।। टेक।।
सुध सागर सुरितरु चिंतामनि कामधैन बसि जाके रे।
चारि पदारथ असट महा सिधि नव निधि करतल ताकै।। 1।।
नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अछर माही।
बिआस बीचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही।। 2।।
सहज समाधि उपाधि रहत होइ उड़े भागि लिव लागी।
कहि रविदास उदास दास मतित जनम मरन भै भागी।। 3।।
(राग मारू)

114. हरि हरि हरि न जपहि रसना
हरि हरि हरि न जपहि रसना।
अवर सम तिआगि बचन रचना।। टेक।।
सुख सागरु सुरतर चिंतामनि कामधेनु बसि जाके।
चारि पदारथ असट दसा सिधि नवनिधि करतल ताके।। 1।।
नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अखर माँही।
बिआस बिचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही।। 2।।
सहज समाधि उपाधि रहत फुनि बड़ै भागि लिव लागी।
कहि रविदास प्रगासु रिदै धरि जनम मरन भै भागी।। 3।।
(राग सोरठी)

115. हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे
हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे।
हरि सिमरत जन गए निसतरि तरे।। टेक।।
हरि के नाम कबीर उजागर। जनम जनम के काटे कागर।। 1।।

निमत नामदेउ दूधु पीआइया। तउ जग जनम संकट नहीं आइआ।। 2।।
जनम रविदास राम रंगि राता। इउ गुर परसादि नरक नहीं जाता।। 3।।
(राग आसा)

116. है सब आतम सोयं प्रकास साँचो

है सब आतम सोयं प्रकास साँचो।
निरंतरि निराहार कलपित ये पाँचौं।। टेक।।
आदि मध्य औसान, येक रस तारतंब नहीं भाई।
थावर जंगम कीट पतंगा, पूरि रहे हरिराई।। 1।।
सरवेसुर श्रबपति सब गति, करता हरता सोई।
सिव न असिव न साध अरु सेवक, उभै नहीं होई।। 2।।
ध्रम अध्रम मोच्छ नहीं बंधन, जुरा मरण भव नासा।
दृष्टि अदृष्टि गेय अरु -ज्ञाता, येकमेक रैदासा।। 3।।
(राग रामकली)

117. त्रहि त्रहि त्रिभवन पति पावन

त्रहि त्रहि त्रिभवन पति पावन।
अतिसै सूल सकल बलि जांवन।। टेक।।
कांम क्रोध लंपट मन मोर,
कैसैं भजन करौं रांम तोर।। 1।।
विषम विष्याधि बिहंडनकारी,
असरन सरन सरन भौ हारी।। 2।।
देव देव दरबार दुवारै,
रांम रांम रैदास पुकारै।। 3।।
(राग धनाश्री)

6

संत-गुरु रविदास जी पर हिन्दी कविताएँ

सन्त कवि रविदास जी के प्रति

1. ज्ञान के आकार मुनीश्वर थे परम,
धर्म के ध्वज, हुए उनमें अन्यतम।
पूज्य अग्रज भक्त कवियों के, प्रखर,
कल्पना की किरण नीरज पर सुघर,
पड़ी ज्यों अंगड़ाइयाँ लेकर खड़ी,
हो गयी कविता कि आयी शुभ घड़ी,
जाति की, देखा सभी ने मीचकर,
दृग, तुम्हें श्रद्धा-सलिल से सींचकर।
रानियाँ अवरोध की घेरी हुईं
वाणियाँ ज्यों बनी जब चेरी हुईं
छुआ पारस भी नहीं तुम ने, रहे
कर्म के अभ्यास में, अविरत बहे
ज्ञान-गंगा में, समुज्ज्वल चर्मकार,

चरण छूकर कर रहा मैं नमस्कार।
(रचनाकाल : 1942 ई.)

2. नहाते त्रिकाल रोज पंडित आचारी बड़े
(पलटू दास जी)

नहाते त्रिकाल रोज पंडित आचारी बड़े
सदा पट बसतर खूब अंगन लगाई है।
पूजा नैवेद आरती करते हम विधि-विधान
चंदन औ तुलसी भली-भाँति से चढ़ाई है।
हारे हम कुलीन सब कोटि-कोटि कै उपाय
कैसे तुम ठाकुर हम अपने हूँ न पाई है।
पलटू दास देखो रीझ मेरे, साहिब की
गए हैं वहाँ जब रविदासजी बुलाई है।

पंजाबी कविताएं गुरु-संत रविदास जी

1. सच्च दा गीत

धरती दी अक्ख जद रोयी सी
तूं सच्च दा दीवा बाल दित्ता
पायआ 'नेर पाखंडियां सी एथे
तूं तरक दा राह सी भाल दित्ता
तेरी बेगमपुरा ही मंजिल सी
ताहीउं उसतत करे जहान सारा
तेरी बानी नूं जिस लड़ बन्हआं
श्न्हेरे दा कट्ट जंजाल दित्ता
जग्ग विच्च आया जदों सच्च दा पुजारी
उदों झूठ नूं तां फिकर प्या
इक्को नूर, इक्को रूप सभ दी है तन्द सांझी
वक्खो वक्ख कीहने ऐ केहा
चानने दी लीक जदों जग्ग विच्च खिलरी तां
श्नेरा उदों तिड़क ग्या
किरतां दे सच्चे-सुच्चे थड़्हे उत्ते बह के
आप अकलां नूं रिड़क ग्या
जग्ग विच्च आया जदों .....

धरमां दा नां लैंदे कंम ने कसाईआं वाले
बुत्त, बन्द्यां दे विच्चों होर ने
पक्खपात, जातपात वाला जो ने रौला पाउंदे
कंम मन्दे उच्ची पाउंदे सोर ने
मास वाले लोथड़े हां इक्को लहू नाड़ां विच्च
वंडियां जो पाउंदे उहो चोर ने
जिन्द-जान जेहड़ी ऐ मनुक्खता दे लेखे लग्गे
उच्चे थड़ूहे खड़ूह के केहा
जग्ग विच्च आया जदों .....
कौन करे फैसला इह कौन छोटा, कौन वड्डा
सकलां दे पक्खों सभ इक ने
हर किसे मन विच्च प्यार दी चिनग लाउणी
फेर होने सभ इक्क मिक्क ने
कदे वी ना राग दूज-तीज वाला गाउन देणा
एदां ही तां पैंदे सारे फिक्क ने
जग्ग विच्च दे के सारे होका तूं बराबरी दा
सार्यां नूं बाहां च ल्या
जग्ग विच्च आया जदों .....
अंधकार सम्यां च हौसले दा रूप सी तूं
पूरा अखवाआ विच्च जग्ग दे
सारियां सुगंधियां नूं हवा विच्च घोल दित्ता
बेगमपुरे वाले उच्चे सुर बज्जदे
बन्दे तों बन्दे नाल वितकरा ना होवे कोई
रहन इहो नाअरे सदा गज्जदे
छड्ड बुत्त पूजने तूं झूठे धरवास इहो
की ऐ धरवासां च प्या
जग्ग विच्च आया जदों .....
(केहर शरीफ)

2. भगत रविदास नूं
धुर की बाणीएं ! दिलां दीए राणीए नीं !
तेरे मूंह लगाम ना रहन देना।

जिन्नी बानी है किरत दे फलसफे दी,
नाले उहनूं बेनाम ना रहन देना।
इक्को बाप ते इक्को दे पुत्त सारे,
हे रविदास मैं फिर दुहरा रेहां हां।
'बेगमपुरे' बारे तेरे गीत सारे,
इस रचना दे विच समा रेहा हां।
इह नहीं दरबार देहुर्यां दा,
किरती-भगत दा जिथे सनमान नहीयों।
किरती-कामे नूं नीच चंडाल दस्से,
गुरु ग्रंथ कोयी वेद- पुरान नहीयों।
किरती ब्राहमन दी जुत्ती नूं गंढ के तूं,
पुन्न लै ल्या गंगा दे नहाउन वरगा।
बे-दोशी हरजोटी छडाउन खातर,
जेरा कर ल्या मरन मराउन वरगा।
तेरी रम्बी ने भरमा दे भेद पाड़े,
तेरी सूयी ने लोकां दे फट्ट सीते।
तेरे टांकड़े ने लायआ अजब टांका,
अड्डे राठां दे चौड़-चुपट्ट कीते।
किरती इक्क जमात है जात नहीओं,
जाती भेद है हेज जन्नूनियां दा।
कुन्ना विच घुचल्ल के साफ कीता,
काला चित्त तूं मज्हबी कानून्नियां दा।
तेरे गीतां 'चों सम्यां ने सेध लै के,
समां सोचना किरत अजादियां दा।
कदे होएगा हिन्द दी हिक्क उत्ते,
बेगमपुरा इक्क पिंड आबादियां दा।
(संत राम उदासी)

3. भगत रविदास नूं शरधांजली

चोजां वाल्या गुरु रविदास जीओ,
तैनूं शरधा दे फुल्ल चड़्हाउन लग्गां।
तेरी याद विच बैठके दो घड़ियां,

इक्क दो प्यार दे हंझू वहाउन लग्गां।
तेरी सोहनी तसवीर ते नीझ ला के,
दरशन रज्ज के पाउन नूं जिय करदा।
तेरी दरे-दहलीज ते रगड़ मत्था,
मुड़के किसमत बणाउन नूं जिय करदा।
तेरी रम्बी ने जुलम दी खल्ल लाही,
तेरी सूयी ने दुक्खां दे फट्ट सीते।
तेरे टांकने ने लायआ अजब टांका,
साकत मोम दे वांगरा लट्ट कीते।
जेहड़ी गंगा दे दरशन नूं जान लोकीं,
तेरे कोलों उह कौडियां मंगदी सी।
जिथे लोक मसां मर मर के अप्पड़दे ने,
तेरे पत्थर दे हेठां दी लंघदी सी।
मैनूं जापदा ए तेरी जोत सदका,
अछूत जातियां दी जोत जगदी ए।
तेरी जोत 'चों निकलके लाट तत्ती,
सिधी जुलम दे सीने नूं लग्गदी ए।
मैनूं जापदा ए जुलम दी अग्ग अन्दर,
अंमृत सी तां तेरी तासीर दा सी।
झगड़ा नहीं सी छूत-अछूत वाला,
सारा झगड़ा गरीब अमीर दा सी।
मेरे दात्या तेरे ही देस अन्दर,
तेरे बन्द्यां दा कौडी मुल्ल नहीयों।
पैसे वालड़े दे हत्थीं रब्ब विक्या,
जीवन बन्दे दा पैसे दे तुल्ल नहीयों।
सीना जोरी ते चोर बलैकियां दा,
लोहा चल्लदा एस जहान अन्दर।
दसां नहुंआं दी किरत दे काम्यां दा,
कौडी मुल्ल नहीं हिन्दुसतान अन्दर।
एथे धरमां ते मजबां ने पाए पाड़े,
इहनां बन्दे नूं बन्दे तों वंड्या ए।

जे तूं नीचां ते ऊचां दा मेल कीता,
इहनां धरमां ने एस नूं खंड्या ए।
तैनूं तरस मजदूर मजलूम दा सी,
नाल नीव्यां तेरियां यारियां सी।
गोहड़े रूं दे डुब्बदे पंडतां दे,
तेरी पथरी वी लाउंदी तारियां सी।
अज्ज फेर तूं आपनी रूह घल्लदे,
नशा पैसे दी ताकत दा मुक्क जावे।
ऊच नीच दा रेड़का मुक्क जावे,
पानी दुक्खां ते जुलमां दा सुक्क जावे।

7

भक्ति काल

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्ति काल अपना एक अहम और महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आदिकाल के बाद आये इस युग को पूर्व मध्यकाल भी कहा जाता है। जिसकी समयावधि संवत् 1325ई. से संवत् 1650ई तक की मानी जाती है। यह हिंदी साहित्य(साहित्य दो प्रकार के हैं- धार्मिक साहित्य और लौकिक साहित्य) का श्रेष्ठ युग है। जिसको जॉर्ज ग्रियर्सन ने स्वर्णकाल, श्यामसुन्दर दास ने स्वर्णयुग, आचार्य राम चंद्र शुक्ल ने भक्ति काल एवं हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक जागरण कहा। सम्पूर्ण साहित्य के श्रेष्ठ कवि और उत्तम रचनाएं इसी युग में प्राप्त होती हैं।

दक्षिण में आलवार बंधु नाम से कई प्रख्यात भक्त हुए हैं। इनमें से कई तथाकथित नीची जातियों के भी थे। वे बहुत पढ़े-लिखे नहीं थे, परंतु अनुभवी थे। आलवारों के पश्चात दक्षिण में आचार्यों की एक परंपरा चली जिसमें रामानुजाचार्य प्रमुख थे।

रामानुजाचार्य की परंपरा में रामानंद हुए। उनका व्यक्तित्व असाधारण था। वे उस समय के सबसे बड़े आचार्य थे। उन्होंने भक्ति के क्षेत्र में ऊंच-नीच का भेद तोड़ दिया। सभी जातियों के अधिकारी व्यक्तियों को आपने शिष्य बनाया। उस समय का सूत्र हो गया:

जाति-पांति पूछे नहिं कोई।
हरि को भजै सो हरि का होई॥

रामानंद ने विष्णु के अवतार राम की उपासना पर बल दिया। रामानंद ने और उनकी शिष्य-मंडली ने दक्षिण की भक्तिगंगा का उत्तर में प्रवाह किया। समस्त उत्तर-भारत इस पुण्य-प्रवाह में बहने लगा। भारत भर में उस समय पहुंचे हुए संत और महात्मा भक्तों का आविर्भाव हुआ।

महाप्रभु वल्लभाचार्य ने पुष्टि-मार्ग की स्थापना की और विष्णु के कृष्णावतार की उपासना करने का प्रचार किया। उनके द्वारा जिस लीला-गान का उपदेश हुआ उसने देशभर को प्रभावित किया। अष्टछाप के सुप्रसिद्ध कवियों ने उनके उपदेशों को मधुर कविता में प्रतिबिंबित किया।

इसके उपरांत माध्व तथा निंबार्क संप्रदायों का भी जन-समाज पर प्रभाव पड़ा है। साधना-क्षेत्र में दो अन्य संप्रदाय भी उस समय विद्यमान थे। नाथों के योग-मार्ग से प्रभावित संत संप्रदाय चला जिसमें प्रमुख व्यक्तित्व संत कबीरदास का है। मुसलमान कवियों का सूफीवाद हिंदुओं के विशिष्टाद्वैतवाद से बहुत भिन्न नहीं है। कुछ भावुक मुसलमान कवियों द्वारा सूफीवाद से रंगी हुई उत्तम रचनाएं लिखी गई।

भारतीय धर्म और संस्कृति के इतिहास में कृष्ण सदैव एक अद्‌भुत व विलक्षण व्यक्तित्व माने जाते रहें है। हमारे प्राचीन ग्रंथों में यत्र - तत्र कृष्ण का उल्लेख मिलता है जिससे उनके जीवन के विभिन्न रूपों का पता चलता है।

यदि वैदिक व संस्कृत साहित्य के आधार पर देखा जाए तो कृष्ण के तीन रूप सामने आते हैं–

1. बाल व किशोर रूप, 2. क्षत्रिय नरेश, 3. ऋषि व धर्मोपदेशक।

श्रीकृष्ण विभिन्न रूपों में लौकिक और अलौकिक लीलाएं दिखाने वाले अवतारी पुरुष हैं। गीता, महाभारत व विविध पुराणों में उन्ही के इन विविध रूपों के दर्शन होतें हैं।

कृष्ण महाभारत काल में ही अपने समाज में पूजनीय माने जाते थे। वे समय समय पर सलाह देकर धर्म और राजनीति का समान रूप से संचालन करते थे। लोगों में उनके प्रति श्रद्धा और आस्था का भाव था। कृष्ण भक्ति काव्य धारा के कवियों ने अपनी कविताओं में राधा - कृष्णा की लीलाओं को प्रमुख विषय बनाकर वृहद काव्य सृजन किया। इस काव्यधारा की प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार है–

1. राम और कृष्ण की उपासना–समाज में अवतारवाद की भावना के फलस्वरूप राम और कृष्ण दोनों के ही रूपों का पूजन किया गया।

दोनों के ही पूर्ण ब्रह्म का प्रतीक मानकर, आदर्श मानव के रूप में प्रस्तुत किया गया।

किंतु जहाँ राम मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में सामने आते हैं, वही कृष्ण एक सामान्य परिवार में जन्म लेकर सामंती अत्याचारों का विरोध करते हैं। वे जीवन में अधिकार और कर्त्तव्य के सुंदर मेल का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

वे जिस तन्मयता से गोपियों के साथ रास रचाते हैं, उसी तत्परता से राजनीति का संचालन करते हैं या फिर महाभारत के युद्ध भूमि में गीता उपदेश देते हैं।

इस प्रकार से राम व कृष्ण ने अपनी अपनी चारित्रिक विशेषताओं द्वारा भक्तों के मानस को आंदोलित किया।

2. राधा-कृष्ण की लीलाएं–कृष्णा- भक्ति काव्य धारा के कवियों ने अपनी कविताओं में राधा-कृष्णा की लीलाओं को प्रमुख विषय बनाया।

श्रीमदभागवत में कृष्ण के लोकरंजक रूप को प्रस्तुत किया गया था।

भागवत के कृष्ण स्वंय गोपियों से निर्लिप्त रहते हैं।

गोपियाँ बार-बार प्रार्थना करती है, तभी वे प्रकट होतें हैं जबकि हिन्दी कवियों के कान्हा एक रसिक छैला बनकर गोपियों का दिल जीत लेते है।

सूरदास जी ने राधा-कृष्ण के अनेक प्रसंगों का चित्रण कर उन्हें एक सजीव व्यक्तित्व प्रदान किया है।

हिन्दी कवियों ने कृष्ण के चरित्र को नाना रूप रंग प्रदान किये हैं, जो काफी लीलामय व मधुर जान पड़ते हैं।

3. वात्सल्य रस का चित्रण–पुष्टिमार्ग प्रारंभ हुया तो बाल कृष्ण की उपासना का ही चलन था। अत: कवियों ने कृष्ण के बाल रूप को पहले पहले चित्रित किया।

यदि वात्सल्य रस का नाम लें तो सबसे पहले सूरदास का नाम आता है, जिन्हें आप इस विषय का विशेषज्ञ कह सकते हैं। उन्होंने कान्हा के बचपन की सूक्ष्म से सूक्ष्म गतिविधियाँ भी ऐसी चित्रित की हैं, मानो वे स्वयं वहाँ उपस्थित हों।

मैया कबहूँ बढ़ेगी चोटि ?

कितनी बार मोहिं दूध पियत भई, यह अजहूँ है छोटी।

सूर का वात्सल्य केवल वर्णन मात्र नहीं है। जिन जिन स्थानों पर वात्सल्य भाव प्रकट हो सकता था, उन सब घटनाओं को आधार बनाकर काव्य रचना की

गयी है। माँ यशोदा अपने शिशु को पालने में सुला रही हैं और निंदिया से विनती करती है कि वह जल्दी से उनके लाल की अंखियों में आ जाए।

जसोदा हरी पालनै झुलावै।
हलरावै दुलरायै मल्हरावै जोई सोई कछु गावै।
मेरे लाल कौ आउ निंदरिया, काहै मात्र आनि सुलावै।
तू काहे न बेगहि आवे, तो का कान्ह बुलावें।

कृष्णा का शैशव रूप घटने लगता है तो माँ की अभिलाषाएं भी बढ़ने लगती हैं। उसे लगता है कि कब उसका शिशु उसका शिशु उसका आँचल पकड़कर डोलेगा। कब, उसे माँ और अपने पिता को पिता कहके पुकारेगा, वह लिखते है–

जसुमति मन अभिलाष करै,
कब मेरो लाल घुटरुवनी रेंगै, कब घरनी पग द्वैक भरे,
कब वन्दहिं बाबा बोलौ, कब जननी काही मोहि ररै,
रब धौं तनक-तनक कछु खैहे, अपने कर सों मुखहिं भरे,
कब हसि बात कहेगौ मौ सौं, जा छवि तै दुःख दूरि हरै।

सूरदास ने वात्सल्य में संयोग पक्ष के साथ-साथ वियोग का भी सुंदर वर्णन किया है। जब कंस का बुलावा लेकर अक्रूर आते हैं तो कृष्ण व बलराम को मथुरा जाना पड़ता है। इस अवसर पर सूरदास ने वियोग का मर्म्स्पर्शी चित्र प्रस्तुत किया है। यशोदा बार-बार विनती करती हैं कि कोई उनके गोपाल को जाने से रोक ले।

जसोदा बार बार यों भारवै
है ब्रज में हितू हमारौ, चलत गोपालहिं राखै।

जब उधौ कान्हा का संदेश लेकर आते हैं, तो माँ यशोदा का हृदय अपने पुत्र के वियोग में रो देता है, वह देवकी को संदेश भिजवाती हैं।

संदेस देवकी सों कहियो।
हों तो धाय तिहारे सुत की कृपा करत ही रहियो।
उबटन तेल तातो जल देखत ही भजि जाने।
जोई-चोर मांगत सोइ-सोइ देती करम-करम कर न्हाते।
तुम तो टेक जानतिही धै है ताऊ मोहि कहि आवै।
प्रातः उठत मेरे लाड लडैतहि माखन रोटी भावै।

4. शृंगार का वर्णन

कृष्ण भक्त कवियों ने कृष्ण व गोपियों के प्रेम वर्णन के रूप में पूरी स्वछंदता से शृंगार रस का वर्णन किया है। कृष्ण व गोपियों का प्रेम धीरे-धीरे विकसित होता है। कृष्ण, राधा व गोपियों के बीच अक्सर छेड़छाड़ चलती रहती है–

तुम पै कौन दुहावै गैया
इत चितवन उन धार चलावत, यहै सिखायो मैया।
सूर कहा ए हमको जातै छाछहि बेचनहारि।

कवि विद्यापति ने कृष्ण के भक्त-वत्सल रूप को छोड़ कर शृंगारिक नायक वाला रूप ही चित्रित किया है।

विद्यापति की राधा भी एक प्रवीण नायिका की तरह कहीं मुग्धा बनती है, तो कभी कहीं अभिसारिका। विद्यापति के राधा-कृष्ण यौवनावस्था में ही मिलते है और उनमें प्यार पनपने लगता है।

प्रेमी नायक, प्रेमिका को पहली बार देखता है तो रमनी के रूप पर मुग्ध हो जाता है।

सजनी भलकाए पेखन न मेल
मेघ-माल सयं तड़ित लता जनि
हिरदय से दई गेल।

हे सखी ! मैं तो अच्छी तरह उस सुन्दरी को देख नहीं सका क्योंकि जिस प्रकार बादलों की पंक्ति में एकाएक बिजली चमक कर चिप जाती है उसी प्रकार प्रिया के सुंदर शरीर की चमक मेरे हृदय में भाले की तरह उतर गयी और मैं उसकी पीड़ा झेल रहा हूँ।

विद्यापति की राधा अभिसार के लिए निकलती है तो सांप पाँव में लिपट जाता है। वह इसमें भी अपना भला मानती है, कम से कम पाँव में पड़े नूपुरों की आवाज तो बंद हो गयी।

इसी प्रकार विद्यापति वियोग में भी वर्णन करते हैं। कृष्ण के विरह में राधा की आकुलता, विवशता, दैन्य व निराशा आदि का मार्मिक चित्रण हुआ है।

सजनी, के कहक आओव मधाई।
विरह-पयोचि पार किए पाऊव, मझुम नहिं पति आई।
एखत तखन करि दिवस गमाओल, दिवस दिवस करि मासा।
मास-मास करि बरस गमाओल, छोड़ लूँ जीवन आसा।

बरस-बरस कर समय गमाओल, खोल लूं कानुक आसे।
हिमकर-किरन नलिनी जदि जारन, कि कर्ण माधव मासे।

इस प्रकार कृष्ण भक्त कवियों ने प्रेम की सभी अवस्थाओं व भाव-दशाओं का सफलतापूर्वक चित्रण किया है।

5. भक्ति भावना

यदि भक्त-भावना के विषय में बात करें तो कृष्ण भक्त कवियों में सूरदास, कुंभनदास व मीरा का नाम उल्लेखनीय है।

सूरदासजी ने वल्लभाचार्य जी से दीक्षा ग्रहण कर लेने के पूर्व प्रथम रूप में भक्ति-भावना की व्यंजना की है।

नाथ जू अब कै मोहि उबारो
पतित में विख्यात पतित हौं पावन नाम विहारो।।

सूर के भक्ति काव्य में अलौकिकता और लौकिकता, रागात्मकता और बौद्धिकता, माधुर्य और वात्सल्य सब मिलकर एकाकार हो गए हैं।

भगवान् कृष्ण के अनन्य भक्त होने के नाते उनके मन से से सच्चे भाव निकलते हैं। उन्होंने ही भ्रमरनी परम्परा को नए रूप में प्रस्तुत किया। भक्त-शिरोमणि सूर ने इसमे सगुणोपासना का चित्रण, हृदय की अनुभूति के आधार पर किया है।

अंत में गोपियों अपनी आस्था के बल पर निर्गुण की उपासना का खंडन कर देती हैं।

उधौ मन नाहिं भए दस-बीस
एक हुतो सो गयो श्याम संग
को आराधै ईश।

मीराबाई कृष्ण को अपने प्रेमी ही नहीं, अपितु पति के रूप में भी स्मरण करती है। वे मानती हैं कि वे जन्म-जन्म से ही कृष्ण की प्रेयसी व पत्नी रही हैं। वे प्रिय के प्रति आत्म-निवेदन व उपालंभ के रूप में प्रणय-वेदना की अभिव्यक्ति करती है।

देखो सईयां हरि मन काठ कियो
आवन कह गयो अजहूं न आयो, करि करि गयो
खान-पान सुध-बुध सब बिसरी कैसे करि मैं जियो
वचन तुम्हार तुमहीं बिसरै, मन मेरों हर लियो
मीरां कहे प्रभु गिरधर नागर, तुम बिन फारत हियो।

भक्ति काव्य के क्षेत्र में मीरा सगुण-निर्गुण श्रद्धा व प्रेम, भक्ति व रहस्यवाद के अन्तर को भरते हुए, माधुर्य भाव को अपनाती है। उन्हें तो अपने सांवरियां का ध्यान कराने में, उनको हृदय की रागिनी सुनाने व उनके सम्मुख नृत्य करने में ही आनंद आता है।

आली रे मेरे नैणां बाण पड़ीं।
चित चढ़ी मेरे माधुरी मुरल उर बिच आन अड़ी।
कब की ठाढ़ी पंछ निहारूं अपने भवन खड़ी।

6. ब्रज भाषा व अन्य भाषाओं का प्रयोग

अनेक कवियों ने नि:संकोच कृष्ण की जन्मभूमि में प्रचलित ब्रज भाषा को ही अपने काव्य में प्रयुक्त किया। सूरदास व नंददास जैसे कवियों ने भाषा के रूप को इतना निखार दिया कि कुछ समय बाद यह समस्त उत्तरी भारत की साहित्यिक भाषा बन गई।

यद्यपि ब्रज भाषा के अतिरिक्त कवियों ने अपनी-अपनी मातृ भाषाओं में कृष्ण काव्य की रचना की। विद्यापति ने मैथिली भाषा में अनेक भाव प्रकट किए।

सप्ति हे कतहु न देखि मधाई।
कांप शरीर धीन नहि मानस, अवधि निअर मेल आई।
माधव मास तिथि भयो माधव अवधि कहए पिआ गेल।
मीरा ने राजस्थानी भाषा में अपने भाव प्रकट किए।
रमैया बिन नींद न आवै।
नींद न आवै विरह सतावै, प्रेम की आंच हुलावै।

प्रमुख कवि

महाकवि सूरदास को कृष्ण भक्त कवियों में सबसे ऊँचा स्थान दिया जाता है। इनके द्वारा रचित ग्रंथों में "सूर-सागर", "साहित्य-लहरी" व "सूर-सारावली" उल्लेखनीय है। कवि कुंभनदास अष्टछाप कवियों में सबसे बड़े थे, इनके सौ के करीब पद संग्रहित हैं, जिनमें इनकी भक्ति भावना का स्पष्ट परिचय मिलता है।

संतन को कहा सींकरी सो काम।
कुंभनदास लाल गिरधर बिनु और सबै वे काम।

इसके अतिरिक्त परमानंद दास, कृष्णदास गोविंद स्वामी, छीतस्वामी व चतुर्भुज दास आदि भी अष्टछाप कवियों में आते हैं किंतु कवित्व की दृष्टि से सूरदास सबसे ऊपर हैं।

राधावल्लभ संप्रादय के कवियों में "हित-चौरासी" बहुत प्रसिद्ध है, जिसे श्री हित हरिवंश जी ने लिखा है। हिंदी के कृष्ण भक्त कवियों में मीरा के अलावा बेलिकिशन रुक्मिनी के रचयिता पृथ्वीराज राठौर का नाम भी उल्लेखनीय है।

कृष्ण भक्ति धारा के कवियों ने अपने काव्य में भावात्मकता को ही प्रधानता दी। संगीत के माधुर्य से मानो उनका काव्य और निखर आया। इनके काव्य का भाव व कला पक्ष दोनों ही प्रौढ़ थे व तत्कालीन जन ने उनका भरपूर रसास्वादन किया। कृष्ण भक्ति साहित्य ने सैकड़ों वर्षो तक भक्तजनों का हदय मुग्ध किया। हिन्दी साहित्य के इतिहास में कृष्ण की लीलाओं के गान, कृष्ण के प्रति सख्य भावना आदि की दृष्टि से ही कृष्ण काव्य का महत्व नहीं है, वरन आगे चलकर राधा कृष्ण को लेकर नायक नायिका भेद, नख शिख वर्णन आदि की जो परम्परा रीतिकाल में चली, उस के बीज इसी काव्य में सन्निहित है। रीतिकालीन काव्य में ब्रजभाषा को जो अंलकृत और कलात्मक रूप मिला, वह कृष्ण काव्य के कवियों द्वारा भाषा को प्रौढ़ता प्रदान करने के कारण ही संभव हो सका।

संक्षेप में भक्ति-युग की चार प्रमुख काव्य-धाराएं मिलती हैं–

1. सगुण भक्ति
2. रामाश्रयी शाखा
3. कृष्णाश्रयी शाखा
4. निर्गुण भक्ति
5. ज्ञानाश्रयी शाखा
6. प्रेमाश्रयी शाखा

भक्ति काल

हिंदी साहित्य का भक्तिकाल1375 वि. से 1700 वि. तक माना जाता है। यह युग भक्तिकाल के नाम से प्रख्यात है। यह हिंदी साहित्य का श्रेष्ठ युग है। समस्त हिंदी साहित्य के श्रेष्ठ कवि और उत्तम रचनाएं इस युग में प्राप्त होती हैं।

रामानुजाचार्य की परंपरा में रामानंद हुए। उनका व्यक्तित्व असाधारण था। वे उस समय के सबसे बड़े आचार्य थे। उन्होंने भक्ति के क्षेत्र में ऊंच-नीच का भेद तोड़ दिया। सभी जातियों के अधिकारी व्यक्तियों को आपने शिष्य बनाया। उस समय का सूत्र हो गया: जाति-पांति पूछे नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई।।

इसके उपरांत माध्व तथा निंबार्क संप्रदायों का भी जन-समाज पर प्रभाव पड़ा है। साधना-क्षेत्र में दो अन्य संप्रदाय भी उस समय विद्यमान थे। नाथों के योग-मार्ग से प्रभावित संत संप्रदाय चला जिसमें प्रमुख व्यक्तित्व संत कबीरदास का है। मुसलमान कवियों का सूफीवाद हिंदुओं के विशिष्टाद्वैतवाद से बहुत भिन्न नहीं है। कुछ भावुक मुसलमान कवियों द्वारा सूफीवाद से रंगी हुई उत्तम रचनाएं लिखी गईं। संक्षेप में भक्ति-युग की चार प्रमुख काव्य-धाराएं मिलती हैं : ज्ञानाश्रयी शाखा, प्रेमाश्रयी शाखा, कृष्णाश्रयी शाखा और रामाश्रयी शाखा, प्रथम दोनों धाराएं निर्गुण मत के अंतर्गत आती हैं, शेष दोनों सगुण मत के।

संत कवि

निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रमुख संत कवियों का परिचय कबीर, कमाल, रैदास या रविदास, धर्मदास, गुरु नानक, दादूदयाल, सुंदरदास, रज्जब, मलूकदास, अक्षर अनन्य, जंभनाथ, सिंगा जी, हरिदास निरंजनी।

परिचय

तेरहवीं सदी तक धर्म के क्षेत्र में बड़ी अस्त-व्यस्तता आ गई। जनता में सिद्धों और योगियों आदि द्वारा प्रचलित अंधविश्वास फैल रहे थे, शास्त्रज्ञान-संपन्न वर्ग में भी रूढ़ियों और आडंबर की प्रधानता हो चली थी। मायावाद के प्रभाव से लोकविमुखता और निष्क्रियता के भाव समाज में पनपने लगे थे। ऐसे समय में भक्ति आंदोलन के रूप में ऐसा भारतव्यापी विशाल सांस्कृतिक आंदोलन उठा जिसने समाज में उत्कर्ष विधायक सामाजिक और वैयक्तिक मूल्यों की प्रतिष्ठा की।

भक्ति आंदोलन का आरंभ दक्षिण के आलवार संतों द्वारा दसवीं सदी के लगभग हुआ। वहाँ शंकराचार्य के अद्वैतमत और मायावाद के विरोध में चार वैष्णव संप्रदाय खड़े हुए। इन चारों संप्रदायों ने उत्तर भारत में विष्णु के अवतारों

का प्रचार-प्रसार किया। इनमें से एक के प्रवर्तक रामानुजाचार्य थे, जिनकी शिष्य परंपरा में आने वाले रामानंद ने (पंद्रहवीं सदी) उत्तर भारत में रामभक्ति का प्रचार किया। रामानंद के राम ब्रह्म के स्थानापन्न थे जो राक्षसों का विनाश और अपनी लीला का विस्तार करने के लिए संसार में अवतीर्ण होते हैं। भक्ति के क्षेत्र में रामानंद ने ऊँच-नीच का भेदभाव मिटाने पर विशेष बल दिया। राम के सगुण और निर्गुण दो रूपों को मानने वाले दो भक्तों - कबीर और तुलसी को इन्होंने प्रभावित किया। विष्णुस्वामी के शुद्धाद्वैत मत का आधार लेकर इसी समय बल्लभाचार्य ने अपना पुष्टिमार्ग चलाया। बारहवीं से सोलहवीं सदी तक पूरे देश में पुराण सम्मत कृष्णचरित् के आधार पर कई संप्रदाय प्रतिष्ठित हुए, जिनमें सबसे ज्यादा प्रभावशाली वल्लभ का पुष्टिमार्ग था। उन्होंने शांकर मत के विरुद्ध ब्रह्म के सगुण रूप को ही वास्तविक कहा। उनके मत से यह संसार मिथ्या या माया का प्रसार नहीं है बल्कि ब्रह्म का ही प्रसार है, अतः सत्य है। उन्होंने कृष्ण को ब्रह्म का अवतार माना और उसकी प्राप्ति के लिए भक्त का पूर्ण आत्मसमर्पण आवश्यक बतलाया। भगवान के अनुग्रह या पुष्टि के द्वारा ही भक्ति सुलभ हो सकती है। इस संप्रदाय में उपासना के लिए गोपीजनवल्लभ, लीलापुरुषोत्तम कृष्ण का मधुर रूप स्वीकृत हुआ। इस प्रकार उत्तर भारत में विष्णु के राम और कृष्ण अवतारों प्रतिष्ठा हुई।

यद्यपि भक्ति का स्रोत दक्षिण से आया तथापि उत्तर भारत की नई परिस्थितियों में उसने एक नया रूप भी ग्रहण किया। मुसलमानों के इस देश में बस जाने पर एक ऐसे भक्तिमार्ग की आवश्यकता थी जो हिंदू और मुसलमान दोनों को ग्राह्य हो। इसके अतिरिक्त निम्न वर्ग के लिए भी अधिक मान्य मत वही हो सकता था जो उन्हीं के वर्ग के पुरुष द्वारा प्रवर्तित हो। महाराष्ट्र के संत नामदेव ने 14वीं शताब्दी में इसी प्रकार के भक्तिमत का सामान्य जनता में प्रचार किया जिसमें भगवान के सगुण और निर्गुण दोनों रूप गृहीत थे। कबीर के संतमत के ये पूर्वपुरुष हैं। दूसरी ओर सूफी कवियों ने हिंदुओं की लोककथाओं का आधार लेकर ईश्वर के प्रेममय रूप का प्रचार किया।

इस प्रकार इन विभिन्न मतों का आधार लेकर हिंदी में निर्गुण और सगुण के नाम से भक्तिकाव्य की दो शाखाएँ साथ साथ चलीं। निर्गुणमत के दो उपविभाग हुए - ज्ञानाश्रयी और प्रेमाश्रयी। पहले के प्रतिनिधि कबीर और दूसरे के जायसी हैं। सगुणमत भी दो उपधाराओं में प्रवाहित हुआ-रामभक्ति और कृष्णभक्ति। पहले के प्रतिनिधि तुलसी हैं और दूसरे के सूरदास।

भक्तिकाव्य की इन विभिन्न प्रणलियों की अपनी अलग-अलग विशेषताएँ हैं पर कुछ आधारभूत बातों का सन्निवेश सब में है। प्रेम की सामान्य भूमिका सभी ने स्वीकार की। भक्तिभाव के स्तर पर मनुष्यमात्र की समानता सबको मान्य है। प्रेम और करुणा से युक्त अवतार की कल्पना तो सगुण भक्तों का आधार ही है पर निर्गुणोपासक कबीर भी आने राम को प्रिय, पिता और स्वामी आदि के रूप में स्मरण करते हैं। ज्ञान की तुलना में सभी भक्तों ने भक्तिभाव को गौरव दिया है। सभी भक्त कवियों ने लोकभाषा का माध्यम स्वीकार किया है।

ज्ञानश्रयी शाखा के प्रमुख कवि कबीर पर तात्कालिक विभिन्न धार्मिक प्रवृत्तियों और दार्शनिक मतों का सम्मिलित प्रभाव है। उनकी रचनाओं में धर्मसुधारक और समाजसुधारक का रूप विशेष प्रखर है। उन्होंने आचरण की शुद्धता पर बल दिया। बाह्याडंबर, रूढ़ियों और अंधविश्वासों पर उन्होंने तीव्र कुशाघात किया। मनुष्य की क्षमता का उद्घोष कर उन्होंने निम्न श्रेणी की जनता में आत्मगौरव का भाव जगाया। इस शाखा के अन्य कवि रैदास, दादू हैं।

अपनी व्यक्तिगत धार्मिक अनुभूति और सामाजिक आलोचना द्वारा कबीर आदि संतों ने जनता को विचार के स्तर पर प्रभावित किया था। सूफी संतों ने अपने प्रेमाख्यानों द्वारा लोकमानस को भावना के स्तर पर प्रभावित करने का प्रयत्न किया। ज्ञानमार्गी संत कवियों की वाणी मुक्तकबद्ध है, प्रेममार्गी कवियों की प्रेमभावना लोकप्रचलित आख्यानों का आधार लेकर प्रबंधकाव्य के रूप में रूपायित हुई है। सूफी ईश्वर को अनंत प्रेम और सौंदर्य का भंडार मानते हैं। उनके अनुसार ईश्वर को जीव प्रेम के मार्ग से ही उपलब्ध कर सकता है। साधना के मार्ग में आने वाली बाधाओं को वह गुरु या पीर की सहायता से साहसपूर्वक पार करके अपने परमप्रिय का साक्षात्कार करता है। सूफियों ने चाहे अपने मत के प्रचार के लिए अपने कथाकाव्य की रचना की हो, पर साहित्यिक दृष्टि से उनका मूल्य इसलिए है कि उसमें प्रेम और उससे प्रेरित अन्य संवेगों की व्यंजना सहजबोध्य लौकिक भूमि पर हुई है। उनके द्वारा व्यंजित प्रेम ईश्वरोन्मुख है पर सामान्यत: यह प्रेम लौकिक भूमि पर ही संक्रमण करता है। परमप्रिय के सौंदर्य, प्रेमक्रीड़ा और प्रेमी के विरहोद्वेग आदि का वर्णन उन्होंने इतनी तन्मयता से किया है और उनके काव्य का मानवीय आधार इतना पुष्ट है कि आध्यात्मिक प्रतीकों और रूपकों के बावजूद उनकी रचनाएँ प्रेमसमर्पित कथाकाव्य की श्रेष्ठ कृतियाँ बन गई हैं। उनके काव्य का

पूरा वातावरण लोकजीवन का और गार्हस्थिक है। प्रेमाख्यानकों की शैली फारसी के मसनवी काव्य जैसी है।

इस धारा के सर्वप्रमुख कवि जायसी हैं जिनका 'पदमावत' अपनी मार्मिक प्रेमव्यंजना, कथारस और सहज कलाविन्यास के कारण विशेष प्रशंसित हुआ है। इनकी अन्य रचनाओं में 'अखरावट' और 'आखिरी कलाम' आदि हैं, जिनमें सूफी संप्रदाय संगत बातें हैं। इस धारा के अन्य कवि हैं कुतबन, मंझन, उसमान, शेख, नबी और नूरमुहम्मद आदि।

ज्ञानमार्गी शाखा के कवियों में विचार की प्रधानता है तो सूफियों की रचनाओं में प्रेम का एकांतिक रूप व्यक्त हुआ है। सगुण धारा के कवियों ने विचारात्मक शुष्कता और प्रेम की एकांगिता दूर कर जीवन के सहज उल्लासमय और व्यापक रूप की प्रतिष्ठा की। कृष्णभक्ति शाखा के कवियों ने आनंदस्वरूप लीला पुरुषोत्तम कृष्ण के मधुर रूप की प्रतिष्ठा कर जीवन के प्रति गहन राग को स्फूर्त किया। इन कवियों में सूरसागर के रचयिता महाकवि सूरदास श्रेष्ठतम हैं जिन्होंने कृष्ण के मधुर व्यक्तित्व का अनेक मार्मिक रूपों में साक्षात्कार किया। ये प्रेम और सौंदर्य के निसर्ग सिद्ध गायक हैं। कृष्ण के बालरूप की जैसी विमोहक, सजीव और बहुविध कल्पना इन्होंने की है वह अपना सानी नहीं रखती। कृष्ण और गोपियों के स्वच्छंद प्रेम प्रसंगों द्वारा सूर ने मानवीय राग का बड़ा ही निश्छल और सहज रूप उद्घाटित किया है। यह प्रेम अपने सहज परिवेश में सहयोगी भाववृत्तियों से संपृक्त होकर विशेष अर्थवान हो गया है। कृष्ण के प्रति उनका संबंध मुख्यत: सख्यभाव का है। आराध्य के प्रति उनका सहज समर्पण भावना की गहरी से गहरी भूमिकाओं को स्पर्श करने वाला है। सूरदास वल्लभाचार्य के शिष्य थे। वल्लभ के पुत्र बिट्ठलनाथ ने कृष्णलीला गान के लिए अष्टछाप के नाम से आठ कवियों का निर्वाचन किया था। सूरदास इस मंडल के सर्वोत्कृष्ट कवि हैं। अन्य विशिष्ट कवि नंददास और परमानंददास हैं। नंददास की कलाचेतना अपेक्षाकृत विशेष मुखर है।

मध्ययुग में कृष्णभक्ति का व्यापक प्रचार हुआ और वल्लभाचार्य के पुष्टिमार्ग के अतिरिक्त अन्य भी कई संप्रदाय स्थापित हुए, जिन्होंने कृष्णकाव्य को प्रभावित किया। हितहरिवंश (राधावल्लभी संप्र.), हरिदास (टट्टी संप्र.), गदाधर भट्ट और सूरदास मदनमोहन (गौड़ीय संप्र.) आदि अनेक कवियों ने विभिन्न मतों के अनुसार कृष्णप्रेम की मार्मिक कल्पनाएँ कीं। मीरा की भक्ति दांपत्य भाव की थी जो अपने स्वत:स्फूर्त कोमल और करुण प्रेमसंगीत से

आंदोलित करती हैं। नरोत्तमदास, रसखान, सेनापति आदि इस धारा के अन्य अनेक प्रतिभाशाली कवि हुए जिन्होंने हिंदी काव्य को समृद्ध किया। यह सारा कृष्णकाव्य मुक्तक या कथाश्रित मुक्तक है। संगीतात्मकता इसका एक विशिष्ट गुण है।

कृष्णकाव्य ने भगवान के मधुर रूप का उद्‌घाटन किया, पर उसमें जीवन की अनेकरूपता नहीं थी, जीवन की विविधता और विस्तार की मार्मिक योजना रामकाव्य में हुई। कृष्णभक्ति काव्य में जीवन के माधुर्य पक्ष का स्फूर्तिप्रद संगीत था, रामकाव्य में जीवन का नीतिपक्ष और समाजबोध अधिक मुखरित हुआ। एक ने स्वच्छंद रागतत्त्व को महत्व दिया तो दूसरे ने मर्यादित लोकचेतना पर विशेष बल दिया। एक ने भगवान की लोकरंजनकारी सौंदर्यप्रतिमा का संगठन किया तो दूसरे ने उसके शक्ति, शील और सौंदर्यमय लोकमंगलकारी रूप को प्रकाशित किया। रामकाव्य का सर्वोत्कृष्ट वैभव 'रामचरितमानस' के रचयिता तुलसीदास के काव्य में प्रकट हुआ जो विद्याविद् ग्रियर्सन की दृष्टि में बुद्धदेव के बाद के सबसे बड़े जननायक थे। पर काव्य की दृष्टि से तुलसी का महत्व भगवान के एक ऐसे रूप की परिकल्पना में है, जो मानवीय सामर्थ्य और औदात्य की उच्चतम भूमि पर अधिष्ठित है। तुलसी के काव्य की एक बड़ी विशेषता उनकी बहुमुखी समन्वयभावना है, जो धर्म, समाज और साहित्य सभी क्षेत्रों में सक्रिय है। उनका काव्य लोकोन्मुख है।

उसमें जीवन की विस्तीर्णता के साथ गहराई भी है। उनका महाकाव्य रामचरितमानस राम के संपूर्ण जीवन के माध्यम से व्यक्ति और लोकजीवन के विभिन्न पक्षों का उद्‌घाटन करता है। उसमें भगवान राम के लोकमंगलकारी रूप की प्रतिष्ठा है। उनका साहित्य सामाजिक और वैयक्तिक कर्त्तव्य के उच्च आदर्शों में आस्था दृढ़ करने वाला है। तुलसी की 'विनयपत्रिका' में आराध्य के प्रति, जो कवि के आदर्शों का सजीव प्रतिरूप है, उनका निरंतर और निश्छल समर्पणभाव, काव्यात्मक आत्माभिव्यक्ति का उत्कृष्ट दृष्टांत है। काव्याभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों पर उनका समान अधिकार है। अपने समय में प्रचलित सभी काव्यशैलियों का उन्होंने सफल प्रयोग किया। प्रबंध और मुक्तक की साहित्यिक शैलियों के अतिरिक्त लोकप्रचलित अवधी और ब्रजभाषा दोनों के व्यवहार में वे समान रूप से समर्थ हैं। तुलसी के अतिरिक्त रामकाव्य के अन्य रचयिताओं में अग्रदास, नाभादास, प्राणचंद चौहान और हृदयराम आदि उल्लेख्य हैं।

आज की दृष्टि से इस संपूर्ण भक्तिकाव्य का महत्व उसकी धार्मिकता से अधिक लोकजीवनगत मानवीय अनुभूतियों और भावों के कारण है। इसी विचार से भक्तिकाल को हिंदी काव्य का स्वर्ण युग कहा जा सकता है।

कृष्णाश्रयी शाखा

इस गुण की इस शाखा का सर्वाधिक प्रचार हुआ है। विभिन्न संप्रदायों के अंतर्गत उच्च कोटि के कवि हुए हैं। इनमें वल्लभाचार्य के पुष्टि-संप्रदाय के अंतर्गत अष्टछाप के सूरदास कुम्भनदास रसखान जैसे महान कवि हुए हैं। वात्सल्य एवं शृंगार के सर्वोत्तम भक्त-कवि सूरदास के पदों का परवर्ती हिंदी साहित्य पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा है। इस शाखा के कवियों ने प्रायः मुक्तक काव्य ही लिखा है। भगवान श्रीकृष्ण का बाल एवं किशोर रूप ही इन कवियों को आकर्षित कर पाया है इसलिए इनके काव्यों में श्रीकृष्ण के ऐश्वर्य की अपेक्षा माधुर्य का ही प्राधान्य रहा है। प्रायः सब कवि गायक थे इसलिए कविता और संगीत का अद्‌भुत सुंदर समन्वय इन कवियों की रचनाओं में मिलता है। गीति-काव्य की जो परंपरा जयदेव और विद्यापति द्वारा पल्लवित हुई थी उसका चरम-विकास इन कवियों द्वारा हुआ है। नर-नारी की साधारण प्रेम-लीलाओं को राधा-कृष्ण की अलौकिक प्रेमलीला द्वारा व्यंजित करके उन्होंने जन-मानस को रसाप्लावित कर दिया। आनंद की एक लहर देश भर में दौड़ गई। इस शाखा के प्रमुख कवि थे सूरदास, नंददास, मीरा बाई, हितहरिवंश, हरिदास, रसखान, नरोत्तमदास वगैरह। रहीम भी इसी समय हुए।

कृष्ण-काव्य-धारा की विशेषताएँ

कृष्ण-काव्य-धारा के मुख्य प्रवर्तक हैं- श्री वल्लभाचार्य। उन्होंने निम्बार्क, मध्व और विष्णुस्वामी के आदर्शों को सामने रखकर श्रीकृष्ण का प्रचार किया। श्री वल्लभाचार्य द्वारा प्रचारित पुष्टिमार्ग में दीक्षित होकर सूरदास आदि अष्टछाप के कवियों ने कृष्ण-भक्ति-साहित्य की रचना की। वल्लभाचार्य ने पुष्टिमार्ग का प्रचार-प्रसार किया। जिसका अर्थ है- भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति से उनकी कृपा और अनुग्रह की प्राप्ति करना।

कृष्ण-काव्य-धारा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं -

1. श्रीकृष्ण-साहित्य का मुख्य विषय कृष्ण की लीलाओं का गान करना है। वल्लभाचार्य के सिद्धांतों से प्रभावित होकर इस शाखा के कवियों ने कृष्ण

की बाल-लीलाओं का ही अधिक वर्णन किया है। सूरदास इसमें प्रमुख है।

2. इस शाखा में वात्सल्य एवं माधुर्य भाव का ही प्राधान्य है। वात्सल्य भाव के अंतर्गत कृष्ण की बाल-लीलाओं, चेष्टाओं तथा माँ यशोदा के हृदय की झाँकी मिलती है। माधुर्य भाव के अंतर्गत गोपी-लीला मुख्य है। सूरदास के बारे में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है- वात्सल्य के क्षेत्र में जितना अधिक उद्घाटन सूर ने अपनी बंद आँखों से किया, इतना किसी ओर कवि ने नहीं। इन क्षेत्रों का तो वे कोना-कोना झाँक आये।
3. इस धारा के कवियों ने भगवान कृष्ण की उपासना माधुर्य एवं सख्य भाव से की है। इसीलिए इसमें मर्यादा का चित्रण नहीं मिलता।
4. श्रीकृष्ण काव्य में मुक्त रचनाएँ ही अधिक पाई जाती हैं। काव्य-रचना के अधिकांशत: उन्होंने पद ही चुने हैं।
5. इस काव्य में गीति-काव्य की मनोहारिणी छटा है। इसका कारण है- कृष्ण-काव्य की संगीतात्मकता। कृष्ण-काव्य में राग-रागिनियों का सुंदर उपयोग हुआ है
6. श्रीकृष्ण काव्य में विषय की एकता होने के कारण भावों में अधिकतर एकरूपता पाई जाती है।
7. श्रीकृष्ण को भगवान मानकर पदों की विनयावली द्वारा पूजा जाने के कारण इसमें भावुकता की तीव्रता अधिक पाई जाती है।
8. इस काव्य-धारा में उपमा, रूपक तथा उत्प्रेक्षा अलंकारों का प्रयोग किया गया है।
9. कृष्ण-काव्य-धारा की भाषा ब्रज है। ब्रजभाषा की कोमलकांत पदावली का प्रयोग इसमें हुआ है। यह मधुर और सरस है।
10. इस काव्य में रसमयी उक्तियों के लिए तथा साकार ईश्वर के प्रतिपादन के लिए भ्रमरगीत लिखने की परंपरा प्राप्त होती है।
11. श्रीकृष्ण-काव्य स्वतंत्र प्रेम-प्रधान काव्य है। इन्होंने प्रेमलक्षणा भक्ति को अपनाया है। इसलिए इसमें मर्यादा की अवहेलना की गई है।
12. कृष्ण-काव्य व्यंग्यात्मक है। इसमें उपालंभ की प्रधानता है। सूर का भ्रमरगीत इसका सुंदर उदाहरण है।
13. श्रीकृष्ण काव्य में लोक-जीवन के प्रति उपेक्षा की भावना पाई जाती है। इसका मुख्य कारण है- कृष्ण के लोकरंजक रूप की प्रधानता।

14. श्री कृष्ण-काव्य-धारा में ज्ञान और कर्म के स्थान पर भक्ति को प्रधानता दी गई है। इसमें आत्म-चिंतन की अपेक्षा आत्म-समर्पण का महत्व है।
15. प्रकृति-वर्णन भी इस धारा में मिलता है। ग्राम्य-प्रकृति के सुंदर चित्र इसमें हैं।

रामाश्रयी शाखा

कृष्णभक्ति शाखा के अंतर्गत लीला-पुरुषोत्तम का गान रहा तो रामभक्ति शाखा के प्रमुख कवि तुलसीदास ने मर्यादा-पुरुषोत्तम का ध्यान करना चाहा। इसलिए आपने रामचंद्र को आराध्य माना और 'रामचरित मानस' द्वारा राम-कथा को घर-घर में पहुंचा दिया। तुलसीदास हिंदी साहित्य के श्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। समन्वयवादी तुलसीदास में लोकनायक के सब गुण मौजूद थे। आपकी पावन और मधुर वाणी ने जनता के तमाम स्तरों को राममय कर दिया। उस समय प्रचलित तमाम भाषाओं और छंदों में आपने रामकथा लिख दी। जन-समाज के उत्थान में आपने सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य किया है। इस शाखा में अन्य कोई कवि तुलसीदास के सम। न उल्लेखनीय नहीं है तथापि अग्रदास, नाभादास तथा प्राण चन्द चौहान भी इस श्रेणी में आते हैं।

रामभक्ति शाखा की प्रवृत्तियाँ रामकाव्य धारा का प्रवर्तन वैष्णव संप्रदाय के स्वामी रामानंद से स्वीकार किया जा सकता है। यद्यपि रामकाव्य का आधार संस्कृत साहित्य में उपलब्ध राम-काव्य और नाटक रहें हैं। इस काव्य धारा के अवलोकन से इसकी निम्न विशेषताएँ दिखाई पड़ती हैं –

राम का स्वरूप : रामानुजाचार्य की शिष्य परम्परा में श्री रामानंद के अनुयायी सभी रामभक्त कवि विष्णु के अवतार दशरथ-पुत्र राम के उपासक हैं। अवतारवाद में विश्वास है। उनके राम परब्रह्म स्वरूप हैं। उनमें शील, शक्ति और सौंदर्य का समन्वय है। सौंदर्य में वे त्रिभुवन को लजावन हारे हैं। शक्ति से वे दुष्टों का दमन और भक्तों की रक्षा करते हैं तथा गुणों से संसार को आचार की शिक्षा देते हैं। वे मर्यादापुरुषोत्तम और लोकरक्षक हैं।

भक्ति का स्वरूप : इनकी भक्ति में सेवक-सेव्य भाव है। वे दास्य भाव से राम की आराधना करते हैं। वे स्वयं को क्षुद्रातिक्षुद्र तथा भगवान को महान बतलाते हैं। तुलसीदास ने लिखा है : सेवक-सेव्य भाव बिन भव न तरिय उरगारि। राम-काव्य में ज्ञान, कर्म और भक्ति की पृथक-पृथक महत्ता स्पष्ट करते हुए भक्ति को उत्कृष्ट बताया गया है। तुलसी दास ने भक्ति और ज्ञान में

अभेद माना है : भगतहिं ज्ञानहिं नहिं कुछ भेदा। यद्यपि वे ज्ञान को कठिन मार्ग तथा भक्ति को सरल और सहज मार्ग स्वीकार करते हैं। इसके अतिरिक्त तुलसी की भक्ति का रूप वैधी रहा है, वह वेदशास्त्र की मर्यादा के अनुकूल है।

लोक-मंगल की भावना : रामभक्ति साहित्य में राम के लोक-रक्षक रूप की स्थापना हुई है। तुलसी के राम मर्यादापुरुषोत्तम तथा आदर्शों के संस्थापक हैं। इस काव्य धारा में आदर्श पात्रों की सर्जना हुई है। राम आदर्श पुत्र और आदर्श राजा हैं, सीता आदर्श पत्नी हैं तो भरत और लक्ष्मण आदर्श भाई हैं। कौशल्या आदर्श माता है, हनुमान आदर्श सेवक हैं। इस प्रकार रामचरितमानस में तुलसी ने आदर्श गृहस्थ, आदर्श समाज और आदर्श राज्य की कल्पना की है। आदर्श की प्रतिष्ठा से ही तुलसी लोकनायक कवि बन गए हैं और उनका काव्य लोकमंगल की भावना से ओतप्रोत है।

समन्वय भावना : तुलसी का मानस समन्वय की विराट चेष्टा है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में - उनका सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। लोक और शास्त्र का समन्वय, गार्हस्थ्य और वैराग्य का समन्वय, भक्ति और ज्ञान का समन्वय, भाषा और संस्कृत का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, पांडित्य और अपांडित्य का समन्वय रामचरितमानस में शुरू से आखिर तक समन्वय का काव्य है। हम कह सकते हैं कि तुलसी आदि रामभक्त कवियों ने समाज, भक्ति और साहित्य सभी क्षेत्रों में समन्वयवाद का प्रचार किया है। राम भक्त कवियों की भारतीय संस्कृति में पूर्ण आस्था रही। पौराणिकता इनका आधार है और वर्णाश्रम व्यवस्था के पोषक हैं। लोकहित के साथ-साथ इनकी भक्ति स्वांत: सुखाय थी। सामाजिक तत्त्व की प्रधानता रही।

काव्य शैलियाँ : रामकाव्य में काव्य की प्राय: सभी शैलियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। तुलसीदास ने अपने युग की प्राय: सभी काव्य-शैलियों को अपनाया है। वीरगाथाकाल की छप्पय पद्धति, विद्यापति और सूर की गीतिपद्धति, गंग आदि भाट कवियों की कवित्त-सवैया पद्धति, जायसी की दोहा पद्धति, सभी का सफलतापूर्वक प्रयोग इनकी रचनाओं में मिलता है। रामायण महानाटक (प्राणचंद चौहान) और हनुमन्नाटक (हृदयराम) में संवाद पद्धति और केशव की रामचंद्रिका में रीति-पद्धति का अनुसरण है।

रस : रामकाव्य में नव रसों का प्रयोग है। राम का जीवन इतना विस्तृत व विविध है कि उसमें प्राय: सभी रसों की अभिव्यक्ति सहज ही हो जाती है। तुलसी के मानस एवं केशव की रामचंद्रिका में सभी रस देखे जा सकते हैं।

रामभक्ति के रसिक संप्रदाय के काव्य में शृंगार रस को प्रमुखता मिली है। मुख्य रस यद्यपि शांत रस ही रहा।

भाषा : रामकाव्य में मुख्यत: अवधी भाषा प्रयुक्त हुई है। किंतु ब्रजभाषा भी इस काव्य का शृंगार बनी है। इन दोनों भाषाओं के प्रवाह में अन्य भाषाओं के भी शब्द आ गए हैं। बुंदेली, भोजपुरी, फारसी तथा अरबी शब्दों के प्रयोग यत्र-तत्र मिलते हैं। रामचरितमानस की अवधी प्रेमकाव्य की अवधी भाषा की अपेक्षा अधिक साहित्यिक है।

छंद : रामकाव्य की रचना अधिकतर दोहा-चौपाई में हुई है। दोहा चौपाई प्रबंधात्मक काव्यों के लिए उत्कृष्ट छंद हैं। इसके अतिरिक्त कुण्डलियां, छप्पय, कवित्त, सोरठा, तोमर, त्रिभंगी आदि छंदों का प्रयोग हुआ है।

अलंकार : रामभक्त कवि विद्वान पंडित हैं। इन्होंने अलंकारों की उपेक्षा नहीं की। तुलसी के काव्य में अलंकारों का सहज और स्वाभाविक प्रयोग मिलता है। उत्प्रेक्षा, रूपक और उपमा का प्रयोग मानस में अधिक है।

ज्ञानाश्रयी मार्गी

इस शाखा के भक्त-कवि निर्गुणवादी थे और राम की उपासना करते थे। वे गुरु को बहुत सम्मान देते थे तथा जाति-पाँति के भेदों को अस्वीकार करते थे। वैयक्तिक साधना पर वे बल देते थे। मिथ्या आडंबरों और रूढियों का वे विरोध करते थे। लगभग सब संत अपढ़ थे परंतु अनुभव की दृष्टि से समृद्ध थे। प्राय: सब सत्संगी थे और उनकी भाषा में कई बोलियों का मिश्रण पाया जाता है इसलिए इस भाषा को 'सधुक्कड़ी' कहा गया है। साधारण जनता पर इन संतों की वाणी का जबरदस्त प्रभाव पड़ा है। इन संतों में प्रमुख कबीरदास थे। अन्य मुख्य संत-कवियों के नाम हैं - नानक, रैदास, दादूदयाल, सुंदरदास तथा मलूकदास।

प्रोफेसर महावीर सरन जैन ने निर्गुण भक्ति के स्वरूप के बारे में प्रश्न उठाए हैं तथा प्रतिपादित किया है कि संतों की निर्गुण भक्ति का अपना स्वरूप है जिसको वेदांत दर्शन के सन्दर्भ में व्याख्यायित नहीं किया जा सकता। उनके शब्द हैं–

भक्ति या उपासना के लिए गुणों की सत्ता आवश्यक है। ब्रह्म के सगुण स्वरूप को आधार बनाकर तो भक्ति/उपासना की जा सकती है, किन्तु जो निर्गुण एवं निराकार है उसकी भक्ति किस प्रकार सम्भव है ? निर्गुण के गुणों का

आख्यान किस प्रकार किया जा सकता है ? गुणातीत में गुणों का प्रवाह किस प्रकार माना जा सकता है ? जो निरालम्ब है, उसको आलम्बन किस प्रकार बनाया जा सकता है। जो अरूप है, उसके रूप की कल्पना किस प्रकार सम्भव है। जो रागातीत है, उसके प्रति रागों का अर्पण किस प्रकार किया जा सकता है? रूपातीत से मिलने की उत्कंठा का क्या औचित्य हो सकता है। जो नाम से भी अतीत है, उसके नाम का जप किस प्रकार किया जा सकता है।

शास्त्रीय दृष्टि से उपर्युक्त सभी प्रश्न 'निर्गुण-भक्ति' के स्वरूप को ताल ठोंक कर चुनौती देते हुए प्रतीत होते हैं। कबीर आदि संतों की दार्शनिक विवेचना करते समय आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने यह मान्यता स्थापित की है कि उन्होंने निराकार ईश्वर के लिए भारतीय वेदांत का पल्ला पकड़ा है। इस सम्बन्ध में जब हम शांकर अद्वैतवाद एवं संतों की निर्गुण भक्ति के तुलनात्मक पक्षों पर विचार करते हैं तो उपर्युक्त मान्यता की सीमायें स्पष्ट हो जाती हैं–

(क) शांकर अद्वैतवाद में भक्ति को साधन के रूप में स्वीकार किया गया है, किन्तु उसे साध्य नहीं माना गया है। संतों ने (सूफियों ने भी) भक्ति को साध्य माना है।

(ख) शांकर अद्वैतवाद में मुक्ति के प्रत्यक्ष साधन के रूप में 'ज्ञान' को ग्रहण किया गया है। वहाँ मुक्ति के लिए भक्ति का ग्रहण अपरिहार्य नहीं है। वहाँ भक्ति के महत्व की सीमा प्रतिपादित है। वहाँ भक्ति का महत्व केवल इस दृष्टि से है कि वह अन्तःकरण के मालिन्य का प्रक्षालन करने में समर्थ सिद्ध होती है। भक्ति आत्म-साक्षात्कार नहीं करा सकती, वह केवल आत्म साक्षात्कार के लिए उचित भूमिका का निर्माण कर सकती है। संतों ने अपना चरम लक्ष्य आत्म साक्षात्कार या भगवद्-दर्शन माना है तथा भक्ति के ग्रहण को अपरिहार्य रूप में स्वीकार किया है क्योंकि संतों की दृष्टि में भक्ति ही आत्म-साक्षात्कार या भगवद्-दर्शन कराती है।

प्रेमाश्रयी शाखा

मुसलमान सूफी कवियों की इस समय की काव्य-धारा को प्रेममार्गी माना गया है क्योंकि प्रेम से ईश्वर प्राप्त होते हैं ऐसी उनकी मान्यता थी। ईश्वर की तरह प्रेम भी सर्वव्यापी तत्त्व है और ईश्वर का जीव के साथ प्रेम का ही संबंध हो सकता है, यह उनकी रचनाओं का मूल तत्त्व है। उन्होंने प्रेमगाथाएं लिखी हैं।

ये प्रेमगाथाएं फारसी की मसनवियों की शैली पर रची गई हैं। इन गाथाओं की भाषा अवधी है और इनमें दोहा-चौपाई छंदों का प्रयोग हुआ है। मुसलमान होते हुए भी उन्होंने हिंदू-जीवन से संबंधित कथाएं लिखी हैं। खंडन-मंडन में न पड़कर इन फकीर कवियों ने भौतिक प्रेम के माध्यम से ईश्वरीय प्रेम का वर्णन किया है। ईश्वर को माशूक माना गया है और प्रायः प्रत्येक गाथा में कोई राजकुमार किसी राजकुमारी को प्राप्त करने के लिए नानाविध कष्टों का सामना करता है, विविध कसौटियों से पार होता है और तब जाकर माशूक को प्राप्त कर सकता है। इन कवियों में मलिक मुहम्मद जायसी प्रमुख हैं। आपका 'पद्मावत' महाकाव्य इस शैली की सर्वश्रेष्ठ रचना है। अन्य कवियों में प्रमुख हैं - मंझन, कुतुबन और उसमान।

8

शब्द संत रविदास

1. बेगम पुरा सहर को नाउ
बेगम पुरा सहर को नाउ ।
दूखु अंदोहु नहीं तिहि ठाउ ।।
नां तसवीस खिराजु न मालु ।
खउफु न खता न तरसु जवालु ।।1।।
अब मोहि खूब वतन गह पाई ।
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ।।1।।
काइमु दाइमु सदा पातिसाही ।
दोम न सेम एक सो आही ।
आबादानु सदा मसहूर ।
ऊहां गनी बसहि मामूर ।2।
तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै ।
महरम महलन को अटकावै ।।
कहि रविदास खलास चमारा ।
जो हम सहरी सु मीतु हमारा ।3।।
2. दूधु त बछरै थनहु बिटारिओ
दूधु त बछरै थनहु बिटारिओ ।।
फूलु भवरि जलु मीनि बिगारिओ ।1।

माई गोबिंद पूजा कहा लै चरावउ ।
अवरु न फूलु अनूपु न पावउ ।1। रहाउ ।
मैलागर बेर्हे है भुइअंगा ।
बिखु अम्रितु बसहि इक संगा ।2।
धूप दीप नई बेदहि बासा ।
कैसे पूज करहि तेरी दासा ।3।
तनु मनु अरपउ पूज चरावउ ।
गुर परसादि निरंजनु पावउ ।4।
पूजा अरचा आहि न तोरी ।
कहि रविदास कवन गति मोरी । 5।
3. माटी को पुतरा कैसे नचतु है
माटी को पुतरा कैसे नचतु है ।
देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है ।1।
जब कछु पावै तब गरबु करतु है ।
माइ आ गई तब रोवनु लगतु है ।1।
मन बच क्रम रस कसहि लुभाना ।
बिनसि गइआ जाइ कहूं समाना ।2।
कहि रविदास बाजी जगु भाई ।
बाजीगर सउ मुहि प्रीति बनि आई ।3।
4. मेरी संगति पोच सोच दिनु राती
मेरी संगति पोच सोच दिनु राती ।
मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती ।1।
राम गुसईआ जीअ के जीवना ।
मोहि न बिसारहु मैं जनु तेरा । 1।
मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई ।
चरण न छाडउ सरीर कल जाई । 2।
कहु रविदास परउ तेरी साभा ।
बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा । 3।
5.नामु तेरो आरती मजनु मुरारे
नामु तेरो आरती मजनु मुरारे ।
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे । 1।

नामु तेरो आसनो नामु तेरो उरसा नामु तेरा केसरो ले छिटकारे।
नामु तेरा अम्मभुला नामु तेरो चंदनो घसि जपे नामु ले तुझहि कउ चारे ।1।
नामु तेरा दीवा नामु तेरो बाती नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे ।
नाम तेरे की जोति लगाई भइओ उजिआरो भवन सगलारे ।2।
नामु तेरो तागा नामु फूल माला भार अठारह सगल जूठारे ।
तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ नामु तेरा तुही चवर ढोलारे । 3।
दस अठा अठसठे चारे खाणी इहै वरतणि है सगल संसारे ।
कहै रविदासु नामु तेरो आरती सति नामु है हरि भोग तुहारे । 4।

6. तोही मोही मोही तोही अंत: कैसा
तोही मोही मोही तोही अंत: कैसा ।
कनक कटिक जल तरंग जैसा ।1।
जउ पै हम न पाप करंता अहे अनंता ।
पतित पावन नामु कैसे हुंता । 1।
तुम्ह जु नाइक आछहु अंतरजामी ।
प्रभ ते जनु जानीजै जन ते सुआमी । 2।
सरीरु आराधै मो कउ बीचारु देहू ।
रविदास सम दल समझावै कोऊ । 3।

7. तुम चंदन हम इरंड बापुरे संगि तुमारे बासा
तुम चंदन हम इरंड बापुरे संगि तुमारे बासा ।
नीच रूख ते ऊच भए है गंध सुगंध निवासा ।1।
माधउ सतसंगति सरनि तुम्हारी ।
हम अउगन तुम्ह उपकारी । 1।
तुम मखतूल सुपेद सपीअल हम बपुरे जस कीरा ।
सतसंगति मिलि रहीऐ माधउ जैसे मधुप मखीरा ।2।
जाती ओछा पाती ओछा ओछा जनमु हमारा ।
राजा राम की सेव न कीनी कहि रविदास चमारा । 3।

8. घट अवघट डूगर घणा इकु निरगुणु बैलु हमार।
घट अवघट डूगर घणा इकु निरगुणु बैलु हमार ।
रमईए सिउ इक बेनती मेरी पूंजी राखु मुरारि । 1।
को बनजारो राम को मेरा टांडा लादिआ जाइ रे ।1।
हउ बनजारो राम को सहज करउ ब्यापारु ।

मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ।2।
उरवार पार के दानीआ लिखि लेहु आल पतालु ।
मोहि जम डंडु न लागई तजीले सरब जंजाल ।3।
जैसा रंगु कसुमभ का तैसा इहु संसारु ।
मेरे रमईए रंगु मजीठ का कहु रविदास चमार । 4।1।
9. कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ।
कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ ।।
ऐसे मेरा मनु बिखिआ बिमोहिआ कछु आरा पारु न सूझ ।1।
सगल भवन के नाइका इकु छिनु दरसु दिखाइ जी ।1।
मलिन भई मति माधवा तेरी गति लखी न जाइ ।
करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मैं सुमति देहु समझाइ ।2।
जोगीसर पावहि नहीं तुअ गुण कथनु अपार ।
प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार । 3।
10. सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार।
सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार ।
तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार ।1।
पारु कैसे पाइबो रे ।
मो सउ कोऊ न कहै समझाइ ।
जा ते आवा गवनु बिलाइ ।1। रहाउ ।
बहु बिधि धरम निरूपीऐ करता दीसै सभ लोइ ।
कवन करम ते छूटीऐ जिह साधे सभ सिधि होइ ।2।
करम अकरम बीचारीऐ संका सुनि बेद पुरान ।
संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु ।3।
बाहरु उदकि पखारीऐ घट भीतरि बिबिधि बिकार ।
सुध कवन पर होइबो सुच कुंचर बिधि बिउहार ।4।
रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार ।
पारस मानो ताबो छुए कनक होत नहीं बार ।5।
परम परस गुरु भेटीऐ पूरब लिखत लिलाट ।
उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट ।6।
भगति जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार ।

सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक बिचार ।7।
अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टरै भ्रम फास ।
प्रेम भगति नहीं ऊपजै ता ते रविदास उदास । 8।
11. म्रिग मीन भ्रिंग पतंग कुंचर एक दोख बिनास
म्रिग मीन भ्रिंग पतंग कुंचर एक दोख बिनास ।
पंच दोख असाध जा महि ता की केतक आस ।1।
माधो अबिदिआ हित कीन ।
बिबेक दीप मलीन ।1।
त्रिगद जोनि अचेत स्मभव पुंन पाप असोच ।
मानुखा अवतार दुलभ तिही संगति पोच ।2।
जीअ जंत जहा जहा लगु करम के बसि जाइ ।
काल फास अबध लागे कछु न चलै उपाइ ।3।
रविदास दास उदास तजु भ्रमु तपन तपु गुर गिआन ।
भगत जन भै हरन परमानंद करहु निदान ।4।
12. संत तुझी तनु संगति प्रान
संत तुझी तनु संगति प्रान ।
सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव ।1।
संत ची संगति संत कथा रसु ।
संत प्रेम माझै दीजै देवा देव ।1।
संत आचरण संत चो मारगु संत च ओल्हग ओल्हगणी ।2।
अउर इक मागउ भगति चिंतामणि ।
जणी लखावहु असंत पापी सणि ।3।
रविदासु भणै जो जाणै सो जाणु ।
संत अनंतहि अंत: नाही ।4।
13. कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु
कहा भइओ जउ तनु भइओ छिनु छिनु ।
प्रेमु जाइ तउ डरपै तेरो जनु ।1।
तुझहि चरन अरबिंद भवन मनु ।
पान करत पाइओ पाइओ रामईआ धनु ।1। रहाउ।
स्मपति बिपति पटल माइआ धनु ।

ता महि मगन होत न तेरो जनु ।2।
प्रेम की जेवरी बाधिओ तेरो जन ।
कहि रविदास छूटिबो कवन गुन ।3।
14. हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे।
हरि हरि हरि हरि हरि हरि हरे ।
हरि सिमरत जन गए निसतरि तरे ।1। रहाउ ।
हरि के नाम कबीर उजागर ।
जनम जनम के काटे कागर ।1।
निमत नामदेउ दूधु पीआइआ ।
तउ जग जनम संकट नहीं आइआ ।2।
जन रविदास राम रंगि राता ।
इउ गुर परसादि नरक नहीं जाता ।3।
15. जब हम होते तब तू नाही अब तूही मैं नाही
जब हम होते तब तू नाही अब तूही मैं नाही ।
अनल अगम जैसे लहरि मइ ओदधि जल केवल जल मांही ।1।
माधवे किआ कहीऐ भ्रमु ऐसा ।
जैसा मानीऐ होइ न तैसा ।1। रहाउ ।
नरपति एकु सिंघासनि सोइआ सुपने भइआ भिखारी ।
अछत राज बिछुरत दुखु पाइआ सो गति भई हमारी ।2।
राज भुइअंग प्रसंग जैसे हहि अब कछु मरमु जनाइआ ।
अनिक कटक जैसे भूलि परे अब कहते कहनु न आइआ ।3।
सरबे एकु अनेकै सुआमी सभ घट भुगवै सोई ।
कहि रविदास हाथ पै नेरै सहजे होइ सु होई । 4।
16. जउ हम बांधे मोह फास हम प्रेम बधनि तुम बाधे
जउ हम बांधे मोह फास हम प्रेम बधनि तुम बाधे ।
अपने छूटन को जतनु करहु हम छूटे तुम आराधे ।1।
माधवे जानत हहु जैसी तैसी ।
अब कहा करहुगे ऐसी ।1। रहाउ ।
मीनु पकरि फांकिओ अरु काटिओ रांधि कीओ बहु बानी ।
खंड खंड करि भोजनु कीनो तऊ न बिसरिओ पानी ।2।

आपन बापै नाही किसी को भावन को हरि राजा ।
मोह पटल सभु जगतु बिआपिओ भगत नहीं संतापा ।3।
कहि रविदास भगति इक बाढी अब इह का सिउ कहीऐ ।
जा कारनि हम तुम आराधे सो दुखु अजहू सहीऐ । 4।
17. दुलभ जनमु पुंन फल पाइओ बिरथा जात अबिबेकै
दुलभ जनमु पुंन फल पाइओ बिरथा जात अबिबेकै।
राजे इंद्र समसरि ग्रिह आसन बिनु हरि भगति कहहु किह लेखै ।1।
न बीचारिओ राजा राम को रसु ।
जिह रस अन रस बीसरि जाही ।1। रहाउ ।
जानि अजान भए हम बावर सोच असोच दिवस जाही ।
इंद्री सबल निबल बिबेक बुधि परमारथ परवेस नहीं ।2।
कहीअत आन अचरीअत अन कछु समझ न परै अपर माइआ ।
कहि रविदास उदास दास मति परहरि कोपु करहु जीअ दइआ ।3।
18. सुख सागरु सुरतर चिंतामनि कामधेनु बसि जा के
सुख सागरु सुरतर चिंतामनि कामधेनु बसि जा के ।
चारि पदार्थ असट दसा सिधि नव निधि कर तल ता के ।1।
हरि हरि हरि न जपहि रसना ।
अवर सभ तिआगि बचन रचना ।1। रहाउ ।
नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अखर मांही ।
बिआस बिचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही ।2।
सहज समाधि उपाधि रहत फुनि बडै भागि लिव लागी ।
कहि रविदास प्रगासु रिदै धरि जनम मरन भै भागी ।3।
19. जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा
जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा ।
जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा ।1।
माधवे तुम न तोरहु तउ हम नहीं तोरहि ।
तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि ।1। रहाउ ।
जउ तुम दीवरा तउ हम बाती ।
जउ तुम तीर्थ तउ हम जाती ।2।
साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी ।

तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी ।3।
जह जह जाउ तहा तेरी सेवा।
तुम सो ठाकुरु अउरु न देवा ।4।
तुमरे भजन कटहि जम फांसा।
भगति हेत गावै रविदासा ।5।

20. जल की भीति पवन का थ्मभा रक्त बुंद का गारा
जल की भीति पवन का थ्मभा रक्त बुंद का गारा।
हाड मास नाड़ीं को पिंजरु पंखी बसै बिचारा ।1।
प्रानी किआ मेरा किआ तेरा।
जैसे तरवर पंखि बसेरा ।1। रहाउ।
राखहु कंध उसारहु नीवां।
साढे तीनि हाथ तेरी सीवां ।2।
बंके बाल पाग सिरि डेरी।
इहु तनु होइगो भसम की ढेरी ।3।
ऊचे मंदर सुंदर नारी।
राम नाम बिनु बाजी हारी ।4।
मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी ओछा जनमु हमारा।
तुम सरनागति राजा राम चंद कहि रविदास चमारा ।5।

21. चमरटा गांठि न जनई
चमरटा गांठि न जनई।
लोगु गठावै पनही ।1। रहाउ।
आर नहीं जिह तोपउ।
नही रांबी ठाउ रोपउ ।1।
लोगु गंठि गंठि खरा बिगूचा।
हउ बिनु गांठे जाइ पहूचा ।2।
रविदासु जपै राम नामा।
मोहि जम सिउ नाही कामा ।3।

22. हम सरि दीनु दइआलु न तुम सरि अब पतीआरु किआ कीजै
हम सरि दीनु दइआलु न तुम सरि अब पतीआरु किआ कीजै।
बचनी तोर मोर मनु मानै जन कउ पूरनु दीजै ।1।

हउ बलि बलि जाउ रमईआ कारने।
कारन कवन अबोल। रहाउ।
बहुत जनम बिछुरे थे माधउ इहु जनमु तुम्हारे लेखे।
कहि रविदास आस लगि जीवउ चिर भइओ दरसनु देखे।2।
23. चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो स्रवन बानी सुजसु पूरि राखउ
चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो स्रवन बानी सुजसु पूरि राखउ।
मनु सु मधुकरु करउ चरन हिरदे धरउ रसन अमृत राम नाम भाखउ ।1।
मेरी प्रीति गोबिंद सिउ जिनि घटै।
मै तउ मोलि महगी लई जीअ सटै ।1। रहाउ।
साधसंगति बिना भाउ नहीं ऊपजै भाव बिनु भगति नहीं होइ तेरी।
कहै रविदासु इक बेनती हरि सिउ पैज राखहु राजा राम मेरी ।2।
24. नाथ कछूअ न जानउ
नाथ कछूअ न जानउ।
मनु माइआ कै हाथि बिकानउ ।1। रहाउ।
तुम कहीअत हौ जगत गुर सुआमी।
हम कहीअत कलिजुग के कामी ।1।
इन पंचन मेरो मनु जु बिगारिओ।
पलु पलु हरि जी ते अंतः पारिओ ।2।
जत देखउ तत दुख की रासी।
अजौं न पत्याइ निगम भए साखी ।3।
गोतम नारि उमापति स्वामी।
सीसु धरनि सहस भग गांमी ।4।
इन दूतन खलु बधु करि मारिओ।
बडो निलाजु अजहू नहीं हारिओ ।5।
कहि रविदास कहा कैसे कीजै।
बिनु रघुनाथ सरनि का की लीजै।6।
25. सह की सार सुहागनि जानै
सह की सार सुहागनि जानै।
तजि अभिमानु सुख रलीआ मानै।
तनु मनु देइ न अंतः राखै।

अवरा देखि न सुनै अभाखै ।1।
सो कत जानै पीर पराई।
जा कै अंतरि दरदु न पाई ।1। रहाउ।
दुखी दुहागनि दुइ पख हीनी।
जिनि नाह निरंतरि भगति न कीनी।
पुर सलात का पंथु दुहेला।
संगि न साथी गवनु इकेला ।2।
दुखीआ दरदवंदु दरि आइआ।
बहुतु पिआस जबाबु न पाइआ।
कहि रविदास सरनि प्रभ तेरी।
जिउ जानहु तिउ करु गति मेरी।3।
26. जो दिन आवहि सो दिन जाही
जो दिन आवहि सो दिन जाही।
करना कूचु रहनु थिरु नाही।
संगु चलत है हम भी चलना।
दूरि गवनु सिर ऊपरि मरना ।1।
किआ तू सोइआ जागु इआना।
तै जीवनु जगि सचु करि जाना ।1। रहाउ।
जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अम्मबरावै।
सभ।ाट भीतरि हाटु चलावै।
करि बंदिगी छाडि मैं मेरा।
हिरदै नामु सम्हारि सवेरा ।2।
जनमु सिरानो पंथु न सवारा।
सांझ परी दह दिस अंधिआरा।
कहि रविदास निदानि दिवाने।
चेतसि नाही दुनीआ फन खाने।3।
27. ऊचे मंदर साल रसोई
ऊँचे मंदर साल रसोई।
एक घरी फुनि रहनु न होई ।1।
इहु तनु ऐसा जैसे घास की टाटी।

जलि गइओ घासु रलि गइओ माटी ।1। रहाउ।
भाई बंध कुट्मब सहेरा।
ओइ भी लागे काढु सवेरा ।2।
घर की नारि उरहि तन लागी।
उह तउ भूतु भूतु करि भागी ।3।
कहि रविदास सभै जगु लूटिआ।
हम तउ एक रामु कहि छूटिआ।4।

28. दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी

दारिदु देखि सभ को हसै ऐसी दसा हमारी।
असट दसा सिधि कर तलै सभ क्रिपा तुमारी ।1।
तू जानत मैं किछु नहीं भव खंडन राम।
सगल जीअ सरनागती प्रभ पूरन काम ।1। रहाउ।
जो तेरी सरनागता तिन नाही भारु।
ऊच नीच तुम ते तरे आलजु संसारु ।2।
कहि रविदास अकथ कथा बहु काइ करीजै।
जैसा तू तैसा तुही किआ उपमा दीजै।3।

29. जिह कुल साधु बैसनौ होइ

जिह कुल साधु बैसनौ होइ।
बरन अबरन रंकु नहीं ईसुरु बिमल बासु जानीऐ जगि सोइ ।1। रहाउ।
ब्रह्मन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ।
होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि तारे कुल दोइ ।1।
धंनि सु गाउ धंनि सो ठाउ धंनि पुनीत कुट्मब सभ लोइ।
जिनि पीआ सार रसु तजे आन रस होइ रस मगन डारे बिखु खोइ ।2।
पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबरि अउरु न कोइ।
जैसे पुरैन पात रहै जल समीप भनि रविदास जनमे जगि ओइ।3।

30. मुकंद मुकंद जपहु संसार

मुकंद मुकंद जपहु संसार।
बिनु मुकंद तनु होइ अउहार।
सोई मुकंदु मुकति का दाता।
सोई मुकंदु हमरा पित माता ।1।
जीवत मुकंदे मरत मुकंदे।

ता के सेवक कउ सदा अनंदे ।1। रहाउ।
मुकंद मुकंद हमारे प्रानं।
जपि मुकंद मसतकि नीसानं।
सेव मुकंद करै बैरागी।
सोई मुकंदु दुर्बल धनु लाधी ।2।
एकु मुकंदु करै उपकारु।
हमरा कहा करै संसारु।
मेटी जाति हूए दरबारि।
तुही मुकंद जोग जुग तारि ।3।
उपजिओ गिआनु हूआ परगास।
करि किरपा लीने कीट दास।
कहु रविदास अब त्रिसना चूकी।
जपि मुकंद सेवा ताहू की।4।

31. जे ओहु अठसठि तीर्थ न्हावै

जे ओहु अठसठि तीर्थ न्हावै।
जे ओहु दुआदस सिला पूजावै।
जे ओहु कूप तटा देवावै।
करै निंद सभ बिरथा जावै ।1।
साध का निंदकु कैसे तरै।
सरपर जानहु नरक ही परै ।1। रहाउ।
जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति।
अरपै नारि सीगार समेति।
सगली सिम्रिति स्रवनी सुनै।
करै निंद कवनै नहीं गुनै ।2।
जे ओहु अनिक प्रसाद करावै।
भूमि दान सोभा मंडपि पावै।
अपना बिगारि बिरांना सांढै।
करै निंद बहु जोनी हांढै ।3।
निंदा कहा करहु संसारा।
निंदक का परगटि पाहारा।

निंदकु सोधि साधि बीचारिआ।
कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ। 4।
32. पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै
पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै।
लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे जउ पारसहि न परसै ।1।
देव संसै गांठि न छूटै।
काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पंचहु मिलि लूटे ।1। रहाउ।
हम बड कबि कुलीन हम पंडित हम जोगी संनिआसी।
गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ।2।
कहु रविदास सभै नहीं समझसि भूलि परे जैसे बउरे।
मोहि अधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे।3।
33. ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै
ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै।
गरीब निवाजु गुसईआ मेरा माथै छत्रु धरै ।1। रहाउ।
जा की छोति जगत कउ लागै ता पर तुहीं ढरै।
नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु काहू ते न डरै ।1।
नामदेव कबीरु तिलोचनु सधना सैनु तरै।
कहि रविदासु सुनहु रे संतहु हरि जीउ ते सभै सरै।2।
34. सुख सागर सुरितरु चिंतामनि कामधेन बसि जा के रे
सुख सागर सुरितरु चिंतामनि कामधेन बसि जा के रे।
चारि पदार्थ असट महा सिधि नव निधि कर तल ता कै ।1।
हरि हरि हरि न जपसि रसना।
अवर सभ छाडि बचन रचना ।1। रहाउ।
नाना खिआन पुरान बेद बिधि चउतीस अछर माही।
बिआस बीचारि कहिओ परमारथु राम नाम सरि नाही ।2।
सहज समाधि उपाधि रहत होइ बडे भागि लिव लागी।
कहि रविदास उदास दास मति जनम मरन भै भागी ।3।
35. खटु करम कुल संजुगतु है हरि भगति हिरदै नाहि
खटु करम कुल संजुगतु है हरि भगति हिरदै नाहि।
चरनारबिंद न कथा भावै सुपच तुलि समानि ।1।

रे चित चेति चेत अचेत काहे न बालमीकहि देख।
किसु जाति ते किह पदहि अमरिओ राम भगति बिसेख ।1। रहाउ।
सुआन सत्रु अजातु सभ ते क्रिस्न लावै हेतु।
लोगु बपुरा किआ सराहै तीनि लोक प्रवेस ।2।
अजामलु पिंगुला लुभतु कुंचरु गए हरि कै पासि।
ऐसे दुरमति निसतरे तू किउ न तरहि रविदास।3।

36. बिनु देखे उपजै नहीं आसा

बिनु देखे उपजै नहीं आसा।
जो दीसै सो होइ बिनासा।
बरन सहित जो जापै नामु।
सो जोगी केवल निहकामु ।1।
परचौ रामु रवै जउ कोई।
पारसु परसै दुबिधा न होई ।1। रहाउ।
सो मुनि मन की दुबिधा खाइ।
बिनु दुआरे त्रै लोक समाइ।
मन का सुभाउ सभु कोई करै।
करता होइ सु अनभै रहै ।2।
फल कारन फूली बनराइ।
फलु लागा तब फूलु बिलाइ।
गिआनै कारन करम अभिआसु।
गिआनु भइआ तह करमह नासु ।3।
घ्रित कारन दधि मथै सइआन।
जीवत मुकत सदा निरबान।
कहि रविदास परम बैराग।
रिदै रामु की न जपसि अभाग।4।

37. तुझहि सुझंता कछू नाहि

तुझहि सुझंता कछू नाहि।
पहिरावा देखे ऊभि जाहि।
गरबवती का नाही ठाउ।
तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ ।1।
तू कांइ गरबहि बावली।

जैसे भादउ खूमबराजु तू तिस ते खरी उतावली ।1। रहाउ।
जैसे कुरंक नहीं पाइओ भेदु।
तनि सुगंध ढूढै प्रदेसु।
अप तन का जो करे बीचारु।
तिसु नहीं जमकंकरु करे खुआरु ।2।
पुत्र कलत्र का करहि अहंकारु।
ठाकुरु लेखा मगनहारु।
फेड़े का दुखु सहै जीउ।
पाछे किसहि पुकारहि पीउ पीउ ।3।
साधू की जउ लेहि ओट।
तेरे मिटहि पाप सभ कोटि कोटि।
कहि रविदास जु जपै नामु।
तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु।4।

38. नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चमारं
नागर जनां मेरी जाति बिखिआत चमारं।
रिदै राम गोबिंद गुन सारं ।1। रहाउ।
सुरसरी सलल क्रित बारुनी रे संत जन करत नहीं पानं।
सुरा अपवित्र नत अवर जल रे सुरसरी मिलत नहि होइ आनं ।1।
तर तारि अपवित्र करि मानीऐ रे जैसे कागरा करत बीचारं।
भगति भागउतु लिखीऐ तिह ऊपरे पूजीऐ करि नमसकारं ।2।
मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पासा।
अब बिप्र प्रधान तिहि करहि डंडउति तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा।3।

39. हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति तास सम तुलि नहीं आन कोऊ

हरि जपत तेऊ जना पदम कवलास पति तास सम तुलि नहीं आन कोऊ।
एक ही एक अनेक होइ बिसथरिओ आन रे आन भरपूरि सोऊ। रहाउ।
जा कै भागवतु लेखीऐ अवरु नहीं पेखीऐ तास की जाति आछोप छीपा।
बिआस महि लेखीऐ सनक महि पेखीऐ नाम की नामना सपत दीपा ।1।
जा कै ईदि बकरीदि कुल गऊ रे बधु करहि मानीअहि सेख सहीद पीरा।
जा कै बाप वैसी करी पूत ऐसी सरी तिहू रे लोक परसिध कबीरा ।2।

जा के कुट्मब के ढेढ सभ ढोर ढोवंत फिरहि अजहु बंनारसी आस पासा।
आचार सहित बिप्र करहि डंडउति तिन तनै रविदास दासान दासा।3।

40. मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते

मिलत पिआरो प्रान नाथु कवन भगति ते।
साधसंगति पाई परम गते। रहाउ।
मैले कपरे कहा लउ धोवउ।
आवैगी नीद कहा लगु सोवउ ।1।
जोई जोई जोरिओ सोई सोई फाटिओ।
झूठै बनजि उठि ही गई हाटिओ ।2।
कहु रविदास भइओ जब लेखो।
जोई जोई कीनो सोई सोई देखिओ।

9

रैदास की रचनाएँ

इहि तनु ऐसा जैसे घास की टाटी।
जलि गइओ घासु रलि गइओ माटी।। टेक।।
ऊँचे मंदर साल रसोई। एक घरी फुनी रहनु न होई।। 1।।
भाई बंध कुटंब सहेरा। ओइ भी लागे काढु सवेरा।। 2।।
घर की नारि उरहि तन लागी। उह तउ भूतु करि भागी।। 3।।
कहि रविदास सभै जग लूटिआ। हम तउ एक राम कहि छूटिआ।। 4।।
भेष लियो पै भेद न जान्यो –
भेष लियो पै भेद न जान्यो।
अमृत लेई विषै सो मान्यो।। टेक।।
काम क्रोध में जनम गँवायो, साधु सँगति मिलि राम न गायो।। 1।।
तिलक दियो पै तपनि न जाई, माला पहिरे घनेरी लाई।। 2।।
कह रैदास परम जो पाऊँ, देव निरंजन सत कर ध्याऊँ।। 3।
माधवे का कहिये भ्रम ऐसा –
माधवे का कहिये भ्रम ऐसा।
तुम कहियत होह न जैसा।। टेक।।
त्रिपति एक सेज सुख सूता, सुपिनैं भया भिखारी।
अछित राज बहुत दुःख पायौ, सा गति भई हमारी।। 1।।
जब हम हुते तबैं तुम्ह नांहीं, अब तुम्ह हौ मैं नांहीं।

सलिता गवन कीयौ लहरि महोदधि, जल केवल जल मांही।। 2।।
रजु भुजंग रजनी प्रकासा, अस कछु मरम जनावा।
संमझि परी मोहि कनक अल्यंक्रत ज्यूं, अब कछू कहत न आवा।। 3।।
करता एक भाव जगि भुगता, सब घट सब बिधि सोई।
कहै रैदास भगति एक उपजी, सहजैं होइ स होई।। 4।।

अखि लखि लै नहीं –रैदास

अखि लखि लै नहीं का कहि पंडित, कोई न कहै समझाई।
अबरन बरन रूप नहीं जाके, सु कहाँ ल्यौ लाइ समाई।। टेक।।
चंद सूर नहीं राति दिवस नहीं, धरनि अकास न भाई।
करम अकरम नहीं सुभ असुभ नहीं, का कहि देहु बड़ाई।। 1।।
सीत बाइ उश्न नहीं सरवत, कांम कुटिल नहीं होई।
जोग न भोग रोग नहीं जाकै, कहौ नांव सति सोई।। 2।।
निरंजन निराकार निरलेपहि, निरबिकार निरासी।
काम कुटिल ताही कहि गावत, हर हर आवै हासी।। 3।।
गगन धूर धूसर नहीं जाकै, पवन पूर नहीं पांनी।
गुन बिगुन कहियत नहीं जाकै, कहौ तुम्ह बात सयांनीं।। 4।।
याही सूँ तुम्ह जोग कहते हौ, जब लग आस की पासी।
छूटै तब हीं जब मिलै एक ही, भणै रैदास उदासी।। 5।।

भाई रे रांम कहाँ हैं मोहि बतावो –

भाई रे रांम कहाँ हैं मोहि बतावो।
सति रांम ताकै निकटि न आवो।। टेक।।
राम कहत जगत् भुलाना, सो यहु रांम न होई।
करंम अकरंम करुणांमै केसौ, करता नांउं सु कोई।। 1।।
जा रामहि सब जग जानैं, भ्रमि भूले रे भाई।
आप आप थैं कोई न जांणै, कहै कौंन सू जाई।। 2।।
सति तन लोभ परसि जीय तन मन, गुण परस नहीं जाई।
अखिल नांउं जाकौ ठौर न कतहूँ, क्यूं न कहै समझाई।। 3।।
भयौ रैदास उदास ताही थैं, करता को है भाई।
केवल करता एक सही करि, सति रांम तिहि ठांई।। 4।।

अहो देव तेरी अमित महिमां, महादैवी माया –

अहो देव तेरी अमित महिमां, महादैवी माया।
मनुज दनुज बन दहन, कलि विष कलि किरत सबै समय समंन।।

निरबांन पद भुवन, नांम बिघनोघ पवन पात।। टेक।।
गरग उत्तम बांमदेव, विस्वामित्र ब्यास जमदंग्नि श्रिंगी ऋषि दुर्बासा।
मारकंडेय बालमीक भ्रिगु अंगिरा, कपिल बगदालिम सुकमातंम न्यासा।। 1।।
अत्रिय अष्टाब्रक गुर गंजानन, अगस्ति पुलस्ति पारासुर सिव विधाता।
रिष जड़ भरथ सऊ भरिष, चिवनि बसिष्टि जिह्ववनि ज्यागबलिक तव ध्यांनि राता।। 2।।
ध्रू अंबरीक प्रहलाद नारद, बिदुर द्रोवणि अक्रूर पांडव सुदांमां।
भीषम उधव बभीषन चंद्रहास, बलि कलि भक्ति जुक्ति जयदेव नांमां।। 3।।
गरुड़ हनूंमांनु मांन जनकात्मजा, जय बिजय द्रोपदी गिरि सुता श्री प्रचेता।
रुकमांगद अंगद बसदेव देवकी, अवर अमिनत भक्त कहूँ केता।। 4।।
हे देव सेष सनकादि श्रुति भागवत, भारती स्तवत अनिवरत गुणर्दुबगेवं।
अकल अबिछन ब्यापक ब्रह्ममेक रस सुध चौतंनि पूरन मनेवं।। 5।।
सरगुण निरगुण निरामय निरबिकार, हरि अज निरंजन बिमल अप्रमेवं।
प्रमात्मां प्रक्रिति पर प्रमुचित, सचिदांनंद गुर ग्यांन मेवं।। 6।।
हे देव पवन पावक अवनि, जलधि जलधर तरंनि।
काल जाम मिृति ग्रह ब्याध्य बाधा, गज भुजंग भुवपाल।
ससि सक्र दिगपाल, आग्या अनुगत न मुचत मृजादा।। 7।।
अभय बर ब्रिद प्रतंग्या सति संकल्प, हरि दुष्ट तारंन चरंन सरंन तैरैं।
दास रैदास यह काल ब्याकुल, त्रहि त्रहि अवर अवलंबन नहीं मेरैं।। 8।।

प्रभु जी तुम संगति सरन तिहारी –
प्रभु जी तुम संगति सरन तिहारी। जग–जीवन राम मुरारी।
गली–गली को जल बहि आयो, सुरसरि जाय समायो।
संगति के परताप महातम, नाम गंगोदक पायो।
स्वाति बूँद बरसे फनि ऊपर, सोई विष होइ जाई।
ओही बूँद कै मोती निपजै, संगति की अधिकाई।
तुम चंदन हम रेंड बापुरे, निकट तुम्हारे आसा।
संगति के परताप महातम, आवै बास सुबासा।।
जाति भी ओछी, करम भी ओछा, ओछा कसब हमारा।
नीचे से प्रभु ऊँच कियो है, कहि 'रैदास चमारा'

❑❑❑